# गोविन्ददास ग्रन्थावली

दो सामाजिक नाटक तथा समस्यात्मक
ग्यारह एकाकी

तीसरा खण्ड

गोविन्ददास

UNIVERSITY LIBRARY
14 AUG 1957
ALLAHABAD
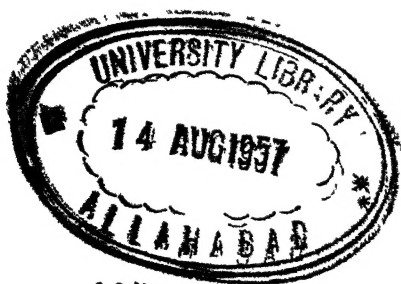
१९५८
प्रकाशक
भारतीय विश्व-प्रकाशन
फव्वारा—दिल्ली

# निवेदन

'विश्व-प्रेम' मेरा पहला नाटक है। यह सन् १९१९ के फरवरी मास में लिखा गया था और जबलपुर के शारदा भवन पुस्तकालय के वार्षिकोत्सव के समय मई मास में यह जबलपुर के 'मित्रमण्डल' नामक एक एमेच्योर नाटक समाज के द्वारा खेला भी गया था। इस मित्रमण्डल सस्था में उस समय जबलपुर के प्रायः सभी साहित्यिक सम्मिलित थे; अतः इस नाटक मे भी जबलपुर के अनेक साहित्यिकों ने पार्ट लिया था, इनमें पंडित कामताप्रसाद जी गुरु प्रमुख थे। उस समय इसका नाम 'मोहन' था और यह कुछ ऐसी सफलता के साथ खेला गया कि अनेक मित्रों ने उसी समय इसे प्रकाशित करने का आग्रह किया; पर उस समय यह प्रकाशित न हो सका। फिर मेरा राजनैतिक जीवन आरम्भ हो गया और सन् १९२० से १९२२ तक असहयोग के काल में साहित्य-सेवा की ओर दृष्टिपात करने तक का अवकाश न मिला। १९२३ में जब राजनैतिक कार्य कुछ समय को धीमा पड़ा उस समय एक दूसरे ही नाटक 'विश्वासघात' लिखने मे लग गया और यह बस्ते ही मे बंधा पड़ा रहा। १९२३ से ही कौंसिल का राजनैतिक जीवन आरम्भ हुआ और वह लाहौर कांग्रेस तक चलता रहा। फिर सत्याग्रह-संग्राम छिड़ गया और जेल मे ही अवकाश मिला। मैं इस नाटक की हस्तलिखित प्रति को जेल में ले गया था। जबलपुर जेल से ता० २०-५ई को बुलढाना

जेल मे तबादला होने के पश्चात् मेरे एक काव्य के साथ-ही-साथ मई और जून मास मे वही पर यह परिष्कृत हुआ ।

यह सामाजिक नाटक है और इसका कथानक सर्वथा काल्पनिक है । इसके विषय का पता नाम से लग जाता है, अतएव उस सम्बन्ध मे मै अधिक लिखना आवश्यक समझता हूँ ।

—गोविन्ददास

## नाटक के मुख्य पात्र, स्थान

**पुरुष—**

**शूरसेन** : नेहनगर का जमीदार

**मोहन** : शूरसेन के यहाँ पला हुआ एक युवक

**बलदेव** : मोहन का मित्र

**भोलानाथ** : शूरसेन का कर्मचारी

**रूपसेन** : अयोध्या का मंत्री

**चन्द्रसेन** : बिलासपुर का जमीदार

**यशवन्त**
**दुर्जनसिंह** } : चन्द्रसेन के कर्मचारी

**स्त्री—**

**कालिन्दी** : शूरसेन की पुत्री

**इन्दुमती** : कालिन्दी की माता

**कौमुदी** : शूरसेन की भतीजी

**उमा** : भोलानाथ की स्त्री, कालिन्दी की सखी

**रूपवती** : रूपसेन की पुत्री

**रेवती** : रूपवती की सखी

**प्रमोदिनी** : एक सन्यासिनी

कुमारिकाश्रम की अध्यापिकाएँ, बालिकाएँ, मुसाहब, चपरासी आदि ।

**स्थान—**अयोध्या, नेहनगर, बिलासपुर

# पहला अंक

# दो शब्द

ग्रन्थावली के इस तीसरे खण्ड मे सेठ जी के दो सम्पूर्ण नाटक तथा एक समस्यात्मक एकांकियों का सग्रह है। **'विश्व-प्रेम'** सेठजी का सर्वप्रथम सामाजिक नाटक है। यह सन् १९१७ में लिखा गया था। इस नाटक में प्रेम तथा लालसा एवं व्यक्ति-प्रेम तथा विश्व-प्रेम का अन्तर प्रतिपादित हुआ है। **'सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य'** राजनीतिक विचारों से पूर्ण सामाजिक नाटक है। इस कारण अग्रेजो के समय मे इसे आपत्तिजनक मानकर इसके प्रकाशक से जमानत भी माँगी गयी थी। इस खण्ड की अन्य कृतियाँ भी भावपूर्ण और प्रभावयुक्त है।

—**प्रकाशक**

# सूची

# विश्व-प्रेम

## पहला दृश्य

स्थान  शूरसेन के उद्यान का एक भाग

समय . सन्ध्या

[उद्यान ग्रामीण ढंग का किन्तु सुन्दर बना हुआ है। बीच मे एक कुण्ड है। कुण्ड के पानी मे कमल है। कुण्ड के चारों ओर फूलों की क्यारियाँ है, जिनमे गुलाब, बेला, जुही लगी है। बायीं ओर दूर पर आम के वृक्ष दिखायी देते है। दाहिनी ओर एक लोहे का बगला बना है, जो चमेली की लता से छाया हुआ है। इसी बंगले मे एक बेंच पर कालिन्दी बैठी हुई है। पास ही में उमा बैठी है। कालिन्दी लगभग १८ वर्ष की कुछ साँवले रंग की साधारणतया सुन्दर दुबली और ठिगनी युवती है। नीबू रंग की साड़ी और धानी रंग की चोली पहने है। आभूषण हिन्दुस्तानी, पुराने ढंग के, सुवर्ण के है। उमा लगभग ३५ वर्ष की, गौर वर्ण की ऊँची और कुछ मोटी साधारणतया सुन्दर स्त्री है। धानी रंग की साड़ी और नारंगी रंग की चोली पहने है। आभूषण चाँदी के है। दोनों नगे पैर है।]

कालिन्दी गा रही है—

**(राग-पूर्वी)**

प्रेम क्या लीला करता है।
हृदय हर पल मे हरता है।
सुखमय है या दुख भरा, यही न पड़ता जान;
अल्प अश भी प्रेम का, पाता कही न स्थान,
तदपि कुछ अकुर धरता है।
प्रेम क्या लीला करता है।
आल्हादित करता नही, उपजाता अभिलाष,
मनोमूर्त्ति को मत्त कर, करता शीघ्र निराश,
अहो यह मद क्यो भरता है ?
प्रेम क्या लीला करता है।

**कालिन्दी :** सखि उमा, क्या मै उनसे प्रेम करती हूँ ? जान नहीं सकती। मै उन्हे कैसा समझती हूँ ? समझ नही सकती। जो कुछ मै उनसे कहना चाहती हूँ, कह नही सकती। न जाने मन क्या चाहता है ?

**उमा :** **(घबराकर)** कालिन्दी, इस प्रकार तो निश्चय ही तुम्हे उन्माद हो जायगा।

**कालिन्दी :** मुझे तो उन्माद हो ही गया है। यद्यपि बाल्यावस्था से ही हम लोग साथ रहे है, पर ऐसी दशा पहले कभी न हुई थी। आजकल तो बस रात-दिन एक इच्छा रहती है, केवल एक।

**उमा :** वह कौनसी, सखि ?

**कालिन्दी :** उन्ही का दर्शन करूँ, उन्ही से बोलूं, उन्ही की सेवा का अवसर पाती रहूँ, किन्तु यह सब इच्छा मात्र ही है।

**उमा :** यह क्यो ?

**कालिन्दी :** इसलिए कि देखने की इच्छा होने पर जी भरकर देख नही सकती, बोलने की इच्छा रहने पर भी जी भर बोल नही सकती और सेवा की तो बात ही अलग है।

**उमा :** किन्तु इसमे दोष किसका ?

**कालिन्दी :** उन आँखो का जो देखते ही झुक जाती है; उस वाणी का जो उनका सामना होते ही रुक जाती है, उस मन का जो सेवा करने के लिए अग्रसर नही होने देता।

**उमा :** और ये सब अवयव तुम्हारे ही है न ?

**कालिन्दी :** पर मेरे अधिकार मे नही है, मै करूँ तो क्या करूँ ?

**उमा :** दृढ होकर अपनी वस्तुओं पर अपना अधिकार करो। **(कुछ ठहरकर)** अच्छा सुनो, आज तुम्हे एक नयी बात सुनाने आयी हूँ। साहस नही होता था कि कहूँ, पर

**कालिन्दी :** **(चौंककर)** कुछ उनके सम्बन्ध मे तो नही ?

**उमा :** हाँ, उन्ही के सम्बन्ध मे है।

**कालिन्दी :** **(घबराकर)** कैसी···कैसी बात, सखि ?

**उमा :** आज ही मैने सुना है कि ठाकुर साहब उन्हे यहाँ

से कही भेज देना चाहते है।

**कालिन्दी :** **(मस्तक पकड़कर और फिर कुछ सम्हलकर)** सो क्यो ?

**उमा :** अब तुम विवाह योग्य हुई।

**कालिन्दी :** **(चौंककर)** विवाह योग्य हुई ! इसका क्या अर्थ ?

**उमा :** यही कि तुम सयानी हुई, किसी धनी घर की गृह-लक्ष्मी बनने योग्य हो गयी।

**कालिन्दी :** विवाह किसको कहते है, उमा !

**उमा :** **(आश्चर्य से)** तुम अभी यह भी नही जानती ?

**कालिन्दी :** **(लम्बी साँस लेकर)** हम कन्याएँ, विवाह का अर्थ क्या जाने ? हमारे लिए तो विवाह है माता-पिता या कुटुम्बी जनो की इच्छा। वे जिसे हमारी बाँह पकडा दे, वही हमारा वर है। मैंने तो विवाह का यही अर्थ सुना है और अब यही समझ भी रही हूँ। **(कुछ ठहरकर)** सखि उमा, आज तुमने मेरे हृदय की उलझन को सहसा सुलझा दिया।

**उमा :** कैसे ?

**कालिन्दी :** अभी मैंने अपने हृदय से कई प्रश्न किये थे, किन्तु एक का भी उत्तर नही मिल रहा था। पर, अब तुम्हारी एक ही बात से मेरे सब प्रश्नो के उत्तर मिलने लगे।

**उमा :** **(चकित-सी होकर)** सखि, मै तुम्हारी इस बात का अर्थ नही समझ सकी।

**कालिन्दी :** न सही । कुछ समय पश्चात् समझोगी । अभी आवश्यकता भी नहीं है, अभी तो अँधेरा हुआ, भीतर चलो ।

**[कालिन्दी का शीघ्रता से प्रस्थान । उमा भी उसी ओर कुछ सोचते हुए जाती है ।]**

**परदा गिरता है ।**

## दूसरा दृश्य

स्थान शूरसेन के मकान मे मोहन का कमरा

समय सन्ध्या

[कमरा देहात के जमीदारों के बड़े-बड़े मकानों के सदृश रंगा हुआ है। मोहन और बलदेव का प्रवेश। मोहन लगभग बाईस वर्ष का गोरा, ऊँचा, भरे हुए मुख और शरीर का अत्यन्त सुन्दर युवक है। ढीली बाँह का कुरता और धोती पहने, नंगे सिर है। बाल बड़े-बड़े हैं। छोटी-छोटी मूंछे है। बलदेव लगभग बीस वर्ष का गेहुँए रंग का कुछ मोटा और ठिगना साधारणतया सुन्दर युवक है। कपड़े मोहन के सदृश है, पर सिर पर दोपलिया टोपी है। टोपी के चारों ओर बड़े-बड़े बाल लहरा रहे है। रेख निकल रही है।]

**मोहन :** बाल्यावस्था का पूरा ध्यान तो नही है, बलदेव, फिर भी, उस समय ऐसी दशा न थी। ससार के प्रत्येक पदार्थ मे एक प्रकार का सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता था। हर वस्तु मे स्वाभाविक प्रेम का अनुभव होता था। मुझे ही क्यो, तुम्हारी और कालिन्दी की भी तो यही दशा थी। तुम्ही कहो, वह कैसा महान् सुख था।

**बल्देव** : बाल्यावस्था बाल्यावस्था ही है, मोहन, वह सुख फिर जीवन मे प्राप्त नही होता ।

**मोहन** : परन्तु, मित्र, कालिन्दी को तो इस अवस्था मे भी कदाचित् वही सुख प्राप्त है । तभी तो देखो, उसे मेरे इस प्रेम का ध्यान ही नही । हाँ, मेरी दशा सर्वथा भिन्न हो गयी है ।

**बलदेव** : कैसी ?

**मोहन** : मुझे सर्वत्र कालिन्दी ही कालिन्दी दृष्टिगोचर होने लगी है । सूर्य और चन्द्र की किरणो की चमक, तारो के झिलमिलाते हुए प्रकाश, विद्युत् की द्युति, बादलो के बदलते हुए रगों, इन्द्र-धनुष के विविध वर्णो, चलती हुई वायु के मधुर अलाप, शान्ति से बहती हुई सरिताओ, झर-झर करते हुए झरनों, पानी से भरे हुए सरोवरो के गुलाबी और श्वेत कमलो, पक्षियो के गान और भ्रमरो की गुजाहट, पुष्पो की क्यारियो और लहलहाती हुई लताओं, इतना ही क्यो, सारे विश्व मे कालिन्दी ही कालिन्दी दिखती है । किसी मे उसका वर्ण, किसी मे उसकी प्रभा, किसी मे उसका शब्द, प्रत्येक पदार्थ मे उसकी किसी-न-किसी समानता का अनुभव होता है। किन्तु उसकी तो यह दशा नही है ।

**बलदेव** : मुझे विश्वास है कि उसकी भी ठीक यही दशा होगी, प्रेम से प्रेम की उत्पत्ति होती ही है ।

**मोहन :** हाँ, सुना और पढा तो मैने भी यही है। पर अभी इसकी सत्यता का अनुभव नही हुआ। **(कुछ ठहर-कर)** कह नही सकता, मित्र, कि मुझे जो इस प्रकार सर्वत्र कालिन्दी ही कालिन्दी दृष्टिगोचर होने लगी है सो यह इन बाहरी वस्तुओ का आघात मेरे हृदय मे कालिन्दी की मूर्त्ति को चित्रित कर देता है अथवा मेरे हृदय पर, अब पूर्ण रूप से कालिन्दी का जो चित्र अकित हो गया है, वही ससार की सब वस्तुओ पर मै आरोपित करता हूँ ? ससार की ये वस्तुएँ मुझे कालिन्दी का स्मरण दिलाती है अथवा कालिन्दी का स्मरण और चिन्तन ससार को कालिन्दीमय कर देता है ? जो कुछ हो, कालिन्दी को इसकी तनिक भी चिन्ता नही।

**बलदेव :** मै मनोविज्ञान का ज्ञाता तो नही हूँ, परन्तु इतना जानता हूँ कि आघात का प्रतिघात हुए बिना नही रहता।

**मोहन :** तुमने नही सुना क्या ? शूरसेन जी मुझे यहाँ से कही भेज देना चाहते है।

**बलदेव :** मैने तो तुम से कालिन्दी के हृदय की बात कही। शूरसेन के हृदय से तुम कालिन्दी के हृदय की परख क्यों करना चाहते हो ?

**मोहन :** जो कुछ हो; मै नही चाहता कि कालिन्दी का जीवन मेरे कारण दु खमय हो। वह श्रीमान् की

पुत्री है, उसके योग्य कोई श्रीमान् ही हो सकता है, मै नही। मै एक साधारण मनुष्य, उसके पिता के यहाँ का अन्न पाकर पला हुआ मनुष्य, मै किस प्रकार उसे प्राप्त करने का दुस्साहस कर सकता हूँ, बस, अब एक बार जाकर उसके पुनीत दर्शन और कर लेता हूँ, कदाचित् यह अन्तिम बार होगा।

**[मोहन का जल्दी से प्रस्थान। उसके पीछे धीरे-धीरे बलदेव भी जाता है।]**

**परदा उठता है।**

## तीसरा दृश्य

स्थान    शूरसेन का उद्यान

समय    सन्ध्या

[**कालिन्दी और उमा बैठी है ।**]

**कालिन्दी :** हूँ, क्या सुनती हूँ—मै विवाह योग्य हुई, इस कारण वे यहाँ से हटाये जायँगे ? सो क्यों, विवाह योग्य हुई मै, और हटाये जायँगे वे । बीमारी आयी मुझे और कडवी औषधि दी जायगी उन्हे । अपराध हुआ मुझ से और दण्ड मिलेगा उन्हे । विकास हुआ मेरा और निर्वासन होगा उनका ! क्या यही ससार का न्याय है ? (**मोहन प्रवेश करता है, किन्तु दोनों को सूचित किये बिना ही एक ओर खड़ा हुआ आश्चर्य से उसकी बाते सुनता रहता है । वे दोनों उसे नहीं देखती, कालिन्दी कहती जाती है ।**) ओह ! कैसा भयानक समाचार है, किन्तु इस भयानकता मे भी बहुत बड़ा महत्त्व है ।

**उमा :** भयानकता मे भी महत्त्व ? इसका क्या अर्थ, कालिन्दी ?

**कालिन्दी :** इसी भयानकता ने मेरे हृदय के चक्षु खोल दिये। मेरी हृदय की कायरता को, झूठी लज्जा को, नष्ट कर दिया। इतना ही नही। आवश्यकता ने मुझे सामना करने का बल तक दे दिया। उनके सन्मुख देखने और बोलने मे जो एक प्रकार की अनजान भयानकता जान पडती थी, वह उनके वियोग से उत्पन्न होने वाली भावी भयानकता मे विलीन हो गयी। सखि, अब मुझे ज्ञात हो गया कि वे मोहन मेरे कौन है।

**उमा :** कौन है, सखि ?

**कालिन्दी :** मेरे सर्वस्व। विवाह अग्नि के चारो ओर परिक्रमा है या दो हृदयो का सम्मिलन ? जिस विवाह पर धर्म के नाम पर समाज की मोहर नही लगी, उसे मैं विवाह न मानूँ, यह मेरे लिए सम्भव नही। मै तो सच्चे हृदय की मोहर चाहती हूँ। सखि, समाज का नियन्त्रण तो ईश्वर के नियन्त्रण से भी आगे जाना चाहता है। सामाजिक नियन्त्रण की इस सीमा को स्वीकार करना कायरता है।

**उमा :** पर, सखि

**मोहन :** **(आगे बढ़कर)** कालिन्दी! यह क्या कह रही हो ? सम्हलो! हृदय सम्हालो! यह तो एक नवीन सिद्धान्त का प्रतिपादन है। इसका परिणाम गृह और समाज से सघर्ष—महासघर्ष—है।

**[उमा धीरे से चली जाती है। कालिन्दी खड़े होकर लज्जा से सिर झुका लेती है।]**

**मोहन :** क्यो, कालिन्दी, चुप क्यो हो गयी ? अभी तो बडी वीरता से बोल रही थी ? मुझे देखते ही चुप्पी क्यो ? **(बैठ जाता है।)**

**कालिन्दी :** **(साहस से)** नही, अब चुप न रहूँगी। अब तो आप के सामने चुप रहना भी कायरता है। **(बैठते हुए)** आप कहते है मेरे मत का परिणाम सघर्ष है। बडी अच्छी बात है। इस समाज से युद्ध ही करूँगी।

**मोहन :** यह तो ठीक है, कालिन्दी, परन्तु सघर्ष-क्षेत्र को चुनने मे बुद्धिमत्ता की आवश्यकता होती है।

**कालिन्दी :** दासता को, और दासता मे भी ऐसी सामाजिक दासता को, जो मनुष्यता तक का गला घोट देने के लिए आगा-पीछा न करे, मिटाने से अच्छा और कौनसा सघर्ष-क्षेत्र मिल सकता है ? इस क्षेत्र मे तो कर्त्तव्य के साथ-साथ प्रेममय निजानन्द की प्राप्ति भी है, जिसके अभाव मे कर्त्तव्य का कोई मूल्य नही।

**मोहन :** कालिन्दी ! कालिन्दी ! यह तुम क्या कर रही हो, क्या सोच रही हो ?

**कालिन्दी :** वही जो, आज तक आप से सुना है, सीखा है, और समझा है।

**मोहन :** **(लम्बी साँस लेकर)** यदि यही बात है तो आज मे

तुम्हे एक दूसरी बात समझाता हूँ। अब तक मैने तुम्हे जिन सिद्धान्तो को समझाया था, आज उन सिद्धान्तो का व्यवहार समझाता हूँ।

**कालिन्दी** तो सिद्धान्तो और उनके व्यवहार मे अन्तर है ?

**मोहन :** सिद्धान्त व्यवहार के समय सदा सीमाबद्ध हो जाते है और आज तो सामाजिक स्थिति ऐसी नही है कि सारे सच्चे सिद्धान्तो को व्यवहार मे परिणत किया जा सके। यदि उन्हे व्यवहार मे परिणत किया जायगा तो ऐसा भयकर सघर्ष होगा कि व्यक्तिगत सुख के स्थान पर क्लेश और दुख ही हाथ लगेगे। मै नही चाहता कि तुम अपना सारा जीवन दुखमय व्यतीत करो। अत जिन बातो के व्यवहार से तुम्हारा जीवन सुखी होगा आज उन्हे समझाना चाहता हूँ। देखो, कालिन्दी ·

**कालिन्दी :** क्षमा कीजिए, इसके लिए तो अब बहुत विलम्ब हो चुका। आप चाहे सिद्धान्त और व्यवहार को अलग-अलग रख सके, पर मेरे लिए यह सम्भव नही। व्यवहार के बन्धनो को मेरे प्रेम की तीक्ष्ण धारा ने कभी का तोड दिया है।

**मोहन :** **(कुछ चकपकाकर)** नही, नही, मेरा यह अभिप्राय नही है कि सिद्धान्तों और उनके व्यवहार को सदा अलग रखा जाय, पर ·

**कालिन्दी :** पर का क्या अर्थ है ?

**मोहन :** **(लम्बी साँस लेकर)** पर का अर्थ, कालिन्दी ! पर का अर्थ सुनना ही चाहती हो ?

**कालिन्दी :** अवश्य ।

**मोहन :** तो फिर सुनो । कालिन्दी, मै तुम्हे दुखी नही देखना चाहता । बचपन से ही तुम्हे सदा सुखी देखने का प्रयत्न किया है । स्मरण नही है, जब हम लोग मिट्टी के घर बनाते थे, उस समय जब तुम्हारे घर अच्छे न बनते और तुम मेरे घरो की ओर कातर दृष्टि से देखने लगती तब मै तुम्हे उनसे खेलने को कहता और स्वय तुम्हे खेलते देखकर आनन्द पाता था ?

**कालिन्दी :** **(लम्बी साँस लेकर)** स्मरण है ।

**मोहन :** और भी स्मरण करो । मेलो मे जब हम मिट्टी के खिलौने लाते और जब तुम अपने खिलौने तोड डालती, तब मै तुम्हे अपने खिलौने दे देता और स्वय तुम्हारे खल ही मे आनन्द का अनुभव करता था ।

**कालिन्दी :** वह भी स्मरण है ।

**मोहन :** और भी तुम्हारे लिए फूल के गजरे गूँथ देता, गुल-दस्ते बना देता और न जाने इसी प्रकार क्या-क्या करता था । तुम्हे सन्तुष्ट, तुम्हे प्रसन्न, तुम्हे सुखी देखकर मुझे आनन्द हो जाता था ।

**कालिन्दी :** ठीक । और आज ?

**मोहन :** आज ? आज जब देखता हूँ कि तुम्हारा जीवन

दुखी होना चाहता है और वह मेरे कारण, तो मैं सारे सिद्धान्तो को और अपने को भी तुम्हारे सुख के लिए बलि कर सकता हूँ, कालिन्दी, मै तुम्हे दुखी नही देख सकता।

**कालिन्दी :** पर क्या, आप समझते है कि आपके स्थान पर किसी दूसरे से प्रेम करने और इसके लिए सामाजिक नियन्त्रण मे रहकर उसकी दासता करने से मुझे सुख मिल सकता है ? ऐसा है तो आपके सिद्धान्तों की चर्चा भ्रम है। आप कदाचित् नही जानते कि स्त्रियो का हृदय कैसा होता है।

**मोहन :** कैसा होता है, कालिन्दी ?

**कालिन्दी :** वह अत्यन्त कोमल है, लज्जाशील है, सकटो से दूर–बहुत दूर–रहना चाहता है, तथापि जब उनके प्रेम का प्रश्न उपस्थित होता है, उसमे बाधा आती है, तब **(चुप हो जाती है।)**

**मोहन :** तब, कालिन्दी ?

**कालिन्दी :** सुनेगे ही ?

**मोहन :** मेरे 'पर' का अर्थ तुमने सुन लिया। अपने 'तब' का अर्थ मुझे न सुनाओगी।

**कालिन्दी :** अच्छा सुनिए तब— तब वह वर्षा की नदी का स्वरूप धारण करता है। कोई बाधा, कोई वस्तु उसके मार्ग को नही रोक सकती। ऐसे ही अवसरों पर अबला स्त्रियाँ सबला हो जाती है, कोमल

स्त्रियाँ पाषाण-खण्ड के सदृश कठोर हो जाती हैं, लज्जा उड जाती है, बडी से बडी आपत्ति, आयुधो की तीक्ष्ण धारा, फाँसी की प्राण-हरण करने वाली रस्सी और चिता की अग्नि को भी वे हँसते-हँसते सह सकती है। ऐसे समय में पुरुषो के हृदय से स्त्रियो का हृदय कही अधिक बलवान हो जाता है। तब गृह-सघर्ष, समाज-सघर्ष, गृह-त्याग, समाज-त्याग कौन बड़ी बाधाएँ है ? आप क्या इन बातो को नही जानते ? या जानते हुए भी मेरे प्रेम-प्रवाह के बल की थाह लेना चाहते है ?

[**नेपथ्य में "कालिन्दी ! अँधेरा हो रहा है, घर आ" शब्द होता है।**]

**कालिन्दी : (चौककर नेपथ्य की ओर देख फिर मोहन की ओर देख खड़े होकर)** आयी, माँ। कहिए, कुछ तो कहिए। **(मोहन का उत्तर न पाकर)** अच्छा जाने दीजिए। आपके उत्तर का मै क्यो मार्ग देखूँ ? मुझे जो कुछ कहना है मै तो आज लज्जा छोड कह ही डालती हूँ। **(मोहन की ओर तृषित नेत्रों से देखकर धीरे-धीरे)** हृदयेश ! जो भाव बहुत दिनो से हृदय में छिपा हुआ था, जो सम्बोधन अब तक लज्जावश न हो सका था, वही भाव आज प्रकट होने तथा उसी सम्बोधन से आपको सम्बाधित करने से हृदय का भार हलका हुआ। बस, यही

विनय है कि मुझे सर्वथा अपनी ही समझना, भूल न जाना। पिता जी इस शरीर के सम्बन्ध को रोक सकते है, अन्त करण के सम्मिलन को नही। पिताजी आपको इस घर से हटा सकते है, पर आपकी जो मूर्ति इस हृदय-मन्दिर मे प्रतिष्ठित हो चुकी है उसे, यह पिता क्या, जगत्-पिता भी हटाने मे असमर्थ है।

**मोहन :** **(खड़े हो व्याकुलता से)** कालिन्दी, तुम जीती मै हारा। तुम सबल हो, तुम निर्भय हो, तुम प्रेम की प्रवाहिनी विशाल गगा हो। यह मोहन उस गगा का एक क्षुद्र यात्री मात्र है। ससार की कोई आपत्ति उसे अब अपने मार्ग से च्युत न कर सकेगी।

**[कालिन्दी तृषित दृष्टि से मोहन की ओर देखती हुई जाती है। मोहन भी धीरे-धीरे सिर नीचा किये और हाथों को मलता हुआ जाता है। एक आम के वृक्ष की आड़ से यशवन्त और दुर्जनसिह निकलते है। यशवन्त लगभग साठ वर्ष का लम्बा, गोरा और दुबला आदमी है। सफेद मूँछे और छोटी दाढ़ी है। अचकन और पाजामा पहने है, सिर पर दोपलिया टोपी। दुर्जनसिह लगभग तीस वर्ष का सॉवला कुछ मोटा और ठिगना आदमी है। काली मूँछे है। कुरता और धोती पहने है। बड़े-बड़े बाल है, और दोपालिया टेढ़ी टोपी लगी है। गले में बेले की दो मालाएँ है।]**

**दुर्जनसिह :** समझे, भाई यशवन्त, यहाँ भी ऐसी आग भड़काऊँगा

कि बस ह ! ह ! ह ! ह ! बस पर ही अटक गया, उपमा या उत्प्रेक्षा कुछ न सूझी। न जाने इन कवियो के मस्तिष्क मे कैसी पवनचक्की या पनचक्की या फ्लावर मिल चलती है, कि धड़ाधड़, नही, नही, एकदम सरपट–घुड़दौड के सदृश–ह, हः, ह, ह, उपमा या उत्प्रेक्षा या दोनो ही निकल पडती है। नही, नही, पिस-पिसकर निकलने लगती है। ऊँ हूँ, बहने लगती है। लो यह भी ठीक न हुआ तो ठीक स्मरण नही आता कि इस स्थान पर कौनसी क्रिया ठीक होगी ?

**यशवन्त :** पर आपने किसकी क्रिया करने की ठानी है, दुर्जन-सिह जी ?

**दुर्जनसिंह :** बीच मे क्यों बोलते हो जी ? इस समय कविता की बात हो रही है। हाँ, तो कविता करना कुछ हँसी थोडे ही है। किन्तु देखो, प्रयत्न करने से कितनी शीघ्र सफलता हुई। पवन चक्की, पनचक्की, फ्लावर मिल, घुड़दौड़, कितनी उपमाएँ, नही उत्प्रेक्षाएँ, ऊँ हूँ उपमाएँ, नही, नही उत्प्रेक्षाएँ · समझ नहीं पडता कि उपमाएँ कहूँ या उत्प्रेक्षाएँ ? जो कुछ हो, पर ये घास के पूलो के समान कितनी इकट्ठी हो गयी। बस इसी प्रकार प्रयत्न करके कवि बनूँगा।

**यशवन्त :** जब बनना तब बन जाना, किन्तु इस समय क्या इच्छा है, यह तो कहिए।

**दुर्जनसिंह :** इस समय, अजी, इस समय, अच्छी-अच्छी रमणियाँ प्राप्त फिर भूल हुई, कोई दूसरी क्रिया चाहिए हाँ तो, अच्छी-अच्छी रमणियाँ या सुन्दरी नही-नही, सुन्दरियाँ, दोनो बहुवचन चाहिएँ, दोनों शब्द ही उपयुक्त है, सर्वथा ठीक है, ढूँढकर, खोजकर, लाकर, देकर, हः, ह , ह , ह , कैसा अच्छा अनुप्रास मिला और यमक भी चन्द्रसेन से इनाम अररररर यावनी शब्द आ गया, हाँ तो पारितोषिक प्राप्त करता हूँ, और फिर जानते हो, महाशय, फिर क्या होगा ?

**यशवन्त :** मै तुम्हारी लीला क्या जानूं, भाई।

**दुर्जनसिंह :** तो सुन लो, कवि बनने के पश्चात् अच्छे-अच्छे वृत्त-छन्द-पद्य-दण्डक बनाकर उपहार प्राप्त करूँगा। ह:, ह., हः ह , पारितोषिक और उपहार दोनों कैसे अच्छे शब्द है। उन्नति होती जाती है। अलकार और शब्द दोनो का भण्डार मस्तिष्क मे भर रहा है। हाँ तो इस प्रकार डबल आमदनी अररररर यावनी शब्द आगया, साथ ही आँग्ल भी ! दुहरे विदेशी। डबल के स्थान पर चाहिए- द्विगुण, द्विगुण; द्विगुण कैसा अच्छा शब्द स्मरण आया। हाँ तो, द्विगुण आमदनी, गगा मदार का जोड़ा है, क्या करूँ आमदनी के स्थान पर कोई शब्द ही स्मरण नही आता, अच्छा धीरे-धीरे उन्नति होगी।

हाँ तो द्विगुण आमदनी आय · अहह ! आ गया अन्ततोगत्वा आ ही गया—आय हो जायगी । इतना ही नही होगा, द्विगुण प्रतिष्ठा भी होगी। सच कहा है — दुनिया झुकती है, झुकाने वाला चाहिए, नही नही, नर करणी करे तो नर से नारायण होय। समझे, महाशय ? अर्थात् सक्षेप मे चन्द्रसेन जी को नेहनगर का नाका नापना ही पडेगा । समझे ?

**यशवन्त :** (**घबराकर**) अब समझ गया, समझ गया, बहुत देर मे समझा, बड़े प्रयास से समझा, पर सब कुछ समझ गया ।

**दुर्जनसिह :** तो मेरी कविता मे प्रसाद गुण भी है ?

**यशवन्त :** यहाँ भी आप बण्टाढार किये बिना न रहेगे ।

**दुर्जनसिह :** (**क्रोध से**) तुम चुप रहो जी, तुम्हे पूछता ही कौन है ? मेरी कृपा है, जो आज ले आया हूँ । चलो फिर विलासपुर और आरम्भ हो कार्य ।

**यशवन्त :** भगवान् तुमसे ससार की रक्षा करे ।

**[दुर्जनसिह का जल्दी से प्रस्थान । यशवन्त का भी धीरे-धीरे उसी ओर प्रस्थान ।]**

**परदा गिरता है ।**

## चौथा दृश्य

स्थान   एक जगली मार्ग

समय   प्रात काल

[**मोहन और बलदेव का प्रवेश।**]

**मोहन :** दुख है, सर्वत्र दुख है, तब मुझे ही सुख कहाँ से मिल सकता है ? कल तक कालिन्दी के प्रेम की इच्छा का दुख था, आज

**बलदेव :** (**बात काटकर**) यह दुख तो कल दूर हो गया, मित्र ! अब तो दूसरे पाठ का प्रारम्भ होता है।

**मोहन :** साथ ही उससे भी बडे दु ख का आरम्भ।

**बलदेव :** कैसा ?

**मोहन :** कल तक मुझे केवल अपने सुख की चिन्ता थी, पर आज से अपने साथ-साथ कालिन्दी के सुख की चिन्ता का भार भी मुझ पर ही आ पडा। एक सुख की प्राप्ति ने मानो दुहरे दु ख को जन्म दिया है। इसीलिए मै कहता हूँ, सर्वत्र दुख है। फिर समझ में नही आता कि ससार मे प्रेम की इतनी गाथा क्यों गायी जाती है ? जिस प्रेम से स्वय प्रेमी को सुख

नही होता, जिस प्रेम से किसी का उपकार नही होता, उस प्रेम का इस ससार मे इतना उच्च स्थान क्यों है ?

**बलदेव :** मित्र, तुम्हारी बातो का उत्तर मेरी शक्ति के बाहर है।

**[ नेपथ्य में गान होता है। ]**

**मोहन .** कौन गा रहा है ? यह तो माता प्रमोदिनी जी जान पडती है।

**(राग मालकंस)**

है प्रेम लालसा मे अन्तर अतीव भारी।
दिन तुल्य सुखद यह, वह निशि तुल्य भीतिकारी।

**बलदेव :** तब मै तो जाता हूँ। वे ही आ रही है। उनकी बात कभी मेरी समझ मे नही आती। **(प्रस्थान)**

**[प्रमोदिनी का प्रवेश। मोहन अभिवादन करता है। प्रमोदिनी आशीर्वाद देती है। प्रमोदिनी लगभग सत्तर वर्ष की गौर वर्ण की ऊँची और साधारणतया मोटी स्त्री है। लम्बी श्वेत रंग की जटा कमर तक फैली हुई है। एक भगुआ रंग का झोला कंधे से पैर तक लम्बा पहने है। हाथ मे कमण्डल और पैर मे खड़ाऊँ है। वृद्धावस्था का कोई प्रभाव मुख पर दृष्टिगोचर नहीं होता और मुख पर कान्ति है।]**

**मोहन :** माता, आज बहुत दिन पश्चात् कृपा हुई और वह भी ठीक समय। इस समय मै बडे दुख मे पडा हूँ।

**प्रमोदिनी : (मुस्कराकर)** कैसा दुख, बेटा ?

**मोहन :** जब ससार ही दुखमय है तब मै किस प्रकार सुखी रह सकता हूँ। प्रेम-पथ के पथिको को सुख कहाँ ?

**प्रमोदिनी :** ऐसी बात तो नही है, बेटा; जो ससार मे सुख से रहना चाहे, उन्हे कभी दुख नही हो सकता, और प्रेम-पथ मे दुख कैसा ? प्रेम-पथ के पथिक तो कभी दुखी हो ही नही सकते। हाँ, लालसा मे अवश्य दुख होता है। ससार मे लोग लालसा को ही अधिकतर प्रेम समझते है। पर यथार्थ मे यह ठीक नही है। सुन (**गाती है।**)

**(राग—मालकंस)**

है प्रेम लालसा मे अन्तर अतीव भारी।
दिन तुल्य यह सुखद, वह निशि तुल्य भीतिकारी।
पर्वत समान थिर यदि, पीयूष पुज यह है,
तो राशि रेणु सम वह, विष की बुझी कटारी।
है व्याप्त व्योम सा यह, सकीर्ण वह सुई सी,
चुभती रहे हृदय मे, लगती तथापि प्यारी।
यह नीर तुल्य निर्मल, वह कीच तुल्य मैली,
यह हृदय शान्तिदायक, वह चित्त धैर्य-हारी।
यह रूप ईश का है, स्वर्गीय सौख्यदाता,
माया समान वह है, ससार मे विकारी।

वत्स, प्रेम और लालसा मे आकाश-पाताल का अन्तर है। प्रेम मे कामना नही है, वासना नही है। जहाँ कामना नही, वासना नही, वही सुख है।

ऐसा सुख केवल प्रेम से उत्पन्न होता है। इस प्रेम का पात्र समस्त विश्व है । ऐसे प्रेमी को कभी वियोग का दुख नही, भय नही, क्रोध नही, लोभ नही, मोह नही, कभी चिन्ता नही, कभी द्वेष नही। प्रेमी को किसी वस्तु विशेष की इच्छा नही। जहाँ कोई इच्छा हुई, वहाँ प्रेम नही रहा; वहाँ लालसा है। कामना और वासना का बन्धन ही पराधीनता है। यह पराधीनता ही दुख की जड है। प्रेम और लालसा मे भारी अन्तर है। इसमे जितना भी सुख है, उसमे उतना ही दुख है।

**मोहन :** परन्तु यह तो अद्भुत प्रेम है, माता !

**प्रमोदिनी :** नही, बेटा, अद्भुत तो नही है। यही प्रेम स्वाभाविक प्रेम है।

**मोहन :** **(आश्चर्य से)** अच्छा !

**प्रमोदिनी :** इस स्वाभाविक और सुखमय प्रेम का अनुभव आरम्भ मे सभी को होता है। जब तक मनुष्य की बाल्यावस्था रहती है, और उसके हृदय पर किसी बाहरी वस्तु विशेष का आवरण या प्रभुत्व नही जम जाता, अथवा भीतरी अहकार प्रबल नही हो जाता, तभी तक वह इसका अनुभव करता है। इसीलिए, बेटा, यह कहावत प्रचलित-सी हो गयी है कि ससार मे बालक के समान कोई सुखी नही होता। तू यदि अपनी ही बाल्यावस्था का स्मरण करेगा, तो तुझे

स्मरण हो आएगा, कि तुझे भी उस समय इसका अनुभव होता था।

**मोहन** (**कुछ सोचकर**) हाँ, माता, उस समय तो होता था, पर आज तो नही होता।

**प्रमोदिनी :** क्योंकि बाहरी आवरण और भीतरी अहकार ने उस अनुभव को आच्छादित कर दिया है।

**मोहन :** हो सकता है, पर आज तो उस आवरण का निवारण बडा कठिन समझ पडता है।

**प्रमोदिनी :** आवरण मोटा हो जाने से आरम्भ मे उसका निवारण कठिन प्रतीत होगा ही, पर प्रयत्न करने पर यह कठिनता दूर हो जायगी। हाँ, इसके लिए एक बडे भारी बलिदान की अवश्य आवश्यकता पडेगी।

**मोहन :** किस प्रकार के बलिदान की, माता ?

**प्रमोदिनी :** अपने स्वार्थ के बलिदान की। जिस मनुष्य को इस प्रेम-पथ पर चलना होता है उसे स्वार्थ का त्याग कर देना पड़ता है। इस नष्ट होने वाले शरीर की, इन अनित्य इन्द्रियो की लालसा से सदा के लिए उसे अपना मुख मोड लेना पडता है।

[**मोहन चुप रहता है**]

**प्रमोदिनी :** क्यो, बेटा, इतना गम्भीर क्यो हो गया ?

**मोहन :** मै सोच रहा हूँ, विचार कर रहा हूँ कि मुझमें इतना साहस है या नही कि मै इस मार्ग पर चल

सकूँ। मन से पूछ रहा हूँ कि इस अनन्त सुख को प्राप्त करने का तुझ मे बल है, या नही।

**प्रमोदिनी :** क्या उत्तर मिल रहा है ?

**मोहन :** **(सोचते हुए)** कुछ स्पष्ट नही। कभी मन इस ओर झुकता है, कभी उस ओर।

**प्रमोदिनी :** और बुद्धि क्या कहती है ?

**मोहन :** बुद्धि यही कहती है, कि, रे मन ! दृढ होकर उस नित्य सुख को प्राप्त करने का उद्योग कर।

**प्रमोदिनी :** फिर कुछ तो निश्चय करना ही होगा।

**मोहन :** **(कुछ सोचकर)** माँ,मै मन से आजन्म लड़ूंगा और उस अनन्त सुख को प्राप्त करने का प्रयत्न करूँगा। बुद्धि का निर्णय अब मुझे स्वीकृत है।

**प्रमोदिनी :** वत्स, धन्य है तू, तेरा साहस धन्य है ! अब तू कभी दुखी नही हो सकता।

**मोहन :** अच्छा, माता, अब आज से मेरी कार्य-दिशा क्या होगी ?

**प्रमोदिनी :** कार्य-दिशा ? सुन – **(गाती है।)**

**( राग भैरवी )**

स्वार्थ भूल अब, प्रेमी बनकर, प्रेम सभी से ठान।
तजकर भेद-भाव यह सारा, समता सब में मान।
प्रेम रूप हो, विमल प्रेम की, कीर्त्ति सदैव बखान।
अन्त समय तक चल इस पथ पर सफल जन्म तब जान।

**मोहन :** आज के पश्चात् किसी व्यक्ति या किसी स्थान से

प्रेम करना क्या मेरे पथ से विचलित होना होगा ?

**प्रमोदिनी :** कदापि नही, हाँ, उसमे लालसा का सम्मिश्रण होना अवश्य पथ-भ्रष्ट होना होगा। बेटा, विश्व-प्रेम का पथिक किसी भी व्यक्ति या स्थान से प्रेम कर सकता है।

**मोहन :** अच्छा।

**प्रमोदिनी :** विश्व क्या है ? सारे व्यक्तियो और स्थानो की समष्टि ही तो विश्व बनाती है। निकटवर्ती व्यक्तियो और स्थानो पर प्रेम का प्रदर्शन होना स्वाभाविक है, क्योकि मनुष्य की पहुँच सारे विश्व में नही हो सकती। जिस प्रकार समुद्र की लहर जिस स्थान से उठती है, वहाँ अधिक ऊँची रहती है, और जैसे-जैसे आगे बढ़ती जाती है स्वभावत छोटी होकर विलीन हो जाती है, उसी प्रकार विश्व-प्रेमी का प्रेम भी निकटवर्ती वस्तुओ और स्थानो पर अधिक प्रदर्शित होता है। किन्तु इसका यह अर्थ नही है कि शेष विश्व से उसका प्रेम नही है। उसके हृदय मे किसी से प्रेम, किसी से घृणा, यह नही हो सकता. सब पर प्रेम-दृष्टि उसका स्वाभाविक गुण हो जाता है। समझा, बेटा ?

**मोहन :** आप सदृश गुरु को पाकर किस शिष्य के हृदय मे शका रह सकती है ? मेरे अन्त करण के सारे अन्धकार को आपने दूर कर दिया। जिस प्रेम का धुँधला-

सा स्वरूप बाल्यावस्था मे मैने देखा था उसी को आपने स्पष्ट रूप दिया, माँ, अब आशीर्वाद दीजिए, माँ, कि आपके बताये हुए मार्ग पर चलकर मै सच्चे और स्वाभाविक आनन्द को प्राप्त कर सकूँ।

**[प्रमोदिनी दोनों हाथ उठाकर आशीर्वाद देती हुई जाती है। पीछे-पीछे मोहन का भी प्रस्थान।]**

**परदा उठता है।**

## पाँचवाँ दृश्य

स्थान    यशवन्त का मकान

समय    प्रात काल

**[मकान देहाती ढंग का है। यशवन्त बैठा हुआ है। दुर्जन-सिंह का प्रवेश।]**

**दुर्जनसिंह :** प्रणाम, नमस्कार, राम-राम, जयगोपाल, जय-श्रीकृष्ण, जय रघुनाथ जी की, नमस्ते, जुहार, जय जिनेन्द्र, सत्य श्री अकाल, सलाम, आदाब, तस्लीमात, साहब जी, गुड मार्निंग, आदि-आदि हः, हः, हः, हः।

**यशवन्त :** **(रुष्ट होकर)** यह कौनसी नयी लीला है ?

**दुर्जनसिंह :** अजी महाशय, कविता है, कविता। **(बैठकर)** एक विषय के लिए कविता जितने **(सोचकर)** हाँ तो देखो, वह कौनसी बाजी कहलाती है ? **(सोचता है)** हाँ, हाँ, हाँ, स्मरण आ गया, पर्याय बाजी ! हाँ तो इस बाजी मे एक अर्थ के लिए जितने शब्द रखे जायँ, उतनी ही कविता की शोभा बढती है। जैसे – आप ही के लिए लीजिए, कितने शब्दों का

उपयोग किया जा सकता है ? वृद्ध, सयाने, बुजुर्ग, जईफ, शयालू, निद्रालू

**यशवन्त :** (**खीझकर, बात काटकर**) बस क्षमा करो, महाशय, मै साहित्य नही जानता, मुझ पर कृपा करो।

**दुर्जनसिंह :** अच्छी बात है, जाने दीजिए। यदि इस विषय से आपको थोडा भी प्रेम नही है तो अब मै कुछ न कहूँगा। परन्तु इतना फिर भी कहना है, कि साहित्य से जिसे प्रेम नही वह निरे पशु के बराबर है। फिर इस अवस्था मे तो

**यशवन्त :** (**बात काटकर**) फिर वही राग छेड दिया ? भाई, मेरे मस्तिष्क मे इतना बल नही, कि आप से इन विषयो पर बातचीत कर सकूँ। मुझे तो आप से एक बात पूछनी है, इसीलिए आपको बुलवाया है। कृपा कर बतला दीजिए।

**दुर्जनसिंह :** हाँ तो पूछिए, पूछिए। एक नही, एक सौ इकत्तीस बार बताऊँगा।

**यशवन्त :** यही पूछता हूँ कि आपने ठाकुर साहब को कहाँ भेजा है ?

**दुर्जनसिंह :** यह तो बडा ही मनोरजक, मनोमोहक, आनन्दोत्पादक विषय है। ऐसा मनोरजक कि जिसे सुन देवता भी मोहित हो जायँ, अप्सराएँ नृत्य करने लगे, वाद्य-वादक ताल सुर

**यशवन्त :** फिर वही राग, सक्षेप से कहिए सक्षेप से।

**दुर्जनसिह :** तो सक्षेप से तो यह उत्तर है कि – जैसा मैंने उस दिन कहा था, नेह-नगर भेजा है ।

**यशवन्त :** **(घबराकर)** हाय ! हाय ! तब तो जो सम्वाद मैंने सुना, वह ठीक है। ईश्वर उस कन्या को बचावे। ओह ! दुर्जनसिह, तुम किस नरक मे पडोगे ।

**दुर्जनसिह :** हा ! हाः ! हा ! हा ! बहुत वृद्ध होने से नरक दिखायी देने लगा है, क्यो ? अजो महाशय, मैं तो तुम्हे आज अन्त मे यह कहता हूँ कि अब भी सोचो, विचारो । समय है । यदि अब भी मेरी ओर हो जाओ, तो गुलछर्रे उडाने लगो, नही तो यही नरक ही नरक सूझेग ।। स्वर्ग का स्वप्न भी न आयगा, और हाय-हाय कहते टैं बोल जाओगे ।

**यशवन्त :** **(कुछ धैर्य से)** दुर्जन, तुम्हे थोडा भी विचार नही आता, कि चन्द्रसेन के पिता कुवेरसिह ने यह सम्पत्ति किस प्रकार उपार्जित की थी ।

**दुर्जनसिह :** बीती ताहि बिसारि दे, आगे की सुधि लेय ।

**यशवन्त :** हाय ! हाय ! वही सम्पत्ति आज वेश्याओं और वारुणी मे बही जा रही है, और इसके प्रधान कारण तुम हो । हम दोनो के ही बाप-दादो ने इस घर की कैसी सेवा की थी । कुछ स्मरण करो । स्वामी के चरित्र को तुमने कितना भ्रष्ट कर दिया । कितनी कुल-बधुओ का सतीत्व नाश कराया । क्या इन पापो का भी कोई प्रायश्चित्त है ?

**दुर्जनसिंह :** अब तक नर्क था, अब आया प्रायश्चित्त । अजी महाशय, यदि हिन्दू रहा तो मरने से पहले एक बार गगा मे नहाकर सब पापो को धो डालूँगा, और मुसलमान हो गया, तो तौब, तौब, दो बार कह दूँगा, तब तो स्वर्ग या बिहिश्त मिल जायगा और फिर अब तो हमारे देश मे एक धर्म और आया है। क्रिश्चियन हो गया तो मरने के दो पल पूर्व किसी भी लम्बी दाढी वाले पादरी के सम्मुख कनफ्यूजन, नही-नही, देखो, क्या कहते है उसे (**कुछ सोचता है**) भूल गया। अच्छा जो कुछ वे कहते है, कर लूँगा। फिर तो पैरेडाइज मिल जायगा न ?

**यशवन्त :** (**क्रोध मे**) चल, हट, पापी, अब कभी मेरे घर न आना ।

**दुर्जनसिंह :** हा ! हा ! हा. ! तुमने बुलाया, इसलिए आया। वाह ! रे क्रोधवन्त, हसवन्त, रोवन्त, यशवन्त, पशुवन्त हा ! हाः ! हा. !

**[दुर्जनसिंह जाना चाहता है; यशवन्तसिंह उसे पकड़कर बैठ जाता है।]**

**परदा गिरता है।**

## छठवाँ दृश्य

स्थान : भोलानाथ का घर

समय : प्रात काल

[**भोलानाथ का प्रवेश। भोलानाथ लगभग चालीस वर्ष का साॅवले रंग का ठिगना आदमी है। काली मूँछे है जो ऊपर चढ़ी हुई है। अंगरखा और पाजामा पहने है। सिर पर गोल पगड़ी है।**]

**भोलानाथ :** उमा ! उमा !

[**उमा का प्रवेश।**]

**उमा :** कहिए, नाथ, आज तो मालिक की हाॅ मे हाॅ मिला कर नही आये है।

**भोलानाथ :** (**पैर पटककर**) लो, नि सन्देह फिर वही बात। अरे बाबा, मै तो नि सन्देह काम करते-करते थककर कुछ विश्राम करने यहाॅ आया और तुम्हारी खोपडी से मुझे देखते ही नि सन्देह फिर वही निकल आया।

**उमा :** विश्राम तो आप सुख से करे, पर विश्राम के समय ही इन बातो को सोचना भी

**भोलानाथ :** इतना काम, ओह ! एक-दो क्या ? नि सन्देह दस

आदमी भी नही कर सकते। सैकडो गाँवों की जमी-दारी की देखभाल, व्यापार की देखरेख, और इतने पर आज अमुक व्यापारी आया, कल ठेकेदार आ फटका, परसो राजा आये, नरसो ताल्लुकदार पहुँचे, फिर जमीदार आ धमके। इन सबकी आव-भगत और सेवा का प्रबन्ध भी नि सदेह मेरे सिर।

**उमा :** यह तो

**भोलानाथ :** कल से चन्द्रसेन आये है। उसके सत्कार का तो नि सन्देह ठिकाना ही नही है। नि सन्देह, आज तक किसी राजा का भी इतना सत्कार नही हुआ था।

**उमा :** यह तो देखती हूँ, कि आपको बहुत काम रहते है, और आप उन्हे योग्यता और परिश्रम से करते भी है, परन्तु फिर भी आप जो सदा स्वामी की हाँ मे हाँ मिलाया

**भोलानाथ :** **(बात काटकर एक परिक्रमा लगा)** लो, घूम-फिर कर फिर नि सन्देह वही की वही, इतना काम करके आया, इतना तुम्हे समझाया, पर उस पर तुम्हारी आपत्ति, निःसन्देह कम न हुई। न जाने स्त्रियो का मस्तिष्क कैसा होता है, जहाँ कोई बात उनके सिर मे घुसी, वहाँ उसका निकलना कठिन क्या नि सन्देह असम्भव हो जाता है। तुम यह निःसन्देह नही जानती, कि श्रीमानो के साथ किस प्रकार का बर्ताव करना चाहिए।

**उमा :** किस प्रकार करना चाहिए, नाथ ?

**भोलानाथ :** नि सन्देह उसी प्रकार जैसा मै करता हूँ। देखो जहाँ उनकी सम्मति के विरुद्ध कुछ कहा कि उनकी आँखे नि सन्देह आगयी भौहो पर और भौहे नि.सन्देह चढ गयी मस्तक पर। इसलिए हाँ मे हाँ नि सन्देह मिलानी ही पडती है। यदि मुझमे 'हाँ मे हाँ' मिलाने का उच्च गुण न होता तो, नि सन्देह आज मै श्रीमान ठाकुर शूरसेन जी का मन्त्री श्रीमान् भोलानाथ जी साहब न कहलाता। **(मूँछो पर हाथ फेरता है)**

**उमा :** **(उदास भाव से)** नाथ, आप इस दुर्गुण को उच्च गुण समझ रहे है। यदि आप एक इसे ही छोड़दे तो सर्वगुणसम्पन्न हो जायँ।

**भोलानाथ :** **(जोर से)** तुम्हारी समझ मे निःसन्देह कभी न आयगा। अरे यदि मुझ मे से यह गुण निकल जाय तो सर्वगुणसम्पन्न होने के स्थान पर निःसन्देह निर्गुण अवश्य हो जाऊँगा। फिर मुझ मे रह ही क्या जायगा ? **(दोनों हाथ के अँगूठे हिलाता है।)**

**उमा :** **(दु:ख से)** तो फिर आप इसे न छोडेगे ?

**भोलानाथ :** **(खीझकर)** और तुम घड़ी-घडी टोकना न छोड़ोगी ?

**उमा :** **(विवश होकर)** अच्छा यह भी अभी जाने दीजिए, यह बताइए कि चन्द्रसेन किस लिए आये है ?

**भोलानाथ :** हाः ! हा ! हा ! हा. ! किस लिए आये है ! नि.सन्देह

आनन्द करने के लिए आये है और किस लिए आये है।

**उमा :** नही, मुझे कुछ सन्देह होता है।

**भोलानाथ :** कैसा सन्देह ?

**उमा :** आपने कहा न, कि उनका बडा सत्कार हो रहा है।

**भोलानाथ :** सो नि सन्देह होने दा। उससे तुम्हारा जी क्यो जलता है ?

**उमा :** नही-नही, जी नही जलता, उससे मुझे यह शका होती है, कि कही ठाकुर साहब कालिन्दी देवी का विवाह उनसे करने का विचार न कर डाले।

**भोलानाथ :** **(हर्ष से उछलकर)** नि सन्देह अच्छा कहा। वाह ! वाह ! यदि न भी करते होगे तो मै अभी जाकर सुझाता हूँ, विश्राम-इश्राम कुछ नही, तत्काल वहाँ चला। जैसा धनवान जामाता ठाकुर साहब चाहते थे नि सन्देह वैसा ही मिल गया। अब नि.सन्देह क्या पूछना है। ऐसी सम्मति देने से ठाकुर साहब निःसन्देह मुझ पर बड़े प्रसन्न होगे। **(उछलता हुआ बाहर जाने लगता है।)**

**उमा :** **(आगे बढ़ती है)** ठहरिए-ठहरिए, सुनिए भी तो।

**[भोलानाथ का शीघ्रता से प्रस्थान। उमा भी—"थोड़ा तो सुनिए, थोड़ा तो सुनिए" कहते हुए पीछे-पीछे जाती है।]**

**परदा उठता है।**

## सातवाँ दृश्य

स्थान    शूरसेन का बैठकखाना

समय    प्रातःकाल

[बड़ा-सा कमरा है, हरिया थूथे के रंग से पुता है। देवताओं की बड़ी-बड़ी तस्वीरे और आईने दीवालों पर लगे है। छत से काँच की खरबूजे के ढंग की हंडिएँ और गोले लटक रहे है। बीच मे मोमबत्ती का झाड़ झूलता है। कमरे मे लाल जाजम बिछी है। उस पर मिर्जापुरी गलीचा है। गलीचे के तीन ओर लाल जाजम का कुछ भाग दिखायी देता है। गलीचे के ऊपर गद्दी बिछी है, जिस पर सफेद चादर है। दो मसनद सफेद खोली से ढँके रखे है। एक के सहारे शूरसेन बैठा है। गद्दी के नीचे गलीचे पर मोहन बैठा है। शूरसेन के सामने चाँदी का हुक्का चाँदी के थाल मे रखा है। लड़ी से मढ़ी हुई सटक है। शूरसेन हुक्का पी रहा है। शूरसेन लगभग पचास वर्ष का गेहुएँ रगका ऊँचा-पूरा भरे शरीर का आदमी है। सिर और मूँछों के बाल सफेद हो चले है। अचकन और धोती पहने है। सिर पर गोल पगड़ी है। भोलानाथ का प्रवेश।]

**भोलानाथ :** नि सन्देह मै एक ऐसी बात सोचकर आया हूँ जिसे

सुनते ही श्रीमान नि सन्देह प्रसन्न हो जायँगे, पर उसे कहूँगा नि सन्देह एकान्त मे। (**बैठता है।**)

**शूरसेन :** (**हुक्के का धुआँ मुँह से छोड़ते हुए**) अच्छा फिर कहना। (**मोहन से**) तो, बेटा, तुम मानते हो कि जो कुछ मै कहूँगा, तुम्हारे हित के लिए ही कहूँगा ?

**मोहन :** हाँ, पिता जी, बडे जो कुछ कहते है भले के लिए ही कहते है।

**शूरसेन :** सच कहा, बेटा, तुम तो सब प्रकार से बुद्धिमान् हो। (**फिर हुक्का पीकर**) अच्छा और साथ ही तुम यह भी मानते हो कि बडो की आज्ञा मानना छोटों का कर्त्तव्य है।

**मोहन :** हाँ, पिता जी।

**शूरसेन :** बहुत-ठीक, बहुत-ठीक ! (**फिर हुक्का पीकर**) और क्यों, बेटा, मै यह भी सुनता हूँ कि बडो की आज्ञा चाहे अनुचित हो तो भी उसे मानना धर्म है।

**मोहन :** हाँ, पिता जी, परन्तु धर्म की बात तो सदा विचारणीय रहती है।

**शूरसेन :** वाह, बेटा, नि.सन्देह तुम बडे विद्वान् हो। (**हुक्का गुड़गुड़ाते हुए**) अच्छा तो अब मै तुम्हे एक छोटी-सी आज्ञा देता हूँ।

**मोहन :** (**हाथ जोड़कर**) कहिए, पिता जी।

**शूरसेन :** तुम से एक पत्र लिखवाना चाहता हूँ।

**मोहन :** (**हाथ जोड़कर**) कैसा पत्र ?

**शूरसेन :** कालिन्दी के नाम एक पत्र इस प्रकार का लिख दो, कि जो वचन आज तक मैंने तुम्हे दिये उन सबको मै इस पत्र से तोडता हूँ। तुमसे और मुझसे कोई सम्बन्ध नही।

[**मोहन चौंककर चुप रहता है।**]

**शूरसेन** क्यो, बेटा ! चौक कैसे पडे ?

[**मोहन फिर चुप रहता है।**]

**शूरसेन :** (**क्रोध से**) क्यो चुप क्यो हो, क्या यह पत्र लिखना तुम्हे स्वीकार नही है ?

**मोहन :** (**भर्राये हुए शब्द से**) सोच रहा हूँ।

**शूरसेन :** इसमे इतने अधिक सोचने की क्या बात है ?

**मोहन :** जीवन-मरण की और धर्म-रक्षा की।

**शूरसेन :** इसमे मरना, जीना और धर्म-रक्षा का कैसा प्रश्न है ?

**मोहन :** यही कि आपकी यह आज्ञा मेरे पूर्व-निश्चित धर्म-पथ के प्रतिकूल है।

**शूरसेन :** (**उत्तेजित भाव से**) किन्तु तू तो यह भी कहता था न, कि बडो की आज्ञा मानना कर्त्तव्य है।

**मोहन :** वही तक जहाँ तक कि अपने धर्म पर आघात न पहुँचे।

**शूरसेन :** (**क्रोध से**) तो तुझे पत्र लिखना स्वीकार नही ?

**मोहन :** क्षमा कीजिए, पिता जी, मै आपकी इस आज्ञा का पालन नही कर सकता।

**शूरसेन :** **(अत्यन्त क्रोध से खड़े होकर)** रे नीच ! मेरे ही घर के टुकडे खाकर पला है और मेरी ही आज्ञा टालता है ! निकल मेरे घर से !

**मोहन ।** **(शान्ति से)** आपकी पहली आज्ञा यद्यपि मै नही मान सकता, पर आपकी यह आज्ञा मै सहर्ष मानता हूँ। पिता जी, इन चरणो को अन्तिम बार नमस्कार कर मै चलता हूँ । आपने मुझे पाला है । मेरे ऊपर आपके अगणित उपकार है । उनसे मै इस जन्म मे उऋण नही हो सकता। सदा आपका अनुग्रहीत रहूँगा, सदा उन उपकारो का स्मरण करूँगा। आशीर्वाद दीजिए कि मै अपने धर्म की आजीवन रक्षा कर सकूँ ।

[**मोहन शूरसेन के पैर पड़ने लगता है ।**]

**शूरसेन :** **(पैर हटाते हुए)** चल हट, मुझसे ही आशीर्वाद चाहता है। तेरा काला मुँह हो, यही आशीर्वाद है। निकल

**भोलानाथ :** **(खड़े हो)** निःसन्देह निकल ·

**यवनिका**

# दूसरा अंक

## पहला दृश्य

स्थान : कौमुदी का कमरा

समय . सन्ध्या

**[कौमुदी और उमा खड़ी है। कौमुदी लगभग सोलह वर्ष की परम सुन्दर युवती है। वस्त्राभूषण कालिन्दी के सदृश है।]**

**उमा :** तो तुम समझती हो, कि चन्द्रसेन अवश्य ही कालिन्दी के योग्य है।

**कौमुदी :** मेरा तो यही मत है। ऐसी सुन्दरता और ऐसा वैभव आज तक देखने मे क्या, सुनने मे भी नही आया। जैसा सुन्दर चन्द्रसेन नाम है, वैसा ही रूप है और फिर उन जगमगाते हुए जरी के कपडो और आभूषणो ने तो उन्हे साक्षात् चन्द्रमा ही बना दिया था। नेह नगर दो-चार आदमी साथ लेकर आ जाते, पर तुमने नही देखा कि बाईस मुसाहिब और चालीस नौकर साथ थे। घोडो और रथों को देखा था। चाँदी के मढे हुए रथ और घोडो पर चाँदी का साज क्या किसी के भी पास है ? मै तो समझती थी कि चाचा जी के पास ही सब कुछ है, पर उनके

सम्मुख चाचा जी भी क्या है ?

**उमा :** **(मुस्कराकर)** इस वर्णन मे तुम एक बात तो भूल ही गयी कौमुदी, सोने के हुक्के और पानदान तथा सोने के भोजन के बर्त्तनो का तो तुमने उल्लेख ही न किया।

**कौमुदी :** **(रुष्ट होकर)** इसमें भी व्यग ! बहन का और तुम्हारा सिर तो घूम ही गया है। तुम लोगो के सामने तो बोलना कठिन है। तुमने पूछा कि वह बहन के योग्य है या नही, इसी से मैंने यह सब कहा; नही तो मुझे क्या पडी थी जो तुमसे बोलती। **(जाना चाहती है।)**

**उमा :** **(रोककर)** लो तुम तो अप्रसन्न हो गयी। मैंने तो एक बात का स्मरण भर दिलाया था जो तुम भूल गयी थी, यदि तुम्हे उनके इस लम्बे-चौड़े वैभव के वर्णन से पूरा-पूरा आनन्द नही आया हो तो कुछ उनके लाछंन सुन लो। मदिरा से चढे हुए उनके नेत्र, उसकी सुगन्ध से युक्त मुख, गर्व से भरी हुई बोली, और चन्द्र की बढ़ती-घटती कला के अनुसार .

**कौमुदी :** **(रोते हुए)** नही नही, तुम लोग मुझे बहुत तग करती हो। मै चाचा जी से कह दूँगी कि वे मुझे कही भेज दे, या, मै ही कही चली जाऊँगी।

**उमा :** क्षमा करो, बहन, जिस चन्द्र की अतुलनीय शोभा

का वर्णन तुमने किया था उसी के अवशिष्ट गुणो का उल्लेख मैंने भी कर दिया। चन्द्र मे लाछन भी शोभा देता है। **(कुछ ठहरकर)** अच्छा, यह तो बताओ, चन्द्रसेन से और तुमसे भी तो बहुत सी बाते हुई थी। वे क्या कहते थे ?

**कौमुदी :** **(कुछ शान्त होकर)** विशेष कोई बात नही हुई। उन्होने मुझ पर प्रेम अवश्य दर्शाया। बहन के साँवले होने के कारण वे उन्हे विशेष पसन्द नही है।

**उमा :** **(कुछ मुस्कराकर)** तो, कौमुदी, तुम्हारा और उनका ही विवाह क्यो न कर दिया जाय ? चन्द्र और कौमुदी की जोडी भी सुन्दर मिल जायगी !

**कौमुदी :** **(लज्जित होकर)** छि छि कैसी बात करती हो। अब मै तुम से कभी न बोलूँगी। **(जल्दी से जाती है।)**

**उमा :** **(आगे बढ़ती हुई)** सुनो, सुनो तो, अरे तुम तो भाग ही गयी। **(पीछे-पीछे जाती है।)**

**परदा उठता है।**

## दूसरा दृश्य

स्थान चन्द्रसेन का बैठकखाना

समय रात्रि

[कमरा टेसू के फूल के पीले रंग से रँगा है। सुन्दर-सुन्दर स्त्रियों की बड़ी-बड़ी तस्वीरें और आईने दीवाल पर लगे हैं। छत से झाड़, हंडियाँ और गोले झूल रहे हैं। जमीन पर आगरे की लाल पट्टेदार दरी और उसके तीनों ओर विलायती गलीचे की पट्टियाँ बिछी है। दरी के बीच में सफेद चादर तनी हुई है। जिस पर वेश्या का नाच हो रहा है। तबलची और सारंगी वाले भी हैं। गलीचे की पट्टियों पर सफेद खोली चढ़ी हुई मसनदों की कतार लगी हुई है। इसके सहारे कई लोग भिन्न-भिन्न प्रकार के वस्त्र पहने बैठे हैं। सामने की ओर बीच में एक छोटी-सी गद्दी है जिसके पीछे मसनद और दोनों ओर दो हाथ तकिये हैं। गद्दी तकियों पर मलमल की खोली है जिसके भीतर से कमख्वब चमक रहा है। इस गद्दी पर जरी के किनारी की धोती, काम-दानी के काम का लखनऊ का कुरता पहने और जरी की टोपी लगाये चन्द्रसेन बैठा है। चन्द्रसेन के गले में मोती की कण्ठी और हाथ में जड़ाऊ कड़े हैं। चन्द्रसेन की अवस्था लगभग २२

**वर्ष की है। सुन्दर युवक है। मद्य-पान हो रहा है। नाच के पश्चात् गान होता है।]**

**(राग-बिहाग)**

आओ, आओ करे सुख-भोग अभी।
हाय ! हाय ! हो क्यो नित करते, जावेगा क्या साथ सभी।
है चल बसना, सब छूटेगा, फिर न मिलेगा समय कभी।
प्याले पियो, पिलाओ, आओ, होगा जीवन सफल तभी।

[**प्रतीहारी का प्रवेश।**]

**प्रतीहारी :** दुर्जनसिह जी आये है, श्रीमान् के पास उपस्थित होना चाहते है।

**चन्द्रसेन :** **(मदिरा के मद मे चूर)** स स. स सब मिट्टी मे मिला दिया।

**एक सभासद :** हाँ, जी, सब मिट्टी कर दिया।

**दूसरा सभासद :** सर्वथा।

**चन्द्रसेन :** **(कुछ ठहरकर)** अच्छा, आ-आ-आ-आने दो।

[**प्रतीहारी का प्रस्थान और दुर्जनसिह का प्रवेश। वह प्रणाम करता है।**]

**चन्द्रसेन :** **(प्रणाम का उत्तर सकेत से देकर)** कः क क क. क कहो, दुर्जन ! कब आये ?

**दुर्जनसिंह :** आये तो मुझे बहुत विलम्ब हुआ, किन्तु श्रीमान् की इस आज्ञा के कारण, कि 'जब तक एक गाना पूरा न हो जाय, किसी के आने की सूचना न करना', मैं द्वार पर उसी प्रकार खडा रहा, जिस प्रकार बलि

के द्वार पर बामन भगवान खडे रहे थे।

**चन्द्रसेन :** **(खीझकर)** तु तु तुः तुम झटपट काम की बात कह डालो। ये उपमाएँ र र र रहने दो। यहाँ तो, तो सारा मजा कि कि कि किरकिरा हो रहा है।

**दुर्जनसिंह :** बहुत अच्छा, श्रीमान्, काम और तो इस समय कष्ट देने का कुछ नही था, केवल जिस बात का पता लगाने की आज्ञा दी गयी थी, उसी का मैं पालन करके आया हूँ।

**चन्द्रसेन :** **(उत्सुकता से)** प प प पालन कर आये ? तः तो, तो तुम मोहन का पता लगा लाये ?

**दुर्जनसिंह :** भला कोई बात है, कि पता न लगे। पता लगाने मे आप मुझे राजा बलि का चेला शुक्राचार्य, नही-नही भूल गया, सस्कृत मे कौनसे भेदिये की बडाई की गयी है ? हाँ तो देखिए सोचता हूँ। **(सोचता है।)**

**चन्द्रसेन :** **(खीझकर)** फि फि फि. फिर यही ब ब ब. बात तुम उपमाएँ छोडकर जो कुछ क. क कहना हो जल्दी से कः क. कह डालो।

**एक सभासद** सब मिट्टी मे मिला दिया।

**दूसरा सभासद :** हाँजी, सब गुड गोबर कर दिया।

**दुर्जनसिंह :** तो मै सक्षेप से कहकर फिर सब गुड़ शक्कर किये देता हूँ। जान पडता है कि श्रीमान् को सक्षिप्त वर्णन ही प्रिय है। अपनी-अपनी रुचि तो ठहरी। किसी को कालिदास का विस्तृत वर्णन पसन्द आता

है और किसी को भूति-भव का सक्षिप्त ।

**एक सभासद :** **(उठकर)** अजी आप भूलते है। कालिदास का वर्णन सक्षिप्त है और जिन्हे आप भूतिभव कह रहे है उनका नाम है भवभूति, उनका वर्णन है विस्तृत।

**चन्द्रसेन :** **(अत्यन्त रुष्ट होकर)** तु तुः तु तुम लोगो को हुआ क्या है ? क. क कः काव्य की बात पूछता कौन है ? च. च चः चलो बैठो। **(वेश्याओ से)** तुः तुः तु तुम लोग गाओ। कोई अ-अ-अ अच्छा गाना गाओ। स स स सब गुड मिट्टी कर दिया।

**एक सभासद :** सब शक्कर गुड कर दिया।

**[वेश्याएँ गाती है, दुर्जनसिह बैठ जाता है।]**

**(तर्ज - मन तू राधाकृष्णा बोल, तेरा क्या लगेगा मोल)**

आहा ! भाग्यवान श्रीमान् जग मे चैन उडाने आते।
जो मस्तिष्क सुशोभित रहता, मद से गीला नित,
न कि ध्यान योग इन्द्रियजित, वे सिर मे कभी गडाते।
नित आँखे अति सुकुमारी, रमणी-छबि देखे प्यारी,
न कि भक्ति-घटा अँधियारी, वे उन पर है फैलाते।
जो नाक बडी मन भावन, वह सूँघे गन्ध सुहावन,
कर प्राणायाम तपावन, वे उसको नही तपाते।
जो कान शख सम सुन्दर, सुनते है गायन बढकर,
न कि धर्म-नीति सुनवा कर, उनको वे वधिर बनाते।
जो ओठ कमल सम विकसित, वे पान करे अधरामृत,
न कि हरि यश कठिन अपरिचित, वे उनसे कभी गवाते।

a 2 0-H15 5602

कर करे सदा ही कोमल, प्रिय आलिगन युवती दल,
न कि उन्हे उठाकर प्रतिपल, वे नमस्कार करवाते।
जो चरण बड़े ही मृदुतर, हो शोभित वे गद्दो पर,
न कि इधर उधर या पर घर, वे चक्कर उन्हे खिलाते।

**एक सभासद :** **(दूसरे सभासद का हाथ ठोक)** बहुत ठीक, बहुत ठीक, क्या बात है! भाग्यवान श्रीमानो और अभागे निर्धनो मे बस यही तो अन्तर है।

**दूसरा :** भाई, मेरी सम्मति मे तो वह श्रीमान् ही नही जो ऐसा आनन्द न करता हो।

**तीसरा :** और क्या, वह तो लक्ष्मी पर बैठे हुए सर्प के तुल्य है।

**चौथा :** **(सिर हिलाते हुए)** और, भाई, यदि श्रीमान् भी ऐसा न करे तो फिर निर्धन तो करेगे ही क्या ?

**पाँचवाँ :** इसमे क्या सन्देह है ?

**छठवाँ :** बहुत ठीक, बहुत ठीक।

**[बाकी सभासदों का "वाह वाह" करना और सभी का मद्य-पान।]**

**चन्द्रसेन :** दु दु दु दुर्जनसिह!

**दुर्जनसिंह :** **(खड़े होकर)** श्रीमान्!

**चन्द्रसेन :** **(उसी प्रकार नशे मे)** हाँ तो तु-तु-तु तुम मोहन का व व व वृत्तान्त कहते थे न ?

**दुर्जनसिंह :** जब कह पाऊँ, श्रीमान् ? मेरा कहना तो उसी प्रकार रोक दिया जाता है जिस प्रकार मेघ का प्रकाश सूर्य रोक देता है। ओह मुँह से उल्टी बात निकल ही

जाती है, ठीक उसी प्रकार जैसे खाया हुआ भोजन…

**चन्द्रसेन :** अ-अ अच्छा, अच्छा अब कहो। इधर-उधर की मत उडाओ। प प पर कहना संक्षेप मे, समझे ?

**दुर्जनसिंह :** सर्वथा सक्षेप से लीजिए, श्रीमान। सक्षेप मे उसने बडा उच्च पद प्राप्त कर लिया है, और भारी प्रतिष्ठा पायी है।

**चन्द्रसेन :** (**आँख खोलकर अचम्भे से**) ऐ ! हाँ ! हाँ ! हाँ। उल्टा तो नही कह गये ?

**दुर्जनसिंह :** नही, श्रीमान्, सीधा है।

**चन्द्रसेन :** पर तु, तु तुमने यह तो बतलाया ही नही कि कैसे ?

**दुर्जनसिंह :** श्रीमान् ने कहा था न कि बहुत सक्षेप मे कहो।

**चन्द्रसेन :** इतना सक्षेप से नही कि पूरी बात ही न जान पड़े। पः प पूरा वृत्त तो बताओ, पर शीघ्रता से।

**दुर्जनसिंह :** पूरा वृत्त शीघ्रता से सुन लीजिए। (**बहुत ही जल्दी-जल्दी**) शूरसेन के यहाँ से जाते ही वह अयोध्या गया। वहाँ के मन्त्री ने उसे अपने घर मे रख लिया। तब से वह राजसभा मे जाने लगा है।

**चन्द्रसेन :** थ थ थोडा धीरे।

**दुर्जनसिंह :** कभी श्रीमान् कहते है सक्षेप मे कहो, जब सक्षेप से कहता हूँ तब पूरी बात कहने की आज्ञा होती है और वह शीघ्रता से, जब शीघ्र गति से कहता हूँ तब आप कहते है धीरे-धीरे कहो। इसमे तो आदमी की दशा चमगीदड़ जैसी हो जाती है।

**चन्द्रसेन :** भ भ भ भाई, न बहुत सक्षेप से हो, न बहुत विस्तार से, न बहुत न धीरे, बहुत शीघ्रता से।

**दुर्जनसिंह :** बहुत अच्छा, **(उँगली पर गिनते हुए)** अब न सक्षिप्त और न विस्तृत, न शीघ्र और न धीरे, इसी चतुष्पाद प्रणाली से लीजिए। हाँ तो वहाँ से अर्थात् शूरसेन जी के यहाँ से जाकर

**चन्द्रसेन :** **(बात काटकर)** य - य - य - यह तो मैं सु सुः सुः सुन चुका हूँ।

**दुर्जनसिंह :** आपने कहा न कि धीरे-धीरे कहो।

**चन्द्रसेन :** व - व वही से ज -ज जहाँ से मैंने सुना नही।

**दुर्जनसिंह :** यह मै कैसे जानूँ कि आप कहाँ तक सुन चुके है ?

**चन्द्रसेन :** अ - अ - अ - अयोध्या मे व - व वह राज-सभा में जाने लगा।

**दुर्जनसिंह :** तो बस अब सुनने को शेष ही क्या रहा ?

**चन्द्रसेन :** तु - तु तुमने कहा न कि उ - उ उसने बड़ा उ - उ - उ उच्च पद पाया है ?

**दुर्जनसिंह :** यह पद क्या नीचा है।

**चन्द्रसेन :** अ - अ और प्रतिष्ठा ?

**दुर्जनसिंह :** सो बात अलग है।

**चन्द्रसेन :** क क. कैसे ?

**दुर्जनसिंह :** राज्य का रुपया बाल-आश्रमो, औषधालयों, धर्मशालाओ, पाठशालाओं, दरिद्र-शालाओ आदि कई आश्रमो, आलयो और शालाओ

**चन्द्रसेन :** (खीझकर) कै - कै कैसी शाखाओ ?

**दुर्जनसिंह :** मैने कहा न, पाठशालाओ, दरिद्रशालाओ, धर्मशालाओं

**चन्द्रसेन :** (खीझकर) य - य यह स स सब तो सुना, पर इस का अर्थ क्या ?

**दुर्जनसिंह :** टीका करूँ। अच्छी बात है। टीका यही कि इस प्रकार राज्य के धन का नाश करके उसने प्रजा मे बडी प्रतिष्ठा पायी है। अब वह ठीक चाणक्य के मन्त्री चन्द्रगुप्त के सदृश

**एक सभासद :** (बीच ही मे) फिर भूल हुई।

**चन्द्रसेन :** (खीझकर, खड़े होकर क्रोध से झूमते हुए) ऐ - ऐ ऐसी प्रतिष्ठा ! ल-ल लाओ तलवार, ल-ल लाओ !

**एक सभासद :** क्षमा कीजिए, क्षमा कीजिए, श्रीमान् !

**दूसरा :** यदि आप ऐसा क्रोध करेगे तो प्रलय हो जायगी।

**तीसरा :** अजी आकाश फट पडेगा आकाश ! **(वेश्याओं से)** गाओ, गाओ।

**[चन्द्रसेन नशे मे गिरना चाहता है। सभासद सम्हालते। फिर तबला ठनकता है।]**

**परदा गिरता है।**

## तीसरा दृश्य

स्थान   रूपसेन के मकान की दालान

समय   सन्ध्या

[**मोहन और बलदेव का प्रवेश ।**]

**मोहन :** ससार सचमुच विचित्र है, मित्र। हर बात मे विचित्रता देख पडती है कही भी समानता नही। आकाश के दो तारे एक से नही। पर्वत के दो शिखर एक से नही। नदियो की दो धाराएँ एक सी नही। एक ही जाति के दो वृक्ष एक से नही, उनकी दो टहनियाँ एक सी नही, दो पत्र एक से नही, दो पुष्प एक से नही, दो फल एक से नही, घास के दो अकुर एक से नही। एक ही जाति के दो पशु, दो पक्षी, दो कीट तक एक से नही, मनुष्यो मे भी एक माता से जन्मे हुए दो पुत्र, दो कन्याएँ एक सी नही।

**बलदेव :** हम दोनो के हृदय अवश्य एक से है।

**मोहन :** (**मुस्कराकर**) इसमे क्या सन्देह है ? नही तो क्या हम लोग सदा साथ रह सकते थे ? नेह नगर से तुम्ही साथ आये और कोई तो न आया। (कुछ

**ठहरकर)** फिर कोई भी वस्तु हरेक को प्रिय नही। यदि एक को एक वस्तु प्रिय है तो दूसरे को अप्रिय। एक जिस वस्तु का मान करता है, दूसरा उसी का अपमान। सर्व प्रिय और सर्व सम्मान्नित वस्तु ससार मे दृष्टिगोचर होती ही नही। कोई कहते है कि लक्ष्मी सब कुछ है, परन्तु अनेक ऐसे भी है जो उससे कही अधिक आदर गुणो का करते है। हमारे मन्त्री जी भी गुणो का ही पूजन करने वालों मे है। जिसमे कुछ भी गुण है, उसका आदर रूपसेन हृदय से करते है। मेरे सदृश अल्पज्ञ तक को मन्त्री जी ने इतने मानपूर्वक आश्रय दिया है।

**बलदेव :** इतना ही नही, अपना कार्य-भार तक तुम्हे सौपकर उन्होने सदा के लिए तीर्थाटन का निश्चय किया है।

**मोहन :** हाँ, मित्र, मन्त्री जी, शूरसेन जी के समान केवल धन का मान करने वाले नही है। लोग तो धन के पीछे अपनी आत्मजा तक को बेच देते है, पर हमारे मन्त्री जी वैसे नही।

**बलदेव :** तभी तो इतने धनवान कुमारो की माँग आने पर भी रूपवती के लिए वे किसी गुणज्ञ को ढूँढ रहे है।

**मोहन :** यही तो, बलदेव, प्रकृति वैषम्य है। यही ससार की विचित्रता है। और जैसे मन्त्री जी है वैसे ही अयोध्या नरेश भी

**बलदेव :** अब तो, मोहन, तुम विचित्रता के स्थान पर समानता

का प्रतिपादन करने लगे। यहाँ तो मै तुमसे सहमत नही हूँ। ससार मे ईश्वर ने समानता को केवल हम ेनो के हृदयो को ही दी है और किसी वस्तु को नही।

**मोहन :** (**मुस्कराकर**) हाँ, हाँ, भूल हुई। मेरे कहने का तात्पर्य इतना ही था कि राजा और मन्त्री दोनो ही प्रजा की ओर पूर्ण दृष्टि रखते है।

**बलदेव :** सो हो सकता है। पर इसका अर्थ यह नही हो सकता कि जैसे मन्त्री है वैसे अयोध्या-नरेश भी है। यह समानता तो केवल दो व्यक्तियो के लिए प्रयुक्त की जा सकती है कि जैसा मोहन है, वैसा ही बलदेव और जैसा बलदेव है, वैसा ही मोहन। ससार की इस विचित्रता के नियम मे केवल हम दो की समानता ही एक अपवाद है और इस अपवाद से उस नियम का प्रमाण मिलता है। यदि अनेक अपवाद हो जायँगे तो वह नियम ही असत्य हो जायगा।

**मोहन :** (**मुस्कराकर**) मान लेता हूँ।

**बलदेव :** (**कुछ ठहरकर**) कहो, मित्र, यहाँ आने से कुछ शान्ति मिली ? यहाँ से तो तीसरे पाठ का प्रारम्भ हुआ है।

**मोहन :** कुछ शान्ति तो अवश्य मिली। माता प्रमोदिनी के उपदेश पर अपने कर्त्तव्य-पालन का प्रण करने वाले को अनुकूल सामग्री यहाँ अवश्य प्राप्त है।

**बलदेव :** किन्तु फिर भी कालिन्दी का ध्यान मन से दूर नहीं होता, क्यो ?

**मोहन :** **(लम्बी साँस लेकर)** क्या कहूँ ?

**बलदेव :** जो कुछ भी हो; अब यहाँ से तो तीसरे पाठ का आरम्भ करना ही होगा।

**मोहन :** क्या इसका प्रयत्न नही कर रहा हूँ ? दिन और रात इसी प्रयत्न मे तल्लीन रहता हूँ। हृदय को माताजी के बताये हुए मार्ग की ओर, अटल शान्ति के मार्ग की ओर, लाने के लिए मैंने कौनसा यत्न उठा रखा है ? **(कुछ रुककर)** अच्छा चलो, सभा का समय होरहा है।

**[दोनों का प्रस्थान]**

**परदा उठता है।**

## चौथा दृश्य

स्थान शूरसेन के मकान मे कालिन्दी का कमरा

समय प्रात काल

**[कौमुदी के कमरे के सदृश यह कमरा भी है। कालिन्दी और उमा खड़ी है।]**

**कालिन्दी :** वे निकाल दिये गये, अपमानपूर्वक निकाल दिये गये! क्यो? **(उत्तेजना से)** इसीलिए न कि वे निर्धन है, पर, ऐसे निर्धन को अयोध्या के मन्त्री ने कैसे आश्रय दे दिया?

**उमा :** उनमे और शूरसेन जी मे बहुत अन्तर है, सखि।

**कालिन्दी :** ससार मे धन ही सुख का मूल समझा जाता है; परन्तु क्या यह सत्य है?

**उमा :** कहना कठिन है।

**कालिन्दी :** सर्वथा सरल, उमा। मेरा तो स्पष्ट मत है कि इस धन से उल्टा दु ख होता है, सुख नही।

**उमा :** कैसे?

**कालिन्दी .** दिनभर के कठिन परिश्रम के पश्चात् दरिद्री रात को सुखपूर्वक सो तो सकता है, पर धनवान वह भी

नही कर सकता। हाँ, धन से इन्द्रियो की तृप्ति, क्षणिक सुख अवश्य प्राप्त हो सकता है परन्तु क्या यही सच्चा सुख है ?

**उमा :** यह चाहे सच्चा सुख न हो, पर धन से सच्चे सुख भी मिल सकते है।

**कालिन्दी :** कदापि नही, सच्चा सुख है मेरे आराध्य देव के बतलाये हुए एक विश्व-प्रेम मे। उस सुख का वर्णन नही हो सकता, केवल अनुभव ही किया जा सकता है।

**उमा :** परन्तु क्या उस सुख के प्राप्त करने के लिए इस प्रकार के अधैर्य और विह्वलता से काम चलेगा ?

**कालिन्दी :** **(दीर्घ निःश्वास ले)** क्या कहूँ, उमा, हृदय को जब उनका स्मरण हो आता है तब उस पर साँप-सा लोट जाता है। इस धन पर ऐसा क्रोध आता है कि कहा नही जाता। फिर कुछ लोग कहते है धन से उपकार होता है पर मेरी समझ मे उससे उलटा अपकार होता है।

**उमा :** यह भी पूर्ण रीति से नही कहा जा सकता।

**कालिन्दी :** अवश्य कहा जा सकता है। जिस धन के मद से किसी का अपमान हो, जिस धन के कारण किसी हृदय पर आघात पहुँचे, वह उपकार का साधन कैसा ? इसी धन के कारण अनेक हृदयो पर चोट पहुँचती है। अनेक हृदय टूक-टूक हो जाते है ! **(जोर से)** धन ! ओह ! जिस धन के कारण ही मुझे सच्चे

सुख का मार्ग बताने वाले मेरे हृदयेश का अपमान हुआ, वह सुख और उपकार की जड ! ऐसे धन को तो सौ बार, लाख बार, करोड बार धिक्कार है !

**[नेपथ्य मे गाना होता है। कालिन्दी और उमा ध्यान से सुनती है।]**

**(राग भैरवी)**

इस द्रव्य से बढ कर जगत उपकार करने के लिए,
है दीख पडती भूमि पर तो वस्तु कोई भी नही।
साहित्य-सेवा, अतिथि-सेवा, रुग्ण शुश्रूषा तथा,
करना जहाँ चाहो तुम्हे धन चाहना होगा वही।
शुभ दान पुरुषादिक सभी इस द्रव्य के परिणाम है,
धन के बिना शुभ कार्य ये जग मे न हो सकते कही।
धनवान होना है अहो ! फल पूर्व सचित पुण्य का,
सारी जगत-शुभ कामनाएँ पूर्ण इस से हो रही।

**कालिन्दी : (गान पूर्ण होने पर कुछ क्रोध से)** यह लो, यहाँ भी धन की ही महिमा गायी जा रही है। सखि, बुला तो इसे, यह कौन है। मै एक क्षण मे इसकी आँखे खोल दूंगी।

**[उमा का प्रस्थान और प्रमोदिनी के साथ प्रवेश।]**

**कालिन्दी : (हाथ जोड़ और सिर झुकाकर)** सन्यासिनी जी, प्रणाम।

**प्रमोदिनी : (हाथ उठाकर)** कल्याण हो।

**कालिन्दी : (हाथ जोड़े हुए)** क्षमा कीजिए, भगवती, मैने आप को कष्ट दिया, किन्तु आपका गाना सुनकर मुझसे

न रहा गया, इसलिए कष्ट देना पडा ।

**प्रमोदिनी :** नही, बेटी, इसमे कष्ट देने की क्या बात है? कदाचित् धन की महिमा का गान तुझे अच्छा नही लगा ।

**कालिन्दी :** **(अचम्भे से)** आप तो सर्वज्ञ जान पडती है । यही बात मेरे हृदय मे उठी थी, माता जी ।

**प्रमोदिनी :** किन्तु, बेटी, यह बात तेरे हृदय मे अनुचित उठी ।

**कालिन्दी :** **(उत्सुकता से)** कैसे ?

**प्रमोदिनी :** ससार मे इस प्रकार की अनेक वस्तुएँ है जिनका उपयोग दो प्रकार से हो सकता है ।

**कालिन्दी :** किस प्रकार ?

**प्रमोदिनी :** अच्छे मार्ग से, और बुरे मार्ग से । अतएव तू ही बता, बुरा उपयोग बुरा कहा जा सकता है या वह वस्तु बुरी कही जा सकती है जिसका उपयोग बुरे प्रकार से किया जाता है ।

**कालिन्दी :** बुरा उपयोग बुरा कहा जायगा, वस्तु नही ।

प्रमोदिनी : बस, बेटी, यही बात धन की भी है। यह धन अच्छे से अच्छे मार्ग मे भी लगाया जा सकता है, और बुरे-से-बुरे मार्ग मे भी । फिर धन को धिक्कारना उचित नही।

**कालिन्दी :** **(शान्ति से)** ठीक है, माता जी, आपने मेरे अन्त -करण के एक बडे अन्धकार को दूर कर दिया । इस बात को जानते हुए भी कि इन वस्तुओ का उपयोग अच्छे और बुरे दोनो मार्गो से हो सकता है इन दिनो मै भारी भ्रम मे पड गयी थी ।

**प्रमोदिनी :** उत्तेजना विवेक को सदा नष्ट कर देती है, बेटी; उत्तेजना मे साधारण बात का भी ज्ञान नही रह जाता।

**उमा :** आप ठीक कहती है, माता जी, इस समय इनकी यही दशा थी। यह तो हर्ष की बात है कि आपने उपदेश देकर इनका भ्रम दूर कर दिया। ये तो सारी धन-सम्पत्ति छोड देने पर उद्यत थी।

**प्रमोदिनी :** मैने तो कोई बडा भारी उपदेश नही दिया, बेटी, ऐसे अवसरो पर कभी-कभी साधारण-सी बात भी बडा भारी कार्य कर डालती है।

**कालिन्दी :** अच्छा, माता, अब जिस प्रकार दया कर आपने क्षण मात्र ही मे मेरे हृदय के अन्धकार को दूर किया है उसी प्रकार कृपा कर अब कोई ऐसा मार्ग बताइए, जिससे, इस धन द्वारा, मै समाज की सेवा भी कर सकूँ।

**प्रमोदिनी :** बेटी, तुझे सेवा करना क्या बताया जाय ? यह तेरी ही सेवा का फल है कि इस ग्राम मे भूखो का आर्त-नाद नही सुनायी देता और रोगियो की उचित शुश्रूषा होती है। अनाथ बालक भी सनाथवत रहते है और विधवाओ को भी किसी प्रकार का त्रास नही उठाना पडता। यदि और भी अधिक सेवा करने का विचार है तो बालिकाओ के लिए एक कुमारिकाश्रम की स्थापना कर, जहाँ उनकी शिक्षा

की व्यवस्था हो।

**कालिन्दी :** जो आज्ञा, परन्तु इसका सब प्रबन्ध कृपा कर आप को ही करना होगा।

**प्रमोदिनी :** तथास्तु।

**परदा गिरता है।**

## पाँचवाँ दृश्य

स्थान शूरसेन के मकान की दालान

समय सन्ध्या

[**शूरसेन और उनके पीछे भोलानाथ का प्रवेश। वे टहल-टहलकर बाते करते है।**]

**शूरसेन** लोग क्या-क्या कहते है, सुना है, भोलानाथ ? कल एक जमीदार कहते थे कि पहले बडे घरो की बहू-बेटियाँ घर से बाहर निकलने मे भी लज्जा करती थी, पर अब तो उन्होने निर्लज्जता की साड़ी पहन ली है। यह ताना कालिन्दी के लिए ही था ?

**भोलानाथ** : निःसन्देह, श्रीमान्।

**शूरसेन** : भोलानाथ, कालिन्दी का घर-घर घूमते फिरना, चम्हारों और महतरो तक के घर जाना, सचमुच मेरे कुल के लिए अत्यन्त अप्रतिष्ठा की बात है।

**भोलानाथ** : नि. सन्देह, श्रीमान्।

**शूरसेन** : पडोसियोतक से उसकीस्वच्छन्दता नही देखी जाती, नित्यही कोई न कोई बात कानो तक पहुँचती है। अब कुमारिकाश्रम स्थापित हुआ है।

**शूरसेन :** तुमने उस मोहन का भी कुछ वृत्तान्त सुना है ?

**भोलानाथ :** नि सन्देह, श्रीमान्, सुना है। उसे अयोध्या के मन्त्री ने आश्रय दिया है।

**शूरसेन :** नही नही, केवल इतना ही नही, सुना है, मन्त्री तीर्थाटन को चले गये है और अब वही मन्त्री भी है।

**भोलानाथ :** अच्छा !

**शूरसेन :** अयोध्या के कोष को भी उसने उडाना आरम्भ कर दिया है।

**भोलानाथ :** कैसा, श्रीमान् ?

**शूरसेन :** कही धर्मशाला, कही पाठशाला, कही दरिद्रशाला कही कुछ, और कही कुछ बनवा रहा है।

**भोलानाथ** **(सिर हिलाकर आश्चर्य से)** हाँ !

**शूरसेन .** यदि यही दशा रही तो कुछ दिनों मे अयोध्या-नरेश अवश्य भिखारी हो जायँगे।

**भोलानाथ .** नि सन्देह हो जायँगे, श्रीमान्।

**शूरसेन :** देखो तो, वह राजा कितना मूर्ख है कि स्वय ही अपनी जड़ कटवा रहा है।

**भोलानाथ :** निःसन्देह, मूर्खों के कोई सीग थोडे ही होते है, श्रीमान्।

**शूरसेन :** भाई, मेरे साथियो के कथनानुसार मेरा सिद्धान्त तो यह बन गया है कि जिसे ईश्वर ने ही दरिद्री बनाया है, रोगी बनाया है, उसकी सहायता करना ईश्वर की अवज्ञा करना है। फिर कर्मों की गति को

कौन टाल सकता है।

**भोलानाथ** नि सन्देह, श्रीमान्, कर्मो की गति को कौन टाल सकता है ?

**शूरसेन** अत यदि तुम इस जन्म मे उन्हे सहायता दोगे और तुम्हारी सहायता से उनका कल्याण भी हो गया तो फिर अपने पूर्वकृत पापो का फल भोगने उन्हे उसी प्रकार का दूसरा कष्टमय जन्म ग्रहण करना पडेगा।

**भोलानाथ** नि·सन्देह, श्रीमान्।

**शूरसेन** और इस प्रकार उनको सहायता कर उनके कष्ट-निवारण के स्थान पर तुम उनके कष्ट बढाने के कारण होगे।

**भोलानाथ** निःसन्देह, श्रीमान्।

**शूरसेन** और फिर एक बात और।

**भोलानाथ** नि सन्देह एक बात और।

**शूरसेन** इस प्रकार ईश्वर की अवज्ञा कर जो कर्म तुम करोगे उसका बुरा फल तुम्हे अगले जन्म मे भोगना पडेगा।

**भोलानाथ** नि सन्देह, निःसन्देह, श्रीमान्।

**शूरसेन** इस प्रकार, भोलानाथ, अयोध्या नरेश और वह मोहन तथा यहाँ यह कालिन्दी घोर पाप-कर्म मे प्रवृत्त है।

**भोलानाथ** नि सन्देह, श्रीमान्।

**शूरसेन** हाँ, एक आश्चर्यजनक बात तुमने और सुनी ?

**भोलानाथ :** वह क्या, श्रीमान् ?

**शूरसेन :** अयोध्या के मूर्ख मन्त्री ने अपनी सम्पत्ति और अपनी पुत्री रूपवती के लिए एक वसीयत लिखी है।

**भोलानाथ :** अच्छा !

**शूरसेन :** वसीयत का बन्द लिफाफा मोहन को दिया है।

**भोलानाथ :** और उस वसीयत मे क्या लिखा है, श्रीमान् ?

**शूरसेन :** वह लिफाफा खुला नही है। रूपसेन ने एक वर्ष पश्चात् उसे खोलने का आदेश किया है। आश्चर्य तो यह है कि एक अनजान मनुष्य पर इतना भरोसा !

**भोलानाथ :** नि सन्देह आश्चर्य की बात है, और मूर्खता की भी सीमा, श्रीमान् ! फिर ऐसे उस मोहन पर इतना भरोसा जिसे आपने अपने यहाँ से निकाल दिया था।

**शूरसेन :** क्या कहूँ, भाई, आजकल जो न हो सो थोडा है। **(लम्बी साँस लेकर)** समय ही टेढ़ा है ! अब तो ईश्वर शीघ्र बुला ले तो अच्छा।

**भोलानाथ :** नि सन्देह, श्रीमान् ! **(चौंककर)** नही नही, राम राम राम, श्रीमान् आप यह क्या कहते है ?

**शूरसेन :** क्या कहूँ, भाई, यह सब देखा नही जाता। **(लम्बी साँस छोड़ता है।)**

**परदा गिरता है।**

## छठवाँ दृश्य

स्थान  अयोध्या का मार्ग

समय  सन्ध्या

**[चार नगरवासी आते है । ]**

**एक :** न जाने, भाई, किस पाप से प्रजा पर यह भयानक ईश्वरीय कोप हुआ है ।

**दूसरा :** हॉ, भाई, सारे राज्य मे घोर अकाल और फिर अयोध्या मे तो गत दस दिनो से इस हैजे ने अनर्थ कर रक्खा है ।

**तीसरा :** राज्य ही मे क्या, राज्य के बाहर भी दूर-दूर तक अकाल की यही दशा है ।

**चौथा :** यह तो, भाई, नये मन्त्रीजी की दयालुता और कार्य-परायणता का फल है कि प्रजा को इस समय भी इतनी सुविधा मिल रही है ।

**पहला :** इसमे सन्देह नही, उन्ही के कारण स्थान-स्थान पर अन्न-सत्र खुले है, पहले किसी दुष्काल मे ऐसा नही था ।

**दूसरा :** फिर वैद्य, औषधियो के साथ नगर मे दिन भर चक्कर

लगा रहे है; ऐसा औषधि प्रबन्ध भी पहले कभी नही हुआ ।

**तीसरा :** और यही नही कि जिन्हे उन्होने अन्न-सत्र और चिकित्सा-कार्य पर नियुक्त किया है उन्ही पर सारा भार छोड़ दिया हो ।

**चौथा :** हाँ, हाँ, उनका भी प्रात काल से सायकाल तक का समय मुहल्ले-मुहल्ले और घर-घर घूमते बीतता है।

**पहला :** और रात्रि को ? रात्रि को भी उन्हे विश्राम कहाँ ?

**दूसरा :** विश्राम का तो नाम ही न लो; खाने-पीने और शयन तक की उन्हे सुधि नही है ।

**तीसरा :** और, भाई, रूपवती क्या कम सेवा करती है ?

**चौथा :** सचमुच स्त्रियो की रक्षा तो वही कर रही है ।

**पहला :** महाराज भी अपना कर्त्तव्य करने मे एक डग भी पीछे नही हटते ।

**दूसरा :** हाँ, स्वय नगर भर मे घूमते है ।

**तीसरा** कोष भी खुलवा दिया है ।

**चौथा :** और समस्त राज्य-कर्मचारी इस समय तो प्रजा की इसी सेवा के लिए नियुक्त है ।

**पहला :** भाई, राजा का कर्त्तव्य प्रजा की सेवा ही है। जो राजा प्रजा की सेवा तन, मन, धन से नही करता वह नरक का अधिकारी होता है। तुलसीदास जी ने कहा है — जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ।
सो नृप अवसि नरक अधिकारी ।।

**दूसरा :** और, देखो तो, स्वयंसेवक भी कैसा अच्छा कार्य कर रहे है।

[**घबराये हुए एक नगरवासी का प्रवेश।**]

**आगन्तुक :** (**भर्राये हुए शब्द से**) अजी तुम लोगो ने सुना भी ? मन्त्री जी का स्वास्थ्य एकाएक बिगड़ गया है। उन पर भी भयानक रूप से हैजे ने आक्रमण किया है।

**पहला :** (**आश्चर्य और दुःख से**) ऐ ! यह क्या! प्रात काल तो वे घूम रहे थे।

**दूसरा :** (**उसी स्वर मे**) मैने तो उन्हे दस बजे कई स्वय सेवको के सहित जाते देखा था।

**आगन्तुक :** मुझे अभी-अभी सूचना मिली। मै उनके घर जाकर भी पूछ आया हूँ। बात सत्य है। ईश्वर उनकी रक्षा करे।

**पहला :** (**ऊपर देखकर**) हे दयामय ! अवश्य उन्हे नीरोग कीजिए, नही तो अयोध्या राज्य की क्या दशा होगी ।

**दूसरा :** हाय ! हाय ! हम लोग तो अनाथ हो जायँगे।

**तीसरा :** लाख मरे, पर लाख का पालने वाला न मरे।

**चौथा :** चलो, भाई, चले, हम लोग देखे वे कैसे है ?

**पहला :** हाँ, भाई, हम लोगो की रक्षा के लिए उन्होने अपने प्राण सकट मे डाले हैं।

[**सब का प्रस्थान**]

**परदा उठता है।**

## सातवा दृश्य

स्थान रूपसेन के मकान का कमरा

समय मध्याह्न

[सुन्दर सजा हुआ कमरा है। नारंगी तैल रंग से पुता हुआ है, जिस पर अनेक रग के बेलबूटे बने हुए है। श्रीरामपंचायतन, अयोध्या-नरेश, रूपसेन और अयोध्या के दृश्यो के चित्र दीवालो पर लगे है। छत सागौन के पटियो से पटी है और वह भी इसी रग से रंगी है। नारगी रंग के झाड़, फानूस, हंडी, गोले लटक रहे है। जमीन पर उसी रंग का रेशमी गालीचा है, जिस पर बेल-बूटे है। बायी ओर चाँदी के पायों के पलँग पर मोहन लेटा है। पास ही से एक कुर्सी पर रूपवती, और दूसरी पर वैद्य उपस्थित है। रूपवती लगभग सत्रह वर्ष की गोरी, ऊँची, गठे हुए शरीर की अत्यन्त सुन्दर युवती है। मुख और शरीर साँचे से ढले जान पड़ते है। बनारसी रेशम की जरीदार साड़ी और चोली पहने है। आभूषण सब हीरे और मोती के है।]

मोहन : (क्षीण स्वर से, वैद्यराज से) सात दिन तो हो चुके अब मुझे स्वस्थ होने मे और कितना समय लगेगा, महाराज ?

**वैद्य :** अब बहुत शीघ्र नीरोग हो जायँगे, श्रीमान् ।

**मोहन** यह तो भाग्य की बात है। ईश्वर को इस समय मुझ से सेवा लेना स्वीकार न था।

[**स्वयंसेवकों के अध्यक्ष का प्रवेश।**]

**मोहन** · (**क्षीण स्वर मे अध्यक्ष से**) कहिए, महाशय, अब नगर की क्या दशा है ?

**अध्यक्ष** . आप अधिक चिन्तित न हों। स्वय अयोध्या नरेश सब काम देख रहे है। और स्त्रियों की रक्षा तो (**रूपवती की ओर संकेत कर**) इन्होंने ही की है । बल्देव जी ने इतना कार्य किया है, कि उसका वर्णन नही हो सकता, इस समय भी वे कार्य मे लगे है। हैजे का उपद्रव कम है, किन्तु अन्न-सत्रो मे अब प्राय· कुछ भी अन्न शेष नही बचा।

**मोहन :** आज प्रमोदिनी माता के अन्न लाने की अवधि भी पूरी होती है।

[**रसोइये का पथ्य लेकर प्रवेश।**]

**वैद्य :** अब विलम्ब न कीजिए, श्रीमान्, पथ्य का समय हो गया, आज पहला दिन है, इसलिए आयुर्वेद की आज्ञा के अनुसार ठीक समय पर पथ्य हो जाना चाहिए।

**मोहन :** जो आज्ञा।

[**दो सेवक मोहन को उठाते है। रसोइया थाली लेकर आगे आता है। नेपथ्य में एक स्त्री का करुण शब्द होता है— "हाय**

**मेरे दोनों बच्चे भूख के मारे तड़प रहे है ! अरे ! कोई तो इन्हे बचाओ!"**]

**मोहन :** (**उस ओर कान लगाकर**) है ! यह कैस करुणोत्पादक शब्द ? (**रसोइये से**) महाराजा, पहले उन बालकों के लिए खाने को कुछ ले जाइए।

**रसोइया :** श्रीमान्,इससे अधिक भोजन अभी तैयार नही किया है। बालको के लिए अभी और तैयार करके ले जाता हूँ।

[**नेपथ्य मे "भूख के मारे बालकों के प्राण निकलना चाहते है। हे भगवन् ! कोई भी नहीं सुनता !"**]

**मोहन :** मै सुनता हूँ। जाओ, यह भोजन ले जाकर बालको को दो। मै अभी पथ्य न लूँगा।

**वैद्य :** यह नही हो सकता, श्रीमान्, आपको पथ्य अभी लेना ही होगा। ठीक समय पर पथ्य न लेने से स्वास्थ्य फिर बिगडेगा।

**मोहन :** (**जल्दी से उत्तेजित होकर**) नही नही, यह कदापि नही हो सकता। मेरे द्वार पर दो बालक प्राण विसर्जन करे, और मै पथ्य लूँ, यह सम्भव नही। (**रूपवती से**) रूप, तुम शीघ्र ही इस अन्न को ले जाकर उन बालको की रक्षा करो।

[**रूपवती रो पड़ती है।**]

**मोहन :** (**सिर उठाकर सबकी ओर बारी-बारी से देखकर**) तो क्या मुझे ही उन बालको को खिलाने के लिए

जाना पडेगा। (**साहस कर उठ खड़ा होता है, किंतु निर्बलता के कारण चक्कर आता है, और पुनः गिरने लगता है। रूपवती और वैद्यराज सम्हालते हैं।**)

**यवनिका**

# तीसरा अंक

## पहला दृश्य

स्थान शूरसेन के मकान की दालान

समय सन्ध्या

[**शूरसेन और भोलानाथ टहल रहे है ।**]

**शूरसेन :** चलो, किसी प्रकार अकाल तो मिटा।

**भोलानाथ :** नि.सन्देह, श्रीमान्, नही तो बडा अनर्थ हो जाता ।

**शूरसेन :** मुझे तो इसी की चिन्ता थी कि अयोध्या के सदृश यहाँ भी हैजा न फैल जावे ।

**भोलानाथ :** नि.सन्देह, श्रीमान्, नही तो न जाने क्या होता ।

**शूरसेन :** (हाथ हिलाकर) भाई, सबसे अधिक चिन्ता तो कालिन्दी की थी ।

**भोलानाथ :** नि सन्देह, श्रीमान् ।

**शूरसेन :** न जाने उस मोहन ने इसका हृदय कैसा बना दिया है।

**भोलानाथ :** नि:सन्देह, बहुत बुरा, श्रीमान् ।

**शूरसेन :** देखो न, जब तक यहाँ अकाल रहा, और राज्य की ओर से अन्न-सत्र खुला रहा, तब तक इसने एक क्षण को भी विश्राम न लिया ।

**भोलानाथ :** नि.सन्देह, श्रीमान्, सोई तक नही।

**शूरसेन :** हर दिन ही उसका कोई न कोई नया सम्वाद आता था।

**भोलानाथ :** नि सन्देह, श्रीमान्, हर दिन क्या हर क्षण कुछ न कुछ सुन पडता था।

**शूरसेन :** मुझे तो इस पर आश्चर्य हो रहा है कि जब राजा स्वयं प्रबन्ध कर रहा था, तब यह लडकी क्यो बीच मे ही कूदी पडती थी।

**भोलानाथ :** निःसन्देह, श्रीमान्, क्या कहूँ ? यह बडी भारी मूर्खता थी।

**शूरसेन :** अयोध्या-नरेश के व्यय का जो वृत्त सुना है, उससे तो जान पडता है कि कोप मे अब कौडी भी न बची होगी।

**भोलानाथ :** नि.सन्देह, श्रीमान्, फूटी कौडी भी नही और मेरा तो अनुमान है कि अयोध्या-नरेश को ऋण लेना पड़ा होगा।

**शूरसेन :** तुम निश्चय जानो कि यदि वह मोहन राज्य मे रहा तो अयोध्या-नरेश को भीख न माँगना पडे, तो मेरा नाम शूरसेन नही।

**भोलानाथ :** नि.सन्देह, श्रीमान्, यह तो होना ही है।

**शूरसेन :** तुमने एक बात और भी सुनी है ?

**भोलानाथ :** वह क्या, श्रीमान् ?

**शूरसेन :** जो कुमारिकाश्रम खुला है उसका वार्षिकोत्सव होने

वाला है।

**भोलानाथ :** यहाँ के कुमारिकाश्रम का ?

**शूरसेन :** हाँ, यही के तो।

**भोलानाथ :** तब तो नि सन्देह बड़ा आनन्द होगा।

**शूरसेन :** **(खीझकर)** आनन्द क्या, धूल होगा ! मै तो मरा जाता हूँ, तुम्हे आनन्द होगा।

**भोलानाथ :** **(सिटपिटाकर)** नि नि: नि सन्देह, भ भ भूल गया, श्रीमान् ! यह कहता था, कि बडा निरानन्द होगा। नि सन्देह जीभ फिसल पडी।

**[रुष्ट शूरसेन का भोलानाथ को घूरते हुए प्रस्थान। नीची दृष्टि किये हुए धीरे-धीरे भोलानाथ भी जाता है।]**

**परदा उठता है।**

## दूसरा दृश्य

स्थान कुमारिकाश्रम

समय प्रात काल

[दूर पर सरयू बह रही है, जिसकी लहरों को उदय होते सूर्य की किरणे चमका रही हैं। आम्र वृक्षों की घनी छाया मे बॉयी ओर लता से छाया हुआ लम्बा गृह बना है। पुष्पों, तुलसी और मरुआ दोनों के गमले बाहर सुसज्जित हैं। दाहिनी ओर छोटासा दुर्गाजी का मन्दिर है, जिसमे दुर्गाजी की मूर्त्ति है। मन्दिर के बाहर बालिकाएँ हाथ जोड़े दुर्गा की स्तुति कर रही हैं। सभी बालिकाएँ गुलाबी रग की साड़ियाँ और उसी रंग के पोलके पहने हैं। कौमुदी और उमा बायीं ओर के मकान के बाहर खड़ी हुई स्तुति सुन रही है।]

**(राग बसन्त)**

हे अपार, अति उदार, दयागार हे; विनती यह बार बार,
दु.ख टार हे।

जहाँ एकता-स्वरूप, लेकर तूने अनूप, प्रकट किया प्रेम-रूप,
डूल रहा वही आज, फूट वैर से समाज, करुणाकर अब सम्हाल,
लगा पार हे।

धार शारदा-शरीर, शिक्षा का जहाँ नीर, बरसाया था गभीर;
सौ मे से अहो वही, शिक्षित दस भी नही, लज्जा यह तो महान्,
अनिवार है।
लिया अन्नपूर्ण वेष, किया अन्नपूर्ण देश, न था जहाँ दु ख क्लेश,
वही आज पडे काल, ध्वंस करे क्षुधा-ज्वाल, सुनो सुनो मात सुनो,
दुख पुकार है।

[**बालिकाओं का प्रस्थान।**]

**उमा :** कैसा गान था, कौमुदी ?

**कौमुदी :** मेरी तो तनिक भी समझ मे न आया कि ये गाती थी या बडबडाती थी, बार-बार क्या कहती थी— अपार अति उदार दयागार। विनती यह बार-बार दु ख टार। इसके पश्चात् फिर, लगा पार, आ निवार, दुख पुकार, और भी न जाने क्या क्या। कैसी अपार, उदार, दयागार। कैसी विनती बार-बार, कैसा दु.ख टार और फिर कैसा लगा पार, आ निवार, दुख पुकार।

**उमा : (हँसकर)** दुर्गाजी की स्तुति थी, बहन।

**कौमुदी :** ओ हो ! यदि दुर्गा की स्तुति करनी थी तो सप्त-शती सीखती।

**उमा :** वह तो बहुत पुरानी हो गयी। उसमे वर्तमान, सामाजिक सुधारो की प्रार्थना कहाँ है ?

**कौमुदी :** परन्तु जब तक सृष्टि मे तुम्हारे जैसे प्राणियो की उत्पत्ति होगी तब तक बेचारी दुर्गाजी क्या सुधार

करेगी ? दुर्गाजी सुधारने वाली एक, और बिगाडने वाली तुम सहस्रो। तुम्ही लोगो ने तो पुरानी रीतियो की अवहेलना कर-करके सब चौपट कर दिया। इसीलिए, बहन इस कुमारिकाश्रम की बडी प्रशसा किया करती है। यहाँ भी लडकियो को गाना सिखाया जाता है। ये बेचारी छोटी-छोटी सी लड़कियाँ बिगडकर बहन के समान ही सत्यानाश हो जायँगी। जान पडता है, इन लडकियो का घर-द्वार कुछ नही, नही तो कोई इन्हे यहाँ काहे को भेजता।

**उमा :** इसके पहले क्या तुमने यह आश्रम नही देखा था ?

**कौमुदी :** कभी नही। कई बार बहन ने कहा इसलिए आ गयी। ईश्वर न करे, फिर कभी यहाँ आने का काम पड़े। यहाँ का सब वृत्तान्त भी चाचाजी से कहना है।

[**कौमुदी का प्रस्थान। कालिन्दी का प्रवेश।**]

**कालिदी :** अच्छा कौमुदी चली भी गयी ?

**उमा :** हाँ, अभी गयी है। और कह गयी है कि चाचाजी से यहाँ का सब वृत्त कहेगी।

**कालिदी .** इच्छा उसकी। पर तुम उसकी इतनी चिन्ता क्यो करती हो ? (**कुछ ठहरकर**) सखी, अकाल और हैजे मे उनकी लोक-सेवा का वृत्तान्त सुना ?

**उमा :** सुना; बहन, वे साधारण मनुष्य नही है।

**कालिदी :** तुमने कदाचित् उस दिन का वृत्तान्त न सुना होगा

जब बीमारी के पश्चात् उन्हे पथ्य दिया जाने वाला था।

**उमा :** मै सब सुन चुकी हूँ। मैने कहा न कि वे साधारण मनुष्य नही है।

**कालिदी :** और, देखो तो केवल अयोध्या ही नही, सारे राज्य और जहाँ तक हो सका उसके बाहर जहाँ-जहाँ अकाल था, उन्होने कैसा अच्छा प्रबन्ध किया था। अपने ही गाँव मे कितना अच्छा प्रबन्ध था।

**उमा :** अपने यहाँ के प्रबन्ध का श्रेय तो तुम्हे भी कुछ कम नही है।

**कालिदी :** नही, बहन, यदि उनकी सहायता न होती तो ऐसा सुप्रबन्ध कभी सम्भव ही न था।

**उमा :** **(कुछ ठहरकर)** हाँ, मैने सुना है कि प्रमोदिनी जी उन्हे अपने कुमारिकाश्रम के वार्षिकोत्सव मे आमन्त्रित करने वाली है।

**कालिदी :** हाँ, वे कहती तो थी; परन्तु मुझे तो उनके आने की बहुत कम आशा है।

**उमा :** क्यो ?

**कालिदी :** क्या वे उस दिन का पिता जी द्वारा किया हुआ अपमान भूल गये होगे ?

**उमा** उनके लिए कुछ भी असम्भव नही। उनकी प्रकृति देवताओ की सी है। **(कुछ ठहरकर)** भला, सखी, उत्सव मे क्या-क्या होगा ?

**कालिंदी :** अभी पूरा कार्यक्रम तो नही बना, परन्तु कुछ शिक्षा-प्रद व्याख्यानो के अनन्तर आश्रम की बालिकाओ द्वारा एक नाटक का अभिनय कराया जाय यह भी सोचा जा रहा है।

**उमा :** नाटक का विषय और नाम क्या है ?

**कालिंदी :** नाटक का नाम 'वर्तमान' है और विषय भी 'वर्तमान' होगा।

**उमा :** यथार्थ मे वह दिन बडे आनन्द का होगा। सचमुच तुमने बड़ा उत्तम कार्य किया।

**कालिंदी :** (**एक दीर्घ साँस लेकर**) उत्तम कार्य भी किसी को अप्रिय हो सकता है, यह कभी न सोचा था।

**उमा :** किन्तु, सखी, तुम्हे इसका दु ख न करना चाहिए। ससार मे अच्छे से अच्छा कार्य भी सबको प्रिय नही होता, और बुरे से बुरे कार्य को भी सब बुरा नही कहते।

**कालिंदी** ठीक है, बहन, पर यह हृदय तो नही मानता। जब पिता जी ही इस कार्य को बुरा और सामाजिक दृष्टि से निन्दनीय समझते है, तब फिर हो चुका।

**(एक दीर्घ साँस लेती है।)**

**परदा गिरता है।**

## तीसरा दृश्य

स्थान  रूपसेन के मकान की दालान

समय  प्रात काल

**[रूपवती और रेवती का प्रवेश। रेवती लगभग पन्द्रह वर्ष की गोरी, सुन्दर बालिका है, जो तरुणाई की ओर जा रही है। बैगनी रेशमी साड़ी और पोलका पहने है। आभूषण स्वर्ण के है।]**

**रूपवती :** तुझे इच्छित वर प्राप्त होगा इस कारण तू तो बड़ी प्रसन्न मुख दिखायी देती है रेवती ! मुझ से हृदय के भाव छिपाना चाहती है, पर उनका प्रतिबिम्ब तो तेरे कपोलो और मुस्कुराते हुए अधरो पर स्पष्ट झलक रहा है।

**रेवती . (खीझकर)** मानोगी नही, तग ही करती जाओगी। कितनी देर से तग कर रही हो ? मुझे ही क्यो तग करती हो ? तुम्हारे विवाह के सम्बन्ध मे जो पत्र चाचा जी लिख गये है, उसके खोलने का दिन भी तो आज ही है। आज ही वर्ष पूर्ण हुआ है। तुम्हारा हृदय भी तो अपने भाग्य का निर्णय जानने के लिए

उत्सुक हो रहा होगा।

**रूपवती :** **(उत्तेजित होकर)** क्या मुझे मेरा मोहन–**(एकाएक सम्हलकर)** ओह! मुझे अधिकार नही कि मैं उन्हे इस प्रकार अपना समझूँ। सखि, किसी की ओर लालच भरी दृष्टि से देखना मुझे उचित नही है। वे गुणवान् है, सुन्दर है, सभो प्रकार से श्रेष्ठ है, किन्तु वे किस बड़भागिनी को सौभाग्य के दाम्पत्य-सुख से पूर्ण करेगे, कौन पुण्यवती रमणी अपने पूर्व-सचित पुण्यो के फलस्वरूप उनको पायगी, यह अभी भविष्य के गर्भ मे है। यह मन न जाने क्यो बार-बार प्रेमोन्मत्त होकर उनकी ओर दौडता है? अपने स्वार्थ के वश यह विकल हुआ जाता है। पर इसके भाग्य का निर्णय तो पिता जी का पत्र करेगा।

[**मोहन का प्रवेश। रेवती का शीघ्रता से प्रस्थान।**]

**मोहन** . क्यो, रूप, क्या सोच रही हो? तुम्हारे मुख को देख कर मै कह सकता हूँ कि इस समय तुम किसी गम्भीर विचार मे निमग्न हो।

**रूपवती :** **(धीरे स्वर से)** कुछ तो नही; पिता जी का स्मरण हो आया था।

**मोहन :** **(उत्सुकता से)** अच्छा स्मरण दिलाया, रूप। आज उनके पत्र को देखने की अवधि भी समाप्त होती है न ?

[**मोहन का प्रस्थान। रूपवती उत्सुकता से टहलती है।**

**मोहन का एक छोटा-सा सन्दूक लिये हुए प्रवेश। बैठकर सन्दूक खोलता है और पत्र निकालकर पढ़ता है। पढ़कर पत्र सन्दूक पर रख देता है और विचारमग्न हो जाता है। रूपवती चुपचाप पत्र उठाकर पढ़ती है और उसे वही रखकर मुस्कराती हुई जल्दी से चली जाती है। बल्देव का प्रवेश।]**

**मोहन** (**सचेत हो चारों ओर देखकर धीरे स्वर से बल्देव से**) बल्देव, रूप चली गयी ?

**बल्देव :** जब मै यहाँ आया तब तो यहाँ कोई न था। तुम्ही विचार और चिन्तामग्न बैठे थे।

**मोहन** (**लम्बी साँस लेकर**) जानते हो विचार और चिन्ता का कारण ?

**बल्देव .** क्या ?

**मोहन** (**रूपसेन का पत्र सन्दूक मे बन्द कर सन्दूक उठा खड़े होते हुए**) रूपसेन जी लिख गये है कि उनकी सारी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी मै और मेरा विवाह-सम्बन्ध रूप के साथ।

**बल्देव :** तब तो यहाँ से चौथे पाठ का आरम्भ होता है।

**मोहन :** (**लम्बी साँस लेते हुए**) बल्देव, यह मन बडा स्वार्थी है। रूपवती एक अनुपम सुन्दरी है सही, किन्तु इस समय इस पत्र को पढकर इस मन को पहले की अपेक्षा उसमे कही अधिक सौन्दर्य दिखायी देने लगा है। यह उस सौन्दर्य की ओर विवश होकर मुझे खीचता-सा प्रतीत होता है।

**बल्देव :** तब फिर देर क्यो, मित्र ? रेवती से मेरा विवाह निश्चित किया है, रूपवती से तुम कर डालो।

**मोहन :** (**आश्चर्य से**) क्या कहते हो, मित्र? पागल तो नही हो गये ? मै इस मन के बहकाने मे आनेवाला नही। धर्म और विवेक जो आज्ञा देगे, वही मुझे शिरोधार्य होगी।

**बल्देव :** धर्म और विवेक का इसमे प्रश्न कहॉ उठता है ? रूपसेन जी की आज्ञा न मानोगे ?

**मोहन :** कैसे नही उठता, हर वस्तु और कार्य मे इनका प्रश्न उठता है। धर्म कहता है कि यदि पाप के मार्ग पर पॉव न पडे तो रूपसेन जी की आज्ञा, विशेषतया उनकी अन्तिम आज्ञा, मानना मुझे परमोचित है, किन्तु कालिन्दी को दिये हुए पहले वचनो को पूर्ण न करना महा पाप है। अत रूपसेन जी का आज्ञा पालन करने के कारण कालिन्दी के समक्ष मुझे वचन-भग होने का पाप लगता है इसलिए विवेक मुझे यही आज्ञा देता है कि मै अनिष्टकारी मन का कहना न मानूं। मेरे पास रहकर मन स्वेच्छाचारी नही हो सकता।

[**नेपथ्य मे गायन होता है। मोहन और बल्देव का ध्यान आकर्षित होता है।**]

**(राग असावरी)**

प्रबल शत्रु मन ही है जग मे मन को जीतहु प्यारे।
जाने यह मन विजित कियो है कारज सकल सँवारे।।
ऋषि मुनि की अति कठिन तपस्या, भजन, भक्ति भक्तन की।
सफल होत तब ही जब ये सब टरत न मन सो टारे।।
रन विजयी ते मन विजयी को पड़त परिश्रम भारी।
सच्चे योद्धा वे ही जग मे जिन सो है मन हारे।।

**बल्देव :** लीजिए, आ गयी सन्यासिनी जी, अब मेरा यहाँ ठहरना ही निरर्थक है।

**[बल्देव का प्रस्थान। प्रमोदिनी का प्रवेश। मोहन प्रणाम करता है और वह आशीर्वाद देती है।]**

**मोहन :** आज बहुत दिनों के पश्चात् कृपा की।

**प्रमोदिनी :** कई कारणो से न आ सकी, बेटा।

**मोहन :** **(हाथ जोड़कर)** जो आज्ञा हो, पालन की जावे।

**प्रमोदिनी :** विशेष कुछ नही, एक छोटी-सी प्रार्थना है।

**मोहन :** **(मुस्कराकर)** प्रार्थना कैसी ? आज्ञा दीजिए, भगवती।

**प्रमोदिनी :** अच्छा ऐसा ही सही। कालिन्दी के स्थापित किये हुए कुमारिकाश्रम का वार्षिकोत्सव जन्म-अष्टमी के दिन मनाना निश्चित हुआ है। तुझे वहाँ चलना होगा। **(एक पत्र झोले से निकालकर मोहन को देते हुए)** मै अयोध्या-नरेश से भी तेरे जाने की आज्ञा ले आयी हूँ।

[**मोहन पत्र पढ़कर कुछ सोचने लगता है ।**]

**प्रमोदिनी :** (**मुस्कराकर**) कदाचित् यह सोच रहा है कि अपने अपमान करने वाले शूरसेन के यहाँ मै जाऊँ अथवा नही ।

**मोहन :** माता, आप तो सर्वज्ञ है । न जाऊँ, यह तो मै सोच ही नही सकता, क्योकि आपकी आज्ञा पालन करने के लिए मै सर्वदा प्रस्तुत हूँ । केवल उस अपमान का थोडा ध्यान आ गया था ।

**प्रमोदिनी :** बेटा, जिन बातो से हृदय की शान्ति भग होने की सम्भावना हो उनको सत्पुरुष अपनी स्मृति-सूची मे स्थान ही नही देते । फिर भला विश्व-प्रेमी को मान और अपमान का ध्यान ही कहाँ हो सकता है ? उच्च पुरुषो का काम नीचो की नीचता को हृदय मे स्थान न देकर उन पर दया करने का है ।

**मोहन** जो आज्ञा, माँ, मै-निश्चित समय पर अवश्य उपस्थित होऊँगा ।

**प्रमोदिनी :** कल्याण हो ।

[**प्रमोदिनी का प्रस्थान । मोहन भी कुछ सोचते हुए सन्दक लिये जाता है ।**]

**परदा उठता है ।**

## चौथा दृश्य

स्थान चन्द्रसेन के मकान की दालान

समय सन्ध्या

[**चन्द्रसेन का प्रवेश।**]

**चन्द्रसेन :** (**जोर से चिल्लाकर**) ओ ·ओ · ओ ओ ग ग गधे गप्पू! कहाँ है शी शी च च चौकी आदि?

[**जल्दी से रकाबी, बोतल, ग्लास आदि लेकर गप्पू का प्रवेश। डरते-डरते सब यथा स्थान रखता है।**]

**चन्द्रसेन :** द द द देख बे आज तो देर हुई। अ अ अब ऐसा हुआ तो (**लात दिखाकर**) ज ज जान रखना, गप्पू।

**गप्पू :** (**हाथ जोड़कर**) अब ऐसा न होगा, सरकार।

[**चन्द्रसेन बैठकर मदिरा पान करता है।**]

**चन्द्रसेन :** क्यों बे गप्पू, अ अ अ अभी तक दु दु दुर्जन न आया और न कुछ कर स स स सका।

[**दुर्जनसिंह का प्रवेश। गप्पू का प्रस्थान।**]

**दुर्जनसिंह :** आ गया, श्रीमान्। और सब कुछ कर भी लिया। आप उपाय करने मे मुझे साक्षात् हाँ तो क्या

समझिए, देखिए, भूल गया। (**विचारता है।**)

**चद्रसेन :** (**उछलकर**) उ· उ उ उपमा देना छ छ छोड़ कर त त तनिक शीघ्रता से उ उ उ उपाय बताओ।

**दुर्जनसिंह :** उपाय सर्वथा सरल है, श्रीमान्। कहिए आपको नेहनगर के कुमारिकाश्रम के वार्षिकोत्सव का निमन्त्रण आया है न ?

**चन्द्रसेन :** ह - हाँ - हाँ !

**दुर्जनसिंह :** बस तो चलिए, शीघ्र चलिए।

**चन्द्रसेन** · प प पर उपाय क - क - क्या है ?

**दुर्जनसिंह :** कुछ पारितोषिक या उपहार मिले तो बताऊँ।

**चन्द्रसेन :** ल - ल - ल - लो, इसकी क - क - क्या कमी।

**दुर्जनसिंह :** नही, श्रीमान् यह तो यो ही कह दिया था। जो सेवक के पास है सो सब आप ही का तो है।

**चन्द्रसेन :** (**मदिरा पीकर**) अ - अ - अच्छा उपाय तो बताओ प प पर शीघ्र।

**दुर्जनसिंह :** शीघ्र और सक्षेप से लीजिए। सक्षिप्त वर्णन मे कालिदास को भी मात कर दूं तब तो मेरा नाम दुर्जनसिंह। सुनिए, श्रीमान्, सब पता लगा आया हूँ। वार्षिकोत्सव मे मोहन भी आयगा। व्याख्यान आदि के अनन्तर रात को एक नाटक का अभिनय होगा। बस जिस समय नाटक होगा उस समय मे··
(**धीरे-धीरे कान में कहता है।**)

**चन्द्रसेन** (**उछलकर**) व - व वाह भ - भ - भाई, उपायी हो तो तु - तु तुम जैसा ।

**दुर्जनसिह** सुनिए तो, उसमे एक लाभ और है ।

**चन्द्रसेन** (**मदिरा पीकर**) व - व - वह क्या ?

**दुर्जनसिह :** वह यह कि मोहन का स्वभाव तो आप जानते ही है वह उन बालिकाओ की रक्षा के लिए स्वय (**फिर धीरे-धीरे कान मे कुछ कहता है ।**)

**चन्द्रसेन** (**उछलकर दुर्जनसिह की हथेली पर हाथ मारकर**) व - व - वाह, मित्र, व - व - वाह !

**दुर्जनसिह** . श्रीमान्, एक बड़ी बात तो और देखिए।

**चन्द्रसेन :** क्या ?

**दुर्जनसिह :** अभी तो मोहन (**फिर धीरे से कुछ कहता है ।**) इसलिए कालिन्दी उस पर मोहित है । जब मोहन, (**फिर धीरे से कुछ कहता है ।**) तब इस ससार मे बस आप ही तो रह जायँगे ।

**चन्द्रसेन :** (**मदिरा पीकर**) त - त - तो मै ऐ - ऐ - ऐ - ऐसा सुन्दर हूँ ?

**दुर्जनसिह :** (**सिर मटकाकर**) इसमे क्या सन्देह है ? इसके अतिरिक्त आप सम्पत्तिशाली भी तो है ।

**चन्द्रसेन :** (**कुछ सोचकर उदास होकर**) प - प - पर, मित्र, ए - ए एक बात है ।

**दुर्जनसिह :** वह क्या, श्रीमान् ?

**चन्द्रसेन :** इ - इ - इस कार्य मे (**धीरे-धीरे कहता है**) क्या कहूँ ?

**दुर्जनसिंह :** **(सिर हिला और भौहें चढ़ाकर)** विचार कर लीजिए, श्रीमान्, सब बाते नही हो सकती। या तो कालिन्दी को प्राप्त कर लीजिए या फिर यही सोच लीजिए।

"दुइ न होहि इक सग भुआलू
हँसब ठठाइ फुलाउब गालू"।

**चन्द्रसेन :** **(सोचकर और मदिरा पीकर)** अ अ अच्छा, भाई, कु - कु - कुछ भी हो तुम उसे प्राप्त करा दो।

**दुर्जनसिंह :** फिर भी विचार लीजिए, श्रीमान्, साँप छछूँदर वाला खेल न हो ? मुझे आपने इतना कहा था, इस लिए यह उपाय सोचा है।

**चन्द्रसेन :** अ - अ - अजी सोच लिया। **(मोती की कण्ठी दुर्जनसिंह को देते हुए)** ज - ज - जाओ, करो।

**दुर्जनसिंह :** **(कंठी लेकर जेब में रखता हुआ)** नही, नही, श्रीमान्, इसकी क्या आवश्यकता है ?

**चन्द्रसेन :** नही-नहीं, म-म...मै प्रसन्न होकर देता हूँ।

**दुर्जनसिंह :** **(कंठी को जेब में रखकर)** श्रीमान् की आज्ञा को मै टाल थोडे ही सकता हूँ। अच्छा तो अब मै जाता हूँ।

**चन्द्रसेन :** ज - ज - जाओ।

**[प्रणाम कर दुर्जनसिंह जाने लगता है।]**

**चन्द्रसेन :** **(थोड़ा जोर से)** हँ हँ हाँ एक बात तो म म मै भूल ही गया। **(दुर्जनसिंह रुक जाता है।)** क क कालिन्दी के एक छोटी बहन कौमुदी है ?

**दुर्जनसिंह :** हाँ सो तो मै जानता हूँ।

**चन्द्रसेन** : व - व - वह बहुत सुन्दर है।

**दुर्जनसिंह** : इसमे क्या सन्देह है ? कालिन्दी से कही अधिक सुन्दर है।

**चन्द्रसेन** : ए - ए एक बात और है ? व - व - वह मुझ पर आसक्त है।

**दुर्जनसिंह** : अच्छा !

**चन्द्रसेन** : अ अ अरे जब मै न न नेह नगर गया था उ ·· उ उस समय उसने य यहाँ आना तक स्वीकार क क कर लिया था।

**दुर्जनसिंह** : तब फिर विलम्ब क्यो, श्रीमान् के नेह नगर चलने के पहले ही उसे यहाँ ले आऊँगा।

**चन्द्रसेन** : हॅं·· हँ हाँ अवसर तो अच्छा है। इ इ इस समय कुमारिकाश्रम के व व वार्षिकोत्सव की गड़-वड मे इस ब ब बात का पता भी किसी को न नही लगेगा।

**दुर्जनसिंह** : कल आप नेह नगर चलने के पहले उसे यहाँ पायेंगे।

**चन्द्रसेन** : श श शीघ्र लाना।

**दुर्जनसिंह** : बहुत शीघ्र, श्रीमान्, तो आज्ञा हो।

**चन्द्रसेन** : अच्छा जाओ।

**[दुर्जनसिंह का प्रस्थान।]**

**[चन्द्रसेन बोतल से मदिरा उँड़ेलता है, पीता है और कुछ गुनगुनाता है। यशवन्तसिंह का प्रवेश। वह निकट जाकर प्रणाम करता है।]**

**चन्द्रसेन :** **(यशवन्त को न देखकर मदिरा पीकर)** त त तब।

**यशवन्त :** **(जोर से)** प्रणाम, श्रीमान्, प्रणाम।

**चन्द्रसेन :** **(शब्द सुनकर, चौंककर, यशवन्त को देखकर)** क क कौन य य य यशवन्त महाशय। · अ अ ·आइए ब बैठिए।

**यशवन्त :** **(बैठकर)** आज मुझे श्रीमान् से बहुत कुछ विनय करना है।

**चन्द्रसेन :** **(यशवन्त की बात न सुन मदिरा पीकर)** क क क्या हो रहा होगा ?

**यशवन्त :** **(बीच ही में)** श्रीमान्, मुझे कुछ आवश्यक बातें कहनी हैं।

**चन्द्रसेन :** **(बिना सुने ही)** उ उ उनका रंग लाल होगा, प प पीला होगा। अ आँखें चकाचौंध।

**यशवन्त :** **(जोर से)** श्रीमान्।

**चन्द्रसेन :** **(चौंककर)** क क क्या ल ल लग गयी ?

**यशवन्त :** **(और जोर से)** आज श्रीमान् को क्या हुआ है ?

**चन्द्रसेन :** **(यशवन्त को देखकर, खीझकर)** तु तु तुम इतने जोर से क क क्यों बोलते हो जी! **(फिर अपनी धुन में)** ओ हो· ·फिर तो

**यशवन्त :** **(चिल्लाकर)** श्रीमान् को क्या हुआ है ?

**चन्द्रसेन :** **(चौंककर)** तु · तु तुझको क्या हुआ है रे? च च ·चल निकल यहाँ से। **(लात मारकर मदिरा पीकर)** उ·· उ उस समय उसको लेकर म म · मैं

कैसे भ भागूंगा ? (उठकर भागता हुआ) य · य यों! (भाग जाता है। यशवन्त नीचा मस्तक किये बैठा रहता है।)

परदा गिरता है।

## पाँचवाँ दृश्य

स्थान    रूपसेन के मकान की दालान

समय    सन्ध्या

[ **रूपवती और रेवती का प्रवेश ।** ]

**रूपवती :** इसमे सन्देह नही, बहन, प्रेम के समान ससार मे कोई वस्तु नही, इसका विस्तार भी बहुत है और सकीर्णता का भी ठिकाना नही । विस्तार इतना है कि समस्त विश्व उसमे आ जाता है और सकीर्णता इतनी है कि वह केवल एक ही व्यक्ति तक परिमित होता है, संसार से उसका सम्बन्ध नही । तुम जानती हो मोहन प्रेम का उच्च और स्वाभाविक स्वरूप क्या बताते थे ?

**रेवती :** क्या, बहन ?

**रूपवती :** वे कहते थे कि प्रेम का उच्च और स्वाभाविक रूप विस्तृत है, सकीर्ण नही, जिसका बालक को उसकी बाल्यावस्था मे अनुभव होता है जब उसे हर वस्तु मे सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है । मुझे भी स्मरण तो है, बहन, कि बाल्यावस्था मे ऐसा होता था, परन्तु

मै तो उसे अज्ञान मानती हूँ।

**रेवती :** कैसा ?

**रूपवती :** उस समय तो मिट्टी के खिलौनो से भी प्रेम होता है।

**रेवती :** हाँ, यह तो सत्य है।

**रूपवती :** इसीलिए मै यह नही मानती कि मेरे हृदय मे जो प्रेम है वह निम्न कोटि का और अस्वाभाविक प्रेम है। यद्यपि मेरे हृदय के आधार केवल मोहन है, समस्त ससार नही, तथापि इतना मै कह सकती हूँ कि मेरा प्रेम उच्च और स्वाभाविक है।

**रेवती :** मै तुम से पूर्ण रीति से सहमत हूँ। आज तक जो हमारे देश मे इतनी पतिव्रता स्त्रियाँ हुईं, जिन्होने केवल पति ही से प्रेम किया, क्या उनका प्रेम निम्न कोटि का और अस्वाभाविक कहा जा सकता है ?

**रूपवती :** कदापि नही। बस वैसा ही मेरा प्रेम है। यद्यपि हम दोनो का विवाह-सम्बन्ध अभी नही हुआ, तथापि जब पिताजी मुझे उनके हाथो मे सौप गये है, तब वही मेरे पति है और पति ही स्त्री के लिए सर्वस्व है। मै उन्हे इसी भाव से देखती हूँ, इसी भाव से प्रेम करती हूँ।

**रेवती :** पर इसका क्या कारण है, सखि, कि मोहन इस विषय की कोई बात भी नही छेडते ? उन्होने तुम्हारे पिताजी की आज्ञा भी देख ली, फिर भी वे इस विषय की चर्चा नही करते ?

**रूपवती :** कुछ समझ मे नही आता। एक बात हो सकती है।

**रेवती :** क्या ?

**रूपवती :** पहले वे नेह नगर के जमीदार के यहाँ रहते थे।

**रेवती :** जानती हूँ।

**रूपवती :** उनके एक कन्या है जिसका नाम कालिन्दी है।

**रेवती** . यह भी जानती हूँ।

**रूपवती :** कदाचित् उनका उससे प्रेम हो।

**रेवती :** परन्तु मै सुनती हूँ कि तुम उससे कही अधिक सुन्दरी हो।

**रूपवती :** **(आश्चर्य से)** छि, छि· क्या कहती हो, सखि ? क्या मोहन सदृश पुरुष सुन्दरता के लिए किसी रमणी से प्रेम करेगे ? कभी नही। जो पुरुष समस्त विश्व से समान प्रेम करता है, उसके लिए किसी विशेष रमणी की सुन्दरता क्या वस्तु है ? उनके विषय मे ऐसा सोचना भी मूर्खता है, पाप है। यदि वे किसी रमणी से प्रेम करेगे तो कर्त्तव्य की प्रेरणा से, न कि बाह्य सुन्दरता को देखकर।

**रेवती :** **(लज्जित होकर)** क्षमा करो, बहन, मैने उनके सम्बन्ध मे ऐसा कहा, किन्तु तुम्हारे पिता जी ने अपनी अन्तिम इच्छा पूर्ण करने का भी तो उनसे वचन ले लिया है। क्या वे अपनी प्रतिज्ञा का पालन न करेगे ?

**रूपवती :** परन्तु यदि कालिन्दी को उन्होने पहले वचन दे दिया

होगा, तो क्या होगा ?

**रेवती :** हाँ, तब तो

**रूपवती :** जानती हो ऐसी परिस्थिति मे मैं क्या करूँगी ?

**रेवती :** (**दुःख से**) क्या करोगी, सखि ?

[**रूपवती रेवती के कान में कुछ कहती है।**]

**रेवती :** (**घबराकर**) यह कैसी प्रतिज्ञा, बहन ? पागल तो नही हो गयी हो।

**रूपवती :** (**और भी दृढ़ता से**) नही, सखि, प्रतिज्ञा प्रतिज्ञा ही है। (**कुछ ठहरकर**) लोक-सेवा सम्बन्धी उनका बनाया हुआ एक गीत सुनोगी ?

**रेवती :** मोहन का बनाया हुआ गीत और तुम्हारे कण्ठ से किसे सुनने की इच्छा न होगी।

[**रूपवती गाती है।**]

**(राग धना श्री)**

बस चलो करो उपकार, यही जग सार है।
यह नर तन मिले उदार, नही हर बार है॥
यदि हम हम ही तक रहे, कर न सके कुछ और।
तो हमने फिर क्या किया, बन सब के सिरमौर॥
तुम देखो तनिक विचार; यही जग सार है।
यह नर तन मिले उदार, नही हर बार है॥

निज पोषण तो सब करे, पशु-कृम, कीट, विहग।
जो हम भी वैसे रहे, वृथा धरा नर अंग॥

यदि सोचो स्वार्थ विसार, यही जग सार है।
यह नर तन मिले उदार, नही हर बार है।।
जग-सेवा ही ईश की, सच्ची सेवा जान।
स्वार्थ त्याग कर्त्तव्य की, ठानो मन मे ठान।।
हो जिससे मोद अपार, यही जग सार है।
यह नर तन मिले उदार, नही हर बार है।।

**[ रूपवती का गाते-गाते तथा पीछे-पीछे रेवती का प्रस्थान। ]**

**परदा उठता है।**

## छठवाँ दृश्य

स्थान कुमारिकाश्रम

समय रात्रि

[सारा आश्रम बन्दनवार आदि से सजा है। मन्दिर और मकान के बीच मे रंगमंच बनाया गया है। इसके सामने दर्शकों के बैठने के लिए दरी और ग़लीचे बिछे है। बहुत से लोग बैठे भी है। शूरसेन, चन्द्रसेन, मोहन आदि भी उन्हीं मे है। सब लोग अपनी-अपनी पूरी पोशाक मे है। मोहन भी अचकन पाजामा पहिने और सफेद साफा बाँधे है।]

[कालिन्दी का यवनिका के बाहर प्रवेश।]

**कालिन्दी :** महानुभावो ! वार्षिकोत्सव निर्विघ्न समाप्त हो गया। उसी के आनन्द मे आश्रम की प्रधानाध्यापिका ने जो अभिनय कराना निश्चय किया है वह अब अध्यापिकाओ और आश्रम की बालिकाओ द्वारा आपके सम्मुख अभिनीत किया जायगा। सज्जनो ! इस सस्था की स्थापना को एक वर्ष होता है। मै जानती हूँ कि इस देश की विराट सस्थाओ के सम्मुख यह ग्रामीण सस्था समुद्र की तुलना मे एक क्षुद्र

बिन्दु के समान है और मै यह भी जानती हूँ कि इस सस्था द्वारा विशाल नारी जाति की उन्नति का प्रयत्न करना बौने के चन्द्र छूने के सदृश हास्यास्पद है, किन्तु, महाशयो ! मनुष्य हृदय एक विलक्षण वस्तु है, अपनी निर्बलताओ और सीमाओ को जानते हुए भी यह हृदय बडी-बडी बाते करने की आकाक्षा करता है, वे आकाक्षाएँ इतनी प्रबल हो जाती है कि उन्हे पूर्ण किये बिना इस हृदय को सुख और शान्ति ही नही मिलती, आश्चर्यजनक बात तो यह है कि इन बडी-बड़ी आकाक्षाओ की पूर्त्ति के लिए छोटे-छोटे कार्यो मे भी, जब वे कार्य अपने ही द्वारा किये जाते है, यह हृदय एक अद्भुत प्रकार की ममता का अनुभव करता है। इस छोटी-सी सस्था के उद्गम का यही कारण और यही इसका छोटा-सा इतिहास है। मै अबोध बालिका आपका अधिक समय नही लेना चाहती। मेरी इन बातो मे न तो कोई ज्ञान है और न कोई रस। ये केवल एक क्षुद्र हृदय के क्षुद्र उद्गार है। मै आशा करती हूँ कि आश्रम की प्रधानाध्यापिका के तत्वावधान मे इस नाटक का प्रयोग आपके मनो को मेरे इस रूखे-सूखे कथन से कही अधिक प्रिय प्रतीत होगा। अन्त मे मै आप सब सज्जनो को, आपने यहाँ पधारकर इस उत्सव की शोभा बढाने का जो कष्ट उठाया है और इसके लिए

जो अपना अमूल्य समय दिया है उसके लिए, हृदय से धन्यवाद देती हूँ।

[कालिन्दी का प्रस्थान। घण्टी बजकर यवनिका का उत्थान।]

## पहला दृश्य

स्थान एक मकान की दालान

समय रात्रि

[खादी के वस्त्र पहने हुए एक गौर वर्ण युवक कुरसी पर बैठा है। एक किसान, एक मजदूर, एक वेश्या, एक बालक और एक महतर खड़े हैं। किसान घुटनों तक चढी हुई धोती पहने है जिसमे स्थान-स्थान पर थिगड़े लगे है और कहीं-कही से वह फटी भी दिखायी देती है। शरीर पर अनेक स्थानो पर फटी हुई मिरजई पहने है। सिर पर फटा-सा फैंटा बँधा है। मजदूर लंगोटी लगाये नंगे बदन है। हाथ मे फावड़ा और कुल्हाड़ी है। वेश्या प्रौढ़ अवस्था की है। कपड़े फटे-से है। शरीर पर कुछ लाल दाग है। बालक दुबला-पतला है और महतर हाथ मे झाड़ू लिये है।]

**युवक :** जानता हूँ, भाई, जानता हूँ, यहाँ अन्नदाता किसान अन्न के लिए तरस रहे है। कारीगर मजदूर हो गये है। समाज की प्रतिष्ठित महिलाओ को भी वेश्या होना पडता है और तब भी उनकी दुर्दशा होती है।

बाल-विवाह से समाज की जड ही सड रही है। और मनुष्य पशुओ से भी निकृष्ट अस्पृश्य समझा जाता है। ऐसे देश का पतन न हो तो क्या हो, परन्तु

[**आग लगती है, सब लोग उठकर भागने लगते है ।**]

**मोहन :** (**घबराहट से**) महानुभावो ! इस समय हम लोगों का कुछ कर्त्तव्य है। भागिये नही, वीर पुरुष होकर भागना इस समय शोभा नही देता। (**कुछ भाग जाते है। कुछ रुकते है ।**) इस समय हम लोगो का कर्त्तव्य इन स्त्रियो और बालिकाओ की रक्षा करना है।

[**आग बढ़ती है, सब भाग जाते है। नेपथ्य मे "पकड़ो-पकड़ो यही दुष्ट आग लगा रहे है" आवाज । मोहन जलती हुई आग मे शीघ्रता से घुस जाता है। नेपथ्य मे कोलाहल ।**]

**यवनिका**

## चौथा अंक

## पहला दृश्य

स्थान : रूपसेन के मकान का मोहन का कमरा

समय : दोपहर

**[पलँग पर अंग-प्रत्यंगों पर पट्टी बाँध मोहन लेटा है। एक ओर बल्देव और दूसरी ओर रूपवती बैठे हैं।]**

**रूपवती :** अब घावो की जलन का क्या हाल है ?

**मोहन :** तुम चिन्तित न हो, रूप, पहले से मै बहुत अच्छा हूँ।

**बल्देव :** क्या कहते हो, मित्र, अभी भी अत्यन्त कष्ट होगा।

**मोहन :** तुम लोग निरर्थक ही चिन्ता करते हो। मैं तो सच कहता हूँ कि मुझे इतना अधिक कष्ट नही हुआ, जितना तुम लोग समझते हो।

**रूपवती :** इससे अधिक और क्या कष्ट हो सकता है, कठिनाई से प्राण बचे है।

**मोहन :** शरीर को चाहे कुछ कष्ट हुआ हो, हृदय को नही।

**रूपवती :** इसका कारण आपके हृदय की उच्चता है।

**मोहन :** सच कहता हूँ, रूप, इन घावों की जलन हृदय को उल्टी ठण्डक पहुँचाती है। जिस समय इन घावों के कारण की ओर ध्यान जाता है, उस समय इनका

सारा कष्ट भूलकर हृदय को एक प्रकार के आनन्द का अनुभव होता है।

**बल्देव :** अद्भुत हृदय है !

**मोहन :** और अभी क्या ? जब तक यह देह है तब तक इन घावों के चिन्ह इनके कारण का स्मरण दिलाकर हृदय को सदा आनन्दित किया करेंगे।

**रूपवती :** धन्य है आपके इस त्याग और उस दिन के साहस को।

**मोहन :** नही, रूप, इसमें मेरी कोई विशेषता नही है। उस जगदाधार, करुणासागर भगवान् को जिससे सेवा लेनी होती है उसके हृदय मे वे शक्ति और साहस स्वय ही दे देते है।

**रूपवती :** हाँ, यह तो है ही पर·

**मोहन :** पर क्या, रूप, इस विराट ससार मे मनुष्य क्या है ? एक क्षुद्र अत्यन्त क्षुद्र वस्तु। मनुष्य की शक्ति, मनुष्य का साहस भी क्या है ? मेरी कहाँ यह शक्ति थी, कि मै अकेला इतनी स्त्रियो और बालिकाओ की रक्षा कर सकता। यह सब उस शक्तिशाली परमात्मा की शक्ति थी, उसी का साहस था।

**बल्देव :** मित्र, उन अग्नि की लपटो से तुम्हें कैसी झुलस जान पडी होगी ?

**मोहन :** उस समय मुझे कुछ ज्ञात ही न हुआ, मित्र। आरम्भ मे अवश्य मुझे वे लपटे बडी भीषण दिखी, पर उनमे घुसते ही न तो वे लपटे स्पष्ट दृष्टिगोचर हुई और न

उनकी झुलस ही का मै अनुभव कर सका। अग्नि मे घुसने के पश्चात् जब तक उन स्त्रियो और बालिकाओ को उस अग्नि के बाहर न कर दिया, तब तक कहाँ क्या है और क्या हो रहा है इसका मुझे कोई स्पष्ट ज्ञान न था।

**बल्देव :** तुम मुझे साथ ले चलते तो मै अवश्य सहायता करता।

**मोहन :** अवश्य, इसमे कोई सन्देह नही।

**रूपवती :** सचमुच आश्चर्य की बात है कि दर्शकों मे से एक भी वहाँ न ठहरा और किसी ने आपको सहायता न दी।

**मोहन :** और वह भी, रूप, उस समय जब कुछ घडियो पूर्व ही लोग इतने शिक्षाप्रद भाषण सुन चुके थे। सभी दर्शको का हृदय चिकने घड़े के तुल्य था, उन भाषणो का प्रभाव उनके हृदय पर क्षणमात्र को भी न पडा। मुझे यह उस समय ज्ञात हुआ कि स्वार्थ के सम्मुख उपदेश कोई वस्तु नही है। परन्तु वह बात मन मे न लाना ही ठीक है।

**बल्देव :** क्यो ? ये तो ससार के कटु अनुभव है, इन्हें तो सदा स्मरण ही रखना चाहिए।

**मोहन :** नही, मित्र, इस प्रकार के अनुभवो को भूल जाना ही श्रेयस्कर है।

**बल्देव :** क्यों ?

**मोहन :** इन बातो को स्मरण कर हृदय को असीम कष्ट होने लगता है। मनुष्य, ससार के सर्वश्रेष्ठ प्राणी मनुष्य,

के लिए प्रेम के स्थान पर हृदय ग्लानि से परिपूर्ण हो जाता है ।

**बल्देव :** ऐसे मनुष्यो के लिए ग्लानि का होना ही उपयुक्त है ।

**मोहन :** मनुष्य से इननी नीचता, मनुष्य से इतना घृणित कार्य; अपने शरीर को बचाने के लिए, उस शरीर को बचाने के लिए जिसे एक दिन त्यागना निश्चित है, मनुष्य जलती हुई स्त्रियो, अबोध बालिकाओं को छोड़कर भाग सकता है ।

**रूपवती :** इतना ही नही, वह आग तक लगा सकता है ।

**मोहन :** ठीक कहती हो, रूप, सर्वथा ठीक कहती हो । यह स्वार्थ जो न करावे सो थोडा । अपने स्वार्थ के लिए, साढे तीन हाथ के इस नश्वर शरीर के स्वार्थ के लिए, मनुष्य निर्दोष बालिकाओ के, कोमल और विशुद्ध हृदय बालिकाओं के, ईश्वर के अत्यन्त सन्निकट बालिकाओ के, जल जाने, ईश्वर की इतनी सुन्दर सृष्टि नष्ट हो जाने, की चिन्ता न कर जब आग लगा सकता है, तब वह सब कुछ कर सकता है । जब इस बात को सोचता हूँ, रूप, तो मनुष्य की सारी नीचताओ की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट हो जाता है । वह मनुष्य जो ससार का सर्वश्रेष्ठ प्राणी माना जाता है, क्या-क्या नही कर रहा है । पृथ्वी के निर्जीव राज्य के लिए, सोने और चाँदी के निर्जीव टुकडों के लिए भाई भाई और पिता-पुत्र लडते हैं, स्त्रियों और बालक-बालिकाओ की हत्याएँ होती है ।

**रूपवती :** सभी कुछ हो रहा है, कहाँ तक इस ओर ध्यान दीजिएगा ।

**बल्देव :** ससार पर प्रेम का नही स्वार्थ का ही राज्य है ।

**मोहन :** ओह ! प्रात काल के सूर्य की सुनहली किरणो मे मनुष्य को सोना दिखायी नही देता, चन्द्रमा की श्वेत ज्योत्स्ना मे उसे चाँदी दृष्टिगोचर नही होती, तारो की झिलमिलाहट मे वह हीरो के श्वेत प्रकाश को अवलोकन करने मे असमर्थ है, बादलो के लाल, हरे और नीले वर्णो मे उसे माणिक, पन्ने और नीलम दिखायी नही देते । वह तो उसी सुवर्ण, उसी चाँदी और उन्ही रत्नो को चाहता है जो उसे दूसरो को हानि पहुँचाए बिना, दूसरो को क्षुधित रखे बिना, दूसरो का रक्त बहाए बिना प्राप्त नही हो सकते और फिर इस रक्त-रजित धन को प्राप्त कर वह उसका क्या करता है ? उसे देखता ही है न ? देखकर ही आनन्द मानता है न ?

**बल्देव :** और क्या, उन्हे खा थोडे ही सकता है ।

**मोहन :** ठीक कहते हो, मित्र, जीवित रहने के लिए तो आध सेर आटे, शरीर ढाँकने को दस गज कपडे और धूप पानी के बचाव के लिए तो यथार्थ मे एक छोटे से छप्पर की ही आवश्यकता है । ससार के इस घृणित और ग्लानिपूर्ण व्यवहार को देखकर कभी-कभी मुझे भी इस ससार मे नरक का आभास होने लगता है । हृदय मे सन्देह उठ खडा होता है कि क्या ऐसा संसार, ऐसा

मनुष्य-समाज भी कभी विश्व-प्रेम का तत्त्व समझ सकेगा ? इस नरक का स्वरूप भी क्या कभी स्वर्ग मे परिणत हो सकेगा ?

**[ वैद्य का प्रवेश। रूपवती और बल्देव खड़े होते हैं। मोहन भी बैठता है । ]**

**वैद्य :** आप लेटे रहिए, आप लेटे रहिए। कहिए अब स्वास्थ्य कैसा है ?

**मोहन :** महाराज, अब इतना कष्ट नही है। मै सुविधापूर्वक बैठ सकता हूँ।

**परदा गिरता है।**

## दूसरा दृश्य

स्थान शूरसेन के कमरे की दालान

समय सन्ध्या

**[ शूरसेन और भोलानाथ टहल रहे हैं। ]**

**शूरसेन :** देखा, भोलानाथ, उस दिन कितना अनर्थ हुआ ?

**भोलानाथ :** निःसन्देह महान् अनर्थ, श्रीमान् ।

**शूरसेन :** अन्त मे मेरे शुभचिन्तक जो कहते थे वही हुआ न ?

**भोलानाथ :** निःसन्देह वही हुआ, श्रीमान् ।

**शूरसेन :** तभी तो हमारे पुराने लोग इन कामो के इतने विरुद्ध है।

**भोलानाथ :** नि.सन्देह ठीक कहते है, श्रीमान् ।

**शूरसेन :** वह कहाँ की भुखमरी सन्यासिनी आ गयी थी !

**भोलानाथ :** नि सन्देह महा भुखमरी, श्रीमान् ।

**शूरसेन :** अन्त मे सबकी इच्छानुसार मैने निकाल बाहर किया, और कुमारी आश्रम तोड डाला ।

**भोलानाथ :** निःसन्देह कहाँ तक उस आपत्ति को रखते, श्रीमान् ।

**शूरसेन :** भोलानाथ, समय ने ही पलटा खाया है ।

**भोलानाथ :** नि सन्देह खाया है, श्रीमान् ।

**शूरसेन** : स्त्रियाँ तक सन्यास लेकर पुरुषो को धर्म-मार्ग दिखाना चाहती है।

**भोलानाथ** : निःसन्देह अनर्थ है, श्रीमान्।

**शूरसेन** : वे स्त्रियाँ, भोलानाथ, जिन्हे हमारे प्राचीन धर्म के अनुसार न वेद का अधिकार है और न सन्यास का, जिनके पूरे षोड़स सस्कार तक नही होते, यज्ञोपवीत सस्कार नही होता।

**भोलानाथ** : निःसन्देह, श्रीमान्।

**शूरसेन** : फिर उस प्रमोदिनी को जाति-पाँति का भी तो कोई ठिकाना नही।

**भोलानाथ** : निःसन्देह कोई ठिकाना नही, श्रीमान्।

**शूरसेन** : एक दिन एक सज्जन कहते थे कि सन्यास लेने के पूर्व वह शूद्राणी थी।

**भोलानाथ** : कदाचित् अन्त्यज हो, श्रीमान्।

**शूरसेन** : जब ऐसे-ऐसे उपदेशक होने लगे तब समाज का कल्याण हो सकता है ?

**भोलानाथ** : नि.सन्देह ठीक कह रहे है, श्रीमान्। इस प्रकार के पाखण्डी धर्म का उपदेश क्या करेगे ? लोगों को नि सन्देह मनमाने ढग से बहकाते है। और इस प्रकार के बहकाने का प्रभाव सबसे अधिक निःसन्देह युवको पर पड़ता है, श्रीमान्।

**शूरसेन** : अवश्य।

**भोलानाथ** : उस प्रमोदिनी के लिए मुझे तो केवल नि सन्देह एक

दण्ड सूझता है।

**शूरसेन :** वह कौनसा ?

**भोलानाथ :** निःसन्देह मृत्यु-दण्ड। अभी कुछ ही दिन हुए मैने पढा था कि पश्चिम मे कोई ग्रीस नाम का देश था। वहाँ सुकरात नाम का एक आदमी हुआ था। उसको, श्रीमान्, उस देश के युवको को बहकाने के अपराध मे प्राण-दण्ड दिया गया था।

**शूरसेन :** **(आश्चर्य से सिर हिलाकर)** हाँ।

**भोलानाथ :** यदि न्याय मेरे हाथ मे दिया जाय तो मैं इस प्रमोदिनी को भी नि.सन्देह वही दण्ड दूँ। मोहन, कालिन्दी देवी आदि सबको नि सन्देह इसी नामधारी पाखण्डी सन्यासिनी ने बहकाया है।

**शूरसेन :** **(कुछ ठहरकर)** कुशल यही हुई, भोलानाथ, कि उस दिन की आग मे कालिन्दी अधिक नही जली।

**भोलानाथ :** निःसन्देह, श्रीमान्, ईश्वर ने बड़ी रक्षा की।

**शूरसेन :** देखो तो, भोलानाथ, यह मोहन भी कितना मूर्ख है।

**भोलानाथ :** नि.सन्देह, श्रीमान्, मै तो सदा कहता ही हूँ कि मूर्खों के सीग थोडे ही होते है।

**शूरसेन :** उसका भाग्य अच्छा था, जो बच गया, नही तो उस भीषण आग से बच पाता ! राम का नाम लो !

**भोलानाथ :** निःसन्देह, श्रीमान्।

**शूरसेन :** फिर भी वह ऐसा जला है कि अब सब उपकार करना भूल जायगा।

**भोलानाथ :** नि सन्देह भूल जायगा, श्रीमान्।

**शूरसेन :** और तुमने उस दिन एक बात देखी थी ?

**भोलानाथ :** क्या, श्रीमान् ?

**शूरसेन :** उसने आते ही मेरे पैर छुए थे।

**भोलानाथ :** नि.सन्देह, श्रीमान्। आपके पैर भला कैसे न छूता।

**शूरसेन :** नही, नही, उसमे रहस्य था।

**भोलानाथ :** कैसा, श्रीमान् ?

**शूरसेन :** मै भी पहले उसके भुलावे मे आ गया था, परन्तु पीछे से जब लोगो ने समझाया तब समझ मे आया कि वह एक प्रकार का ताना था।

**भोलानाथ :** वह ताना श्रीमान् ?

**शूरसेन :** कि तुमने तो मेरा अपमान किया, फिर भी मै अयोध्या के मन्त्री के पद पर पहुँच गया।

**भोलानाथ :** नि सन्देह ताना था, श्रीमान्।

**शूरसेन :** बच्चा जी को इस ताने का दण्ड भी खूब मिला।

**भोलानाथ :** नि सन्देह, श्रीमान्, जो जैसा करता है वह वैसा फल भी भोगता है।

**शूरसेन :** (कुछ ठहरकर) भोलानाथ, अब तक कौमुदी का पता नही लगा।

**भोलानाथ :** हॉ, श्रीमान्, नि सन्देह इतना प्रयत्न किया, पर सब निःसन्देह असफल हुआ।

**शूरसेन :** इन दोनो लडकियो ने तो मेरा बुढापा बिगाड दिया। एक को पढाया-लिखाया था, इसीलिए अब तक

विवाह न किया था, पर वह भी ऐसी निकली कि घर-घर और मुँह-मुँह अनेक प्रकार की चर्चा करा रही है और दूसरी को समझता था कि बड़ी सीधी है, पर उसके भी पंख लग गये।

**भोलानाथ :** नि.सन्देह क्या कहूँ, श्रीमान्।

**शूरसेन :** भोलानाथ, मै समझता हूँ कि कौमुदी के लापता होने मे उसका स्वतः का भी कुछ हाथ अवश्य है।

**भोलानाथ :** कैसा, श्रीमान् ?

**शूरसेन :** कुछ दिनो से उसकी चेष्टा और आचरण मे मुझे उसका पहला सीधापन दिखायी न देता था।

**भोलानाथ :** अच्छा !

**शूरसेन :** यह सम्भव नही कि बिना उसकी इच्छा के कोई इस प्रकार उसे ले जा सके।

**भोलानाथ :** निःसन्देह, श्रीमान्, वे इतनी छोटी थोडे ही थी कि कोई गोद मे ले जाता।

**शूरसेन :** हाँ, मै तो इन लडकियो के कारण समाज मे मुँह दिखाने योग्य भी न रहा।

**भोलानाथ :** नि सन्देह, श्रीमान् ठीक कह रहे है, परन्तु इस शोक से क्या लाभ होगा ?

**शूरसेन :** उस दिन उस आश्रम के उत्सव के कारण ही यह गडबड़ भी हुई। मै तो समझता हूँ कि आश्रम मे उत्सव मे जाने के बहाने ही कौमुदी स्वय चल दी है।

**भोलानाथ :** निःसन्देह, श्रीमान्।

**शूरसेन :** क्या कहूँ, बडा अनर्थ हो गया, भोलानाथ।

**भोलानाथ :** क्या कहूँ, श्रीमान्, पर अब आप कालिन्दीदेवी की चिन्ता कीजिए।

**शूरसेन :** (**लापरवाही से**) हाँ, जब से वह मोहन गया है और विशेषकर जब से यह आश्रम तोडा गया है, तब से वह कुछ अनमनी-सी रहती है, पर मै भी ऐसी बन्दर-घुडकियो से डरनेवाला नही। मैने उसका उपाय भी कर लिया है।

**भोलानाथ :** वह क्या, श्रीमान् ?

**शूरसेन :** उसका शीघ्र विवाह कर डालना। धीरे-धीरे मेरी समझ मे आ गया कि आजकल की लडकियों का स्वभाव कैसा होता है।

**भोलानाथ :** कैसा, श्रीमान् ?

**शूरसेन :** जब तक उनका विवाह न कर दिया जाय तब तक वे बडी स्वेच्छाचरिणी रहती है।

**भोलानाथ :** (**घबराकर**) पर श्रीमान् चन्द्रसेन के साथ तो उनके विवाह के अब मै नि सन्देह विरुद्ध हूँ, मै कई दिन से श्रीमान् से यह निवेदन करना चाहता था।

**शूरसेन :** क्यों ?

**भोलानाथ :** क्या आपने नही सुना कि कुमारिकाश्रम मे आग लगाने के अपराध मे चन्द्रसेन जी का कर्मचारी दुर्जनसिह पकड़ा गया है।

**शूरसेन :** (**लापरवाही से**) इससे क्या ? सेवक अपराध करे तो

उसका उत्तरदाता स्वामी थोड़े ही हो सकता है ।

**भोलानाथ :** (**सिटपिटाते हुए**) सो तो निःसन्देह ठीक है, श्रीमान्, पर · · · · ·

**शूरसेन :** (**बात काटकर**) पर-वर कुछ नही । तुम जानते हो कि जो कुछ मै निश्चय कर लेता हूँ उससे विचलित नही होता । फिर यह बात तो बहुत आगे बढ चुकी है, तुम जानते ही हो कि चन्द्रसेन के यहाँ टीका भी जा चुका है ।

[**भोलानाथ चुप रहता है । दासी का प्रवेश ।**]

**दासी :** इन्दुमती जी ने श्रीमान् को बुलाया है ।

**शूरसेन :** अच्छा, भोलानाथ, मै भीतर जाता हूँ, तुम भी घर जा सकते हो ।

**भोलानाथ :** जो आज्ञा, श्रीमान् ।

[ **एक ओर भोलानाथ और दूसरी ओर शूरसेन का प्रस्थान ।** ]

**परदा गिरता** है ।

## तीसरा दृश्य

स्थान इन्दुमती के कमरे की दालान

समय रात्रि

**[ शूरसेन और इन्दुमती का प्रवेश। इन्दुमती लगभग ५५ वर्ष की गेहुँएँ रंग की दुबली और ठिगनी स्त्री है। सफेद साड़ी और गुलाबी चोली पहने है। आभूषण सोने के हैं। ]**

**इन्दुमती :** **(दुःखित स्वर में)** नाथ, जब से उसने सुना है कि चन्द्रसेन को टीका गया है तब से तो उसकी बडी बुरी दशा हो रही है।

**शूरसेन :** **(बेपरवाही से)** फिर क्या करूँ ?

**इन्दुमती :** हाय ! हाय ! कैसी फूल-सी सुकुमार लडकी है। मेरे तो लडका कहो, लडकी कहो, जो कुछ है, वही है। मै लड़की की यह दशा कहाँ तक देखूँ। **(रोती है।)**

**शूरसेन :** **(भृकुटी चढ़ाकर)** यदि तुमने मुझे वही बेटी का रोना सुनाने को बुलाया है तो मै एक पल भी नही ठहर सकता। स्त्रियो के विचार भी बड़े विचित्र होते है। तुम लोगों को वचन का कुछ भी ध्यान है ? वचन तो तुम लोगों के लिए गाड़ी का चाक है।

**इन्दुमती :** (**हाथ जोड़े हुए**) यह ठीक है, नाथ, परन्तु

**शूरसेन :** (**बात काटकर**) किन्तु परन्तु की आवश्यकता नही, मै कई बार कह चुका हूँ, अब कुछ नही हो सकता।

**इन्दुमती :** पर, यदि लडकी के प्राण पर आ जाय तो ?

**शूरसेन :** (**लापरवाही से**) मै इन बन्दरघुडकियो से नही डरता। लोग मुझे क्या कहेंगे। यदि प्राण जायँ तो चले जायँ, मेरी बात नही जा सकती। क्या तुमने राजा मोरध्वज का नाम नही सुना ? बात ही पर तो उन्होने अपने हाथो अपने पुत्र का वध किया था।

[ **दासी का प्रवेश।** ]

**दासी :** (**शूरसेन से हाथ जोड़कर**) जो सज्जन विलासपुर गये थे वे श्रीमान् को सूचना देने आये है कि विलासपुर मे चन्द्रसेनजी का पता नही है सुना जाता है कि वे पागल होकर कही भाग गये है।

**शूरसेन :** (**आश्चर्य से**) ओहो !

**दासी :** और उनके साहूकारो ने उनकी समस्त सम्पत्ति नीलाम पर चढवा दी है।

**शूरसेन :** (**उसी स्वर में**) हाँ !

**दासी :** जो आदमी वहाँ गये थे वे यह भी कहते है कि इस बात का भी सन्देह होता है कि कदाचित् कौमुदी देवी भी चन्द्रसेन के मकान मे ही है।

[ **दूसरी दासी का प्रवेश।** ]

**दासी :** (**हाथ जोड़कर**) कालिन्दी देवी का स्वास्थ्य इस समय

बहुत बिगड़ गया है। उन्होने श्रीमान् को और माता जी को शीघ्र बुलाया है।

**शूरसेन :** (**अचम्भे से**) है, यह सब क्या हुआ ?

**इन्दुमती :** (**सोच से विह्वल होकर**) हाय! अब कालिन्दी का क्या होगा ? (**रोती है।**)

[**शूरसेन, इन्दुमती और दोनों दासियों का प्रस्थान।**]

**परदा उठता है।**

## चौथा दृश्य

स्थान कालिन्दी का कमरा

समय रात्रि

**[ कालिन्दी पलँग पर लेटी है । दो दासियाँ उपस्थित हैं । शूरसेन और इन्दुमती का प्रवेश । ]**

**इन्दुमती :** **(दुखित स्वर से)** हाय ! हाय ! मुझे ऐसी आशा कदापि न थी । **(रोती है ।)**

**शूरसेन :** **(लम्बी साँस लेकर)** मै ही इस सर्वनाश का कारण हुआ ।

**कालिन्दी :** पिता जी अब शोक न करे। ससार मे सब बाते भाग्यानुसार ही होती है ।

**शूरसेन :** **(फिर दीर्घ निःश्वास छोड़कर)** फिर भी, बेटी, कारण तो होता ही है । मैं ही तेरे इस कष्ट का कारण हुआ हूँ, और दूसरे है वे शुभचिन्तक पड़ोसी जो तेरे बारे में मनमानी बाते किया करते थे । हाय ! **(आँसू टपकते हैं।)**

**कालिन्दी :** आपको ऐसा विह्वल देख मेरा हृदय और व्यथित होता है । इस अन्त समय मे आप मुझे शान्ति लाभ करने दीजिए ।

**इन्दुमती :** (**रोकर**) हाय ! हाय ! बेटी, तू यह क्या कहती है ?

**कालिन्दी :** कुछ नही, माँ, धैर्य धरो।

**शूरसेन :** (**काँपते हुए**) हाय ! अब मै क्या करूँ।

**कालिन्दी :** (**शूरसेन से**) इस समय आप मेरी कुछ विनय मानेगे?

**शूरसेन :** (**आँसू पोंछते हुए**) बेटी, जो कुछ कहेगी, तत्काल करूँगा।

**कालिन्दी :** मेरी विनय है, पिता जी (**रुक जाती है।**)

**शूरसेन : जल्दी से**) नि शक होकर कह, बेटी !

**कालिन्दी :** इस समय मुझे कहना ही होगा, पिता जी। मुझे निर्लज्ज न समझिएगा।

**शूरसेन :** नही, नही, बेटी, कदापि नही। अब यह दुष्ट पिता साक्षात् देवी स्वरूपा बेटी को क्या ऐसा भी समझेगा ? (**आँसू पोंछता है।**)

**कालिन्दी :** (**कुछ दृढ़ता से**) पिता जी, विनय यही है कि इस समय मै मोहन जी, प्रमोदिनी माता और कुमारिकाश्रम की बालिकाओ के दर्शन चाहती हूँ।

**शूरसेन :** बहुत अच्छा, बेटी। मै हलकारों के हाथ मोहन को अभी पत्र भेजता हूँ और सन्यासिनीजी तथा उन बालिकाओं को भी ढुंढवाता हूँ।

**[लम्बी साँस लेते और आंसू पोंछते शूरसेन का प्रस्थान।]**

**परदा गिरता है।**

## पाँचवाँ दृश्य

स्थान भोलानाथ का घर

समय रात्रि

**नेपथ्य मे**—"अजी द्वार तो खोलो। आज नि सन्देह बडी वीरता करके आया हूँ।"

[**उमा का प्रवेश। वह जाती है, कुछ देर में आगे भोलानाथ और उनके पीछे उमा आती है।**]

**भोलानाथ :** (**हँसते हुए**) ह ह ह. ह !

**उमा :** केवल हँसोहीगे या कुछ कहोगे भी ?

**भोलानाथ :** ह. ह: ह: ह।

**उमा :** फिर वही बात! अच्छा जाने दो, अब मै न पूछूँगी। आपकी इच्छा हो तो बताइए, नही तो न सही।

[**पीठ फेर खड़ी हो जाती है।**]

**भोलानाथ :** ह: ह: ह ह:। (**उमा के निकट जा, उसकी ठुड्डी में हाथ लगाकर**) लो रुष्ट हो गयी। अजी, रानी जी, नि.सन्देह बात ऐसी है कि कि उसे सुनकर मुझ पर तुम्हारी नि:सन्देह दीठ लग जायगी

[**उमा हँस पड़ती है।**]

**भोलानाथ :** लो हँस दिया ! तुम तो मेरी बात को कुछ समझती ही नही। अच्छा लो, सुनो। कितने बडे साहस का काम है।

**उमा :** (**घूमकर**) कहिए।

**भोलानाथ :** देखो, नि सन्देह अत्यन्त ध्यान से सुनना।

**उमा :** आप कहिए तो।

**भोलानाथ :** चित्त को अच्छी प्रकार एकाग्र करके सुनना। (**अँगरखे की बाँहें चढ़ाता है।**)

**उमा :** आप कहेगे भी या यों ही करते रहेगे।

**भोलानाथ :** कहने के लिए थोड़ा प्रस्तुत भी तो हो जाऊँ। (**अकड़कर**) लो अब सुनो, सामने खडी होओ।

**उमा :** (**हँसती हुई सामने खड़ी होकर**) बहुत अच्छा, कहिए।

**भोलानाथ :** (**मूँछों पर हाथ फेरता हुआ**) किस प्रकार कहना आरम्भ करूँ, निवेदन, भूमिका, प्रस्तावना, उपोद्घात, प्राक्कथन, आदि के उपरान्त, या नि.सन्देह प्रारम्भ से ही विषय का आरम्भ कर दूँ।

**उमा :** (**ऊबकर**) जैसी आपकी इच्छा हो, पर कुछ कहिए तो।

**भोलानाथ :** (**कमर पर एक हाथ रख, दूसरे हाथ से छड़ी को घुमाते हुए**) अच्छा जाने दो। जब कि तुम सुनने को इतनी उत्सुक हो तो निःसन्देह विषय से ही आरम्भ करता हूँ, भूमिका अन्त मे कह लूँगा। (**पैर पटकने,**

**खखारने तथा और भी विशेष अकड़ने के उपरान्त)** आज सन्ध्या को—अच्छा कथा आरम्भ करने के पहले एक बात और बता दो कि वर्णन सक्षेप से हो कि विस्तार से।

**उमा :** **(बहुत ही ऊबकर)** यदि आपको न कहना हो तो न कहिए, मै यह चली। आप तो कसरत कराते है। **(जाना चाहती है।)**

**भोलानाथ :** **(जल्दी से)** यह लो, शीघ्र लो, अभी लो, उस स्थल से हट न जाना। नही तो इतनी देर का सब परि-श्रम व्यर्थ हो जायगा। कहने के पहले फिर नि सन्देह इतना ही समय इस ठाट से खडे होने मे लगेगा।

**उमा :** **(हँसकर)** यह लीजिए, खड़ी हूँ। अब तो कहिए।

**भोलानाथ :** **(खखारकर, मूँछों पर हाथ फेरते हुए)** यह भी ज्ञात हुआ कि तुम निःसन्देह सक्षिप्त वर्णन पसन्द करती हो, क्योकि तुम ऊबती जल्दी हो।

**उमा :** **(ऊबकर)** जान पडता है कि आपको कुछ कहना वहना नही है। आपने इस प्रकार के छल-छन्द कहाँ से सीखे ?

**भोलानाथ :** एक पण्डित से वर्णन करने की प्रणाली सीखकर आया हूँ। अच्छा सुनो, अब कहता हूँ; पर, हाँ, कहाँ तक कहा था ?

**उमा :** **(ऊबकर)** कहाँ तक क्या ? अभी तो आग, पत्थर कुछ भी नही कहा।

**भोलानाथ :** **(समझाते हुए)** तो रुष्ट काहे को होती हो, रानीजी ? फिर से सब आरम्भ से सुन लो, और बहुत शीघ्र, सक्षेप से। बात यह हुई कि तुम जो सदा यह कहती रहती हो कि मालिक की हाँ मे हाँ न मिलाना चाहिए, बस, आज निःसन्देह मैने हाँ मे हाँ नही मिलायी, निधडक होकर अपनी स्पष्ट सम्मति दे दी। **(वहाँ से हट, साधारण रूप से खड़े हो)** बस अब आगे न कहूँगा।

**उमा :** **(उत्सुकता से आगे बढ़कर)** क्या सम्मति दी, वह भी तो कहिए ?

**भोलानाथ :** **(मुँह फेरकर सिर हिलाते हुए)** ऊँ हूँ।

**उमा :** मै आपके हाथ जोडती हूँ, कह दीजिए।

**भोलानाथ :** **(पीठ फेरकर)** नि सन्देह, नही।

**उमा :** **(ऊबकर)** नही कहते तो न कहो। **(दूर जाकर खड़ी हो जाती है।)**

**भोलानाथ :** **(पीछे-पीछे जाकर कन्धे पर हाथ रखकर)** लो फिर रुष्ट हो गयी। अच्छा सुनो, नि सन्देह कहता हूँ।

**उमा :** कहिए।

**भोलानाथ :** आज सन्ध्या को बातों ही बातो में ठाकुर साहब के सामने चन्द्रसेन की बात निकल पड़ी। मैने उनकी सम्मति के विरुद्ध उसकी और उसके कर्मचारी दुर्जनसिंह की निःसन्देह खूब ही निन्दा की, खूब ही

निन्दा की, खूब ही निन्दा की।

**उमा** : तब उन्होने क्या कहा ?

**भोलानाथ** : वे चाहे कुछ भी कहे, मुझे उससे प्रयोजन ? मैंने तो नि सन्देह अपनी वीरता दिखा दी।

**उमा** : हाँ, आपने तो अपना कर्त्तव्य किया, पर उन्होने भी तो कुछ कहा होगा।

**भोलानाथ** : उन्होने नि.सन्देह यही कहा कि अब कुछ नही हो सकता, मैं चन्द्रसेन के यहाँ टीका भेज चुका हूँ।

**उमा** : (**लम्बी साँस लेकर**) पर अब कालिन्दी देवी का क्या होगा ? उन्होने तो जब से यह सुना है तब से चारपाई तक नही छोडी है।

**भोलानाथ** : यह तो सब नि सन्देह सच है, पर मै इसके लिए क्या करूँ।

**उमा** : (**लम्बी साँस लेकर**) हाँ, यह तो ठीक ही है। चलिए आप तो भोजन कीजिए।

[ **दोनों का प्रस्थान।** ]

**परदा उठता है।**

## छठवाँ दृश्य

स्थान . कालिन्दी का कमरा

समय दोपहर

[कालिन्दी लेटी है। सामने उदास भाव से शूरसेन खड़े हैं। बगल में आँसू डालती हुई इन्दुमती बैठी है। एक ओर प्रमोदिनी और कई बालिकाएँ खड़ी हैं। एक ओर से भोलानाथ और उमा तथा दूसरी ओर से मोहन का प्रवेश। मोहन सबसे प्रणाम आदि करता है। कालिन्दी और मोहन की दृष्टि मिलते ही दोनों ठिठककर रह जाते हैं। कुछ देर पश्चात् सबों को सम्बोधन कर कालिन्दी कहती है।]

**कालिन्दी :** (क्षीण स्वर से) अब जाने मे बहुत विलम्ब नही। बहिन कौमुदी का अभी भी पता नही क्यों ? (कुछ ठहर कर) सबसे क्षमा, आप लोग कह दे कि मेरे सब अपराध क्षमा किये।

**शूरसेन :** (रोते हुए) हाय! हाय! बेटी, तू यह क्या कह रही है। मैं ससार में बैठा ही हूँ और तेरी यह दशा ! हाय ! इस सब अनर्थ की जड़ मै ही हूँ ! (और रोता है।)

**इन्दुमती :** (जोर से रोकर) हाय ! बेटी, तुझे यह क्या हुआ ?

**उमा :** (**रोकर**) यह अनर्थ हो रहा है !

[**मोहन एक ओर मुँह फेर लेता है और रुमाल से आँखें पोंछता है ।**]

**कालिन्दी :** (**उसी क्षीण स्वर से**) तो क्या इस समय मेरी अभिलाषा पूरी न होगी ?

**प्रमोदिनी :** (**साहस से सब को सम्बोधन करके**) महाशयो ! हम लोग बडी भूल कर रहे है ! दुःख करने को जन्म भर पडा है। इस समय कालिन्दी देवी का मनोरथ पूर्ण करना हमारा प्रधान कर्तव्य है । (**सब लोग कुछ शान्त होते हैं ।**) अच्छा, कहो, बेटी, तुम्हे क्या कहना है ?

**कालिन्दी :** (**उसी क्षीण स्वर से**) जो कुछ अपराध हो सब लोग क्षमा करे ।

**प्रमोदिनी :** कृपा कर सब लोग उत्तर दे ।

**शूरसेन :** बेटी, तेरे कोई अपराध नही है ।

**इन्दुमती :** एक भी नही ।

[**सब लोग अपनी-अपनी आँखों के आँसू पोंछते हैं ।**]

**प्रमोदिनी :** मै सब लोगो की ओर से कहती हूँ कि तुम्हारे यदि कोई अपराध हुए हो तो क्षमा किये गये ।

**कालिन्दी :** (**शूरसेन से कुछ बलयुक्त स्वर से**) पिताजी, मुझे यह विनय करना है कि आप जो अपने को इस अनर्थ की जड मानते है, सो भूल जाइए । आपने मुझे बड़े लाड़-प्यार से` 'मै ही हर बात मे आपकी अप्रतिष्ठा का कारण` मुझे क्षमा, पिता जी ।

**[रोते-रोते शूरसेन की हिचकी बँध जाती हैं। इन्दुमती और उमा भी रोती हैं। मोहन के भी आँसू गिरते हैं।]**

**प्रमोदिनी :** शान्त, शान्त, हो जाइए।

**कालिन्दी :** **(इन्दुमती की ओर देखकर कुछ बलयुक्त स्वर से)** माता, धैर्य धरना। क्या माता से भी ससार मे कोई उऋण ·? मुझे यही दुःख है कि जिस भार को नौ मास उदर मे···फिर जिसे पालने मे इतना कष्ट···, वह आप के लिए भार मात्र, ··क्षमा···माता !

**[सब लोग सुनकर और भी दुःखित होते हैं।]**

**कालिन्दी :** **(प्रमोदिनी से फिर क्षीण स्वर से )** भगवती, आप मुझे क्षमा ·· मेरे कारण आपने बड़ा अपमान···क्या कहूँ। **(नेत्रों में जल छा जाता है)**

**प्रमोदिनी :** इस विषय का विचार न कर, बेटी, शान्त हो। तू जानती ही है कि मुझे मान और अपमान दोनो एक से है।

**कालिन्दी :** **(उमा से अत्यन्त क्षीण स्वर से)** सखी, तुम से भी विदा।

**[उमा रो पड़ती है।]**

**कालिन्दी :** **(बालिकाओं से बलयुक्त स्वर से)** तुम सब नारी जाति की **(कुछ ठहर क्षीण स्वर में)** प्रतिष्ठा का कारण होना।

**[बालिकाएँ रो पड़ती हैं।]**

**कालिन्दी :** **(मोहन की ओर देखती हुई अत्यन्त क्षीण स्वर से अटक-अटक कर)** बस अब विलम्ब नहीं। अब चली,

नाथ **(आँखे मूँदकर)** आँखे मुँदी जाती · लाओ **(हाथ बढ़ाकर)** चरणो को आगे· · **(कुछ-ठहरकर)** जाने के समय लज्जा नही। स्वामी, आज सब के सामने स्वामी कहती · **(आँखें खोलती है।)** हृदय तुमको दे चुकी थी, केवल विधि से शरीर अर्पण न· यह अगले जन्म मे···· **(आँखें मूँदकर)** आँखे मुँदी **(फिर हाथ बढ़ाकर)** लाइए, चरण न नाथ **(मोहन आँसू ढालता हुआ आगे बढ़ता है। कालिन्दी पैरों को पकड़ लेती है।)** अब जीभ ऐंठी स्वामी! मेरे अप राध **(ठहरकर कठिनता से)** अपने पथ को दुख के कारण छोड-न-देना **(अत्यन्त कठिनता से)** न···नाथ! हरे· ·कृष्ण· ·मो···ह ·· न

**यवनिका**

# पाँचवाँ अंक

## पहला दृश्य

स्थान : रूपसेन के मकान का झरोखा

समय : रात्रि

**[सामने सरयू बह रही है, जिसके किनारों पर सघन वृक्ष दिखायी देते हैं। चाँदनी में सरयू का पानी चमक रहा है और वायु से हिलते हुए वृक्षों के पत्तों में से छन-छन कर चाँदनी भूमि पर पड़ रही है। झरोखे में मोहन और बल्देव खड़े हुए सरय की ओर देख रहे हैं।]**

**मोहन :** मित्र, चाँदनी छिटकी हुई है, पवन से वृक्ष लहरा रहे हैं, सरयू बह रही है। क्या दिन, क्या रात्रि, क्या प्रातःकाल, क्या सन्ध्या सदैव इसका प्रवाह इसी प्रकार बहता है। मर्यादापुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी के समय भी इसका प्रवाह ऐसा ही था और आज भी ऐसा ही है। अन्तर इतना ही है, कि वह पानी नही है, वह रेत नही है, वे कगारे नही हैं, पर सरयू वही है; प्रवाह वही है, इसकी अनित्यता मे नित्यता अवश्य है।

**बल्देव :** तुम्हारा तो, मित्र, पाँचवाँ पाठ आरम्भ होता है। क्या विश्व-प्रेम के सग तुम सरयू के प्रवाह मे भी परिवर्तन

करना चाहते हो ?

**मोहन :** इसके प्रवाह मे परिवर्तन ! यह परिवर्तन हो ही नही सकता। ठीक सरयू के सदृश ससार का प्रवाह भी इसी प्रकार बिना रुके चला जा रहा है, चाहे कोई रहे या न रहे, पर इसका प्रवाह नही रुकता। इस सृष्टि मे नित्य असख्यो जीव उत्पन्न होते है और असख्यो नष्ट होते है, इसे इससे सम्बन्ध नही। कौन जन्मा और कौन मरा, किस सभ्यता का विकास हुआ और किसका ह्रास, किस साम्राज्य का उत्थान हुआ और किसका पतन, इसे इससे प्रयोजन नही। कहाँ प्रेम है और कहाँ कलह है, कहाँ शान्ति है और कहाँ समर, यह नही जानता। इसका चरखा इन सारी बातो की उपेक्षा करके चलता है, बराबर चलता है। नित्य समय पर प्रात काल होता है, समय पर सन्ध्या होती है और समय पर रात्रि हो जाती है। नित्य समय पर सूर्य निकलता और डूब जाता है। नित्य समय पर चन्द्रमा की कलाएं बढती या घट जाती है। नित्य समय पर ग्रह तथा नक्षत्र उदय होते और अस्त हो जाते है। ऋतुएँ आती और चली जाती है।

**बल्देव :** फिर क्या इसे निर्दय कहना चाहिए ?

**मोहन :** नही, निर्दय क्यो कहा जाय ? आज मै कालिन्दी के कारण इसे निर्दय कहूँ तो क्या यह उचित होगा ? कोई सयोगी इसे बडा दयावान कहता होगा।

**बल्देव :** **(लम्बी साँस लेकर)** सारे विश्व से प्रेम करने की दीक्षा

ले लेने पर, जीवन के इस पंचम पाठ में भी कालिन्दी को तुम न भूल सके। शूरसेन के अपमान को तुम भूल गये। मृत्यु-सम रोग के बढ जाने का भय होते हुए भी भूखे बालको के लिए पथ्य अन्न देने की भी उदारता तुम कर सके। बालिकाओ की रक्षाके लिए निज प्राणों की रक्षाको भी तुच्छ जान जलती हुई अग्नि मे कूदने का तुमने साहस किया। संसार मे धन और रूप, कनक और कान्ता ने न जाने कितने त्यागी और विवेकी पुरुषो के त्याग और विवेक को भ्रष्ट किया है, परन्तु रूपसेन की अतुल सम्पत्ति और रूपवती का अनन्य सौन्दर्य भी तुम्हें आकर्षित नही कर रहे है। फिर क्या कालिन्दी के लिए इस प्रकार विह्वल होना तुम्हे शोभा देता है ?

**मोहन :** (**दीर्घ निःश्वास छोड़कर**) इसका कोई उत्तर मेरे पास नही है, बल्देव। कुछ समझ मे नही आता। जब मुझे यह विचार आता है, तब मेरा सिर चक्कर खाने लगता है।

**बल्देव :** परन्तु, मित्र, अपने लिए न सही, रूपवती के लिए ही तुम्हे अब अपनी विचारधारा दूसरी ओर मोडनी होगी। जब रूपसेन जी का पत्र खुला था उस समय की और आज की परिस्थिति मे तो बहुत अन्तर हो गया है। उस समय तुम कालिन्दी से वचनबद्ध थे, अतः तुम्हारा यह कहना ठीक था कि तुम रूपसेन जी की आज्ञा मानने के लिए बाध्य नही पर अब तो कालिन्दी देवी संसार मे नही हैं।

**मोहन** : यही प्रश्न तो मुझे और धर्म संकट मे डाले हुए है।

**बल्देव** : धर्म सकट कैसा, मित्र ?

**मोहन** : बडा भारी धर्म सकट है। तुम्हारे कहने के अनुसार परिस्थिति अवश्य बदल गयी है।

**बल्देव** : फिर ?

**मोहन** : परन्तु सारा प्रश्न यह है कि कालिन्दी की मृत्यु से क्या मै उसे दिये हुए वचन से मुक्त हो गया ? कालिन्दी के संसार मे न रहने पर भी कालिन्दी के अतिरिक्त और किसी से विवाह करने के लिए क्या मै स्वतन्त्र हूँ ?

**बल्देव** : (**आश्चर्य से**) इसमे भी क्या कुछ सन्देह है ?

**मोहन** : बहुत बड़ा। प्रश्न इतना सरल नही है जितना ऊपर से दिखायी देता है।

**बल्देव** : (**और भी आश्चर्य से**) तो क्या अभी भी तुम रूपसेन जी की आज्ञा पालन न करोगे, अभी भी तुम रूपवती से विवाह न करोगे ?

**मोहन** : यह मैने कहाँ कहा ? मैं तो केवल यही कह रहा हूँ कि मैं बड़े धर्म सकट मे हूँ। बहुत सोचने पर भी मै अब तक कोई निर्णय नही कर सका हूँ।

**बल्देव** : (**झुँझलाकर**) तो फिर यह निर्णय होगा कब ?

**मोहन** : मैं स्वय चाहता हूँ कि बहुत शीघ्र हो जाय।

**बल्देव** : तब ?

**मोहन** : पर जितनी ही मै शीघ्रता चाहता हूँ, उतना ही विलम्ब होता जाता है। मेरे हृदय पर यह कोई छोटा-सा भार

**बल्देव :** परन्तु तुम तो कर्म के सम्मुख भाग्य को कोई वस्तु नही मानते थे।

**मोहन :** सो मै अभी भी कहता हूँ। भाग्य के भरोसे मनुष्य को कर्म छोड़ने का कोई अधिकार नही है। मैने जो कुछ अभी कहा उसका तात्पर्य केवल इतना ही है कि कई बार कर्मो के विपरीत फल भी होते है। फल के सम्बन्ध में मनुष्य शक्ति-हीन है।

**बल्देव :** परन्तु, मित्र, तुम जिस छोटी-सी बात में इतने रूप और रग देख रहे हो उसमे मुझे तो कोई भी तथ्य नहीं दिखता।

**मोहन :** **(रूखी हँसी हँसकर)** बल्देव, बल्देव, ससार में छोटी बाते ही इस छोटे मनुष्य के जीवन मे अधिक महत्त्व रखती है, बडी नही। विराट सूर्य का पथ निश्चित है, विशाल चन्द्र का मार्ग नियुक्त है, बड़े-बडे ग्रह-नक्षत्रों के मगमें भी कोई गडबड नही, पृथ्वी भी अपने रास्ते को अणु भर भी नही छोड सकती, परन्तु ये सब बडी बहुत बड़ी-बड़ी वस्तुएँ है, इनके काम, उन कामो के ढग सभी बडे हैं। यह मनुष्य तो क्षुद्र प्राणी है, बहुत छोटी-सी वस्तु है। इसका मार्ग इतना सीधा नही है। इसे तो फूँक-फूँक कर ही पैर रखना पडता है। छोटी वस्तु तो छोटी ही बात की ओर ध्यान रखेगी बडी बात की ओर नही; फिर बड़ी बातों का निर्णय करना भी प्राय. उतना कठिन नही है जितना छोटी बातो का। छोटी-छोटी बाते ही अधिकतर

इस छोटे मनुष्य के इस छोटे-से जीवन की दिशा निर्णय करती है, उसका सुख-दुख निश्चित करती हैं, बडी नही।

**बल्देव :** कभी-कभी तो न जाने तुम क्या-क्या कह डालते हो कि मेरी समझ मे भी कुछ नही आता, कहाँ रूपवती से विवाह करने की बात और कहाँ सूर्य, चन्द्र, ग्रह, पृथ्वी और समुद्र तक छलाँगे भरना।

**मोहन :** बल्देव, तुम्हे भी क्या यह सब पागल का प्रलाप जान पडता है ? पर नही, मित्र, नही, यह पागल का प्रलाप नही है, यह उस हृदय के आवेग है जो अत्यन्त क्षुद्र होने पर भी जैसा मैने अभी कहा सारे ब्रह्माण्ड को व्याप्त कर लेता है, फिर यदि तुम्हे पागल का प्रलाप ही प्रतीत होता हो तो इसे एक प्रेमी पागल का प्रलाप समझ सकते हो। रूपवती के सग विवाह की समस्या इतनी सरल नही है, नही तो मै न जाने कब इस भार को हलका कर लेता, परन्तु मेरे लिए तो यह भारी, बहुत भारी, धर्म संकट है और इस पर सूक्ष्म अत्यन्त सूक्ष्म विचार की आवश्यकता है। (**कुछ ठहरकर**) अच्छा, देखो, एक बार फिर इस जगमगाती हुई चाँदनी, इस लहलहाते वृक्ष-समूह, इस कलकल नाद से युक्त बहती और चमकती हुई सरयू को देखो, देखो जी भरकर देखो। फिर चलो हम लोग सो रहे बहुत रात चली गयी।

**[दोनों कुछ देर सामने की ओर देखते हैं। मोहन लम्बी साँस लेता है। फिर दोनों का प्रस्थान।]**

**पट परिवर्तन**

## दूसरा दृश्य

स्थान : सरयू का एक जगली तट

समय : रात्रि

[**कालिन्दी की कुमारिकाश्रम की प्रधान अध्यापिका और कौमुदी का प्रवेश।**]

**अध्यापिका :** उस दिन तुमने अपनी पूरी कथा मुझे नही सुनायी। आगे का वृत्तान्त कहने मे कुछ आपत्ति तो नही है ?

**कौमुदी :** भला मुझे आपसे कोई बात कहने मे क्या आपत्ति हो सकती है। उस दिन दुर्जनसिह का मुझे चन्द्रसेन के यहाँ ले जाने का, चन्द्रसेन जी के कुमारिकाश्रम-उत्सव मे नेह नगर जाने का और उनके अन्त.पुर मे अपने रहने तक का वृत्त तो मै आपसे कह ही चुकी हूँ।

**अध्यापिका :** हाँ, यहाँ तक कह दिया है।

**कौमुदी :** उसके पश्चात् का अब कहे देती हूँ। चन्द्रसेन के यहाँ जिस कमरे मे मै जाकर ठहरी उसके आस-पास अनेक कमरे थे और उनमें अनेक रमणियाँ रहती थी। पूछने पर ज्ञात हुआ कि ये सब चन्द्रसेन की

रखी हुई स्त्रियाँ है ।

**अध्यापिका** : यह सुनकर तो तुम्हे बडा दुःख और आश्चर्य हुआ हुआ होगा ?

**कौमुदी** : नही, कुछ भी नही ।

**अध्यापिका** : (**आश्चर्य से**) अच्छा ! जिससे तुम विवाह करने गयी थी उसकी यह दशा देखकर भी तुम्हें दु ख और आश्चर्य नही हुआ ?

**कौमुदी** : इसलिए नही हुआ कि उनके आचरण का यह वृत्तान्त मै पहले ही सुन चुकी थी ।

**अध्यापिका** : (**और भी आश्चर्य से**) और तब भी तुम उनसे विवाह करने गयी ?

**कौमुदी** : हाँ, क्योकि मै तो उनकी सम्पत्ति की अधिकारिणी होना चाहती थी। मै यह जानती थी कि वे कुमार है और उनकी विवाहिता स्त्री मै ही होऊँगी ।

**अध्यापिका** : अच्छा फिर ?

**कौमुदी** : चन्द्रसेन ने दूसरे ही दिन आने को कहा था। मैं बड़ी बेचैनी से उनके आने और अपने विवाह की प्रतीक्षा करने लगी ।

**अध्यापिका** : अच्छा ।

**कौमुदी** : जिस दिन उन्होने आने को कहा था वह दिन बीत गया । दिन पर दिन बीतने लगे, परन्तु उनका पता न था, उधर मैंने अनेक प्रकार के सम्वाद सुने ।

**अध्यापिका** : कैसे ?

**कौमुदी :** कुछ स्त्रियो से सुना कि चन्द्रसेन कई बालिकाओ को यह कहकर लाये थे कि वे उनसे विवाह करेंगे, परन्तु विवाह न कर, बलात् उनका सतीत्व भंग कर या तो उन्हे निकाल दिया, या रखी हुई स्त्री के समान रख लिया।

**अध्यापिका :** (अचम्भित होकर) हाय! हाय! कैसा घोर अनर्थ है!

**कौमुदी :** फिर कुछ स्त्रियो से सुना कि वे इतना अपव्यय कर चुके है कि उन पर बडा भारी ऋण हो गया है और उनकी सम्पत्ति नीलाम होने वाली है।

**अध्यापिका :** इन सम्वादों को सुनकर तो तुम्हारी बुरी दशा हुई होगी ?

**कौमुदी :** ये सम्वाद सुनते ही मेरे पैरो के नीचे की भूमि सरक गयी। दुःख की पूर्णाहुति कुमारिकाश्रम मे आग लगाने के षड्यन्त्र और चन्द्रसेन के पागल होकर भागने के समाचार से हुई।

**अध्यापिका :** (उत्सुकता से) तब तुमने क्या किया ?

**कौमुदी :** उस समय की मेरी स्थिति को मै ही जानती हूँ, उसका वर्णन शब्दों द्वारा नहीं कर सकती। मैं वहाँ से किसी प्रकार निकल भागने का प्रयत्न करने लगी; किन्तु यह कुछ सरल कार्य न था। फिर भी किसी प्रकार एक दिन रात्रि को वहाँ से निकल पायी।

**अध्यापिका :** तब ?

**कौमुदी :** उस समय न तो घर जाने का मेरा साहस हुआ और न ससार मे कोई स्थान ही मेरे लिए था। अपने कर्मों पर मुझे इतनी ग्लानि आयी कि मैंने सरयू मे डूब कर आत्म-हत्या करने का साहस किया।

**अध्यापिका :** ओह ! आत्म-हत्या !

**कौमुदी :** मैं सरयू मे कूदने ही वाली थी कि संन्यासिनी जी आ पहुँची और मुझे समझाकर यहाँ ले आयी। यहाँ आने पर आप लोगो के सत्सग और विद्याऽभ्यास से हृदय को शान्ति मिली है। जिस शिक्षा और सत्सग से मैं घृणा करती थी वही मुझे शान्ति और सुख देने का साधन हुआ है।

**अध्यापिका :** तुम्हारी बड़ी करुण कथा है। ईश्वर करे दिनों-दिन तुम्हारा हृदय अधिकाधिक शान्ति लाभ करे और तुम इस विशाल सृष्टि की कुछ सेवा कर सको।

**कौमुदी :** मैं इस योग्य कहाँ ? परन्तु आप लोगों के आशीर्वाद से कदाचित् यह भी हो सके।

**[कुमारिकाश्रम की बालिकाओं का गाते हुए प्रवेश।]**

**(राग यमन—कल्याण)**

वही है साधु जिनको टेक पर-हित की समायी है।
इसी के हित जिन्होने धर्म की धूनी रमायी है।
राख लगा भगवा पहिर घूमे जो एकन्त।
निज सेवा के हेतु जो ये है झूठे सन्त।

सच्चे जो उन्हे दिन-रात भाती जग भलायी है।
दुखित देख जो अन्य को भाग चले मुख मोड।
जावे कही न और जो श्रीमानों को छोड।
उन्होने राख क्या निज देह पर कालिख लगायी है।

[**प्रमोदिनी का प्रवेश।**]

**प्रमोदिनी : (कौमुदी से)** तुझे देखने को शूरसेन जी बड़े आतुर है, कौमुदी, उन्हे आज तक यह ज्ञात नही है कि तेरा पता लग गया है। कालिन्दी ने भी अन्त समय तेरा बड़ा स्मरण किया था।

**कौमुदी : (आँसू भरकर)** जिस बहन का मैने सदा तिरस्कार किया, वह मुझे अन्त समय स्मरण करे, यह उसके हृदय की उदारता के अतिरिक्त और क्या हो सकता है ? चाचा जी से मिलने को तो मैं भी बहुत आतुर हूँ, माता, परन्तु उन्हे अपना मुख कैसे दिखाऊँगी ?

**प्रमोदिनी :** इन सब वातो को भूल जा, बेटी। मै उनसे सब कह दूँगी। तुझे वे एक शब्द भी न कहेगे, वरन् तुझे देख उनका दु ख आधा हो जायगा। तेरी चाची ने भी मृत्यु के पूर्व तेरा बड़ा स्मरण किया था।

**कौमुदी : (आँख में आँसू भरकर)** मैं बड़ी अभागिनी हूँ कि ऐसे अवसरों पर भी वहाँ न थी। क्या कहूँ।

[**चन्द्रसेन का शीघ्रता से हाथ फैलाये हुए फटा-सा कुरता, धोती पहने, नंगे सिर और नंगे पैर प्रवेश।**]

**चन्द्रसेन :** है-है-है-मेरा क्या, अ-अ-अ-अपराध है। मु-मु-मु-मुझे क्यो पकड़ते हो ? भ-भ-भ-भाई ! मैंने तो कुछ

अ-अ-आग लगायी नही। दुर्जनसिह ही ने मुझे य-य-य-यह उ-उ-उ-उपाय बताया था। **(दौड़कर)** ह-ह-ह-हाय ! हाय ! प-प-प-पकड लिया। **(दौड़कर बालिकाओ को देखकर)** है-है-है- तुम लोग कौन हो ? भु-भु-भु-भुतनियाँ। कु-कु-कु-कुमारिकाश्रम मे ज-ज-जली हुई बालिकाएँ ! बदला चु-चु-चु-चुकाने आयी है। **(बालिकाओ को गुलाबी वस्त्र देखकर)** अ-अ-और श-श-शरीर मे अ-अ-अ-आग धारण कर अ-अ-अब मु-मु-मु-मुझसे लिपटोगी ! हाय ! हाय ! अ-अ-अब मैं क्या करूँ। **(बालिकाओं के हाथ जोड़कर)** अ-अ-अ-अरी भुतनियो, म-म-म-मेरा कोई अ-अ-अपराध नही। **(कुछ ठहरकर दौड़ते हुए)** न-न-नही मानती। अ-अ-अच्छा तो यह लो म-म-मै सरयू मे कूदा। **(सरयू में कूदता है।)**

**[नेपथ्य में—"हैं यह क्या, यह क्या, इतना पागलपना। सावधान। ऐसा अनर्थ न कीजिएगा। नही तो आप डूब जायेंगे।"]**

[**नेपथ्य में**—"है यह क्या, यह क्या, इतना पागलपना। सावधान। ऐसा अनर्थ न कीजिएगा। नही तो आप डूब जायेगे।"]

**प्रमोदिनी :** **(सबों से)** शीघ्र चलो, दोनो के बचाने का प्रयत्न करना होगा।

**[प्रमोदिनी शीघ्रता से आगे बढ़ती है। सब पीछे जाती हैं।]**

**परदा गिरता है।**

## तीसरा दृश्य

स्थान : शूरसेन के मकान की दालान

समय : सन्ध्या

[ विह्वल अवस्था में शूरसेन टहल रहे हैं। पीछे-पीछे भोलानाथ हैं। ]

**शूरसेन :** (विह्वलता से) हाय ! हाय ! क्या मैं यही दुःख देखने को जीता रहूँगा। भाग्यवान तो कालिन्दी की माँ थी, जिसने अधिक समय तक दुःख न देखा।

**भोलानाथ :** धीरज धरिए, श्रीमान्, नि.सन्देह इस दु.ख का पार नही, पर धैर्य्य के सिवा दूसरा उपाय भी तो निःसन्देह नही है।

**शूरसेन :** (उसी तरह) भोलानाथ, मै क्या कहूँ, कुछ कहा नही जाता। हृदय मे आग-सी जल रही है और इस विचार से कि इस सर्वनाश का कारण मैं और मेरे ये पड़ोसी है, उसमे मानो घी की आहुति पड़ रही है। हा ! कालिन्दी ! हा ! इन्दुमती ! हा ! कौमुदी ! दो चल बसी और एक ने मुझ पातकी को त्याग दिया।

**भोलानाथ :** श्रीमान् सोचिए तो कालिन्दी देवी अन्त समय में क्या कह गयी हैं ? उनका अन्तिम अनुरोध भी तो नि.सन्देह पालन करना चाहिए।

**शूरसेन :** **(उसी स्वर से)** अनुरोध-पालन, भोलानाथ, अनुरोध-पालन ! हाय ! वह अनुरोध तो और भी दु:ख-दायी हो रहा है। वे अन्त समय के नम्र वचन ! बोलने का बल न रहने के कारण क्षीण स्वर से कही हुई वे मधुर बाते ! भोलानाथ, भोलानाथ, न जाने मुझे इस नरक से भी भयानक शोकातल में जलने को ईश्वर ने क्यों जीता रक्खा है ? **(रोता है।)**

**भोलानाथ :** श्रीमान्, यदि ऐसा ही करते रहेगे तो नि.सन्देह किस प्रकार कार्य चलेगा ?

**शूरसेन :** **(जोर से)** कार्य क्या चलना है, भोलानाथ ? इस पातकी से, कन्या के इस हत्यारे से, अब संसार मे और क्या कार्य हो सकता है ? बस, अब कार्य यही है कि दिन-रात अपने किये कुकर्मो पर पश्चात्ताप किया करूँ। यही पश्चात्ताप मेरे कर्मो का प्रायश्चित होगा। हाय ! हाय ! इस संसार मे ऐसा भी कोई और दुष्ट होगा जो अपनी ही कन्या की हत्या करे ? हाय ! कालिन्दी, देवीस्वरूपा बेटी, सरस्वती-सी विदुषी बेटी, क्या तेरा अवतार संसार मे नारी-चरित्र को उज्ज्वलता की झलक मात्र दिखाने को हुआ था ?

**(कुछ ठहरकर)** नही-नही बेटा हुआ था—नारी कर्तव्य की पराकाष्ठा दिखा देने को, पर मेरे कारण उसकी झलक मात्र ही दिख पडी। हाय! हाय! मै ही तो इन सब अनर्थो की जड हूँ। नाश हो मेरे उन शुभ-चिन्तको का जिन्होने मेरी बेटी से मेरा हृदय फिराया, ऐसी दशा में जो अन्धे पथिक की अवस्था होती है वही मेरी भी हुई है।

**भोलानाथ :** श्रीमान्, धैर्य धरिए। देखिए, कितना समय इस प्रकार विलाप करते-करते बीत गया। देखिए तो आपके शरीर की नि.सन्देह क्या दशा हो गयी है।

**शूरसेन :** **(शरीर को देखकर)** क्या दशा हो गयी, भोलानाथ ? कुछ भी तो नही हुई। उस शरीर के सम्मुख तो अभी इसकी कुछ भी दशा नही बिगडी। हाय! हाय! भोलानाथ, वह सुकुमार शरीर मेरी ही करतूत से भस्म हो गया। हाय!

**भोलानाथ :** श्रीमान्, आप क्या कर रहे है ? इस प्रकार से तो नि सन्देह आप

**शूरसेन :** **(भोलानाथ की बात पर ध्यान न देकर पुनः अपना शरीर देख भोलानाथ से)** भोलानाथ, तुमने कैसे कहा कि मेरे शरीर की दशा हीन हो गयी है ? लाओ, अग्नि लाओ। इसमे लगाओ। तब कही यह उस शरीर की समता को पहुँचेगा। **(रोता है।)**

**भोलानाथ :** श्रीमान्, श्रीमान्, तनिक सम्हलिए। इस प्रकार

विलाप करना बुद्धिमानो का नि सन्देह काम नही।

**शूरसेन** : बुद्धिमान ! मै बुद्धिमान, भोलानाथ ? हाँ, थोडी-सी बुद्धि तो अभी भी कदाचित शेप है, अन्यथा पागल न हो जाता। बुद्धि ने इस दु ख के कुछ शान्ति होने का एक मार्ग भी सोचा है। पर, भोलानाथ, वह सम्भव नही है।

**भोलानाथ** : आप नि सन्देह बतावे, श्रीमान्, वह कौनसा मार्ग है, जिस मार्ग से आपको थोडी भी शान्ति मिले ? विश्वास रखिये, उस मार्ग को आपके चलने के लिए सुगम बनाने मे यह आपका तुच्छ किकर नि सन्देह कोई बात उठा न रखेगा।

**शूरसेन** : परन्तु, भोलानाथ, जो मै चाहता हूँ, वह होना असम्भव है। मेरे भाग्य मे रोने के अतिरिक्त और अब कुछ नही है।

**भोलानाथ** : आप नि सन्देह बतावे तो, श्रीमान् !

**शूरसेन** : सुनना ही चाहते हो, तो सुन लो, पर, भोलानाथ···

**भोलानाथ** : आप नि सन्देह कहे तो, श्रीमान्।

**शूरसेन** : तुमने रूपसेन जी के अन्तिम पत्र का वृत्तान्त सुना है ?

**भोलानाथ** : हाँ, श्रीमान्, वही पत्र न जिसमे वे मोहन को अपनी समस्त सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बना गये है और रूपवती के संग मोहन को विवाह करने का आदेश कर गये हैं।

**शूरसेन** : हाँ, वही।

**भोलानाथ** : अच्छा तो फिर ?

**शूरसेन** : इस ससार मे लोग प्रायः लडको को गोद लिया करते है न ?

**भोलानाथ** : नि सन्देह, श्रीमान्।

**शूरसेन** : मैं लडके के स्थान पर एक लडकी को गोद लेना चाहता हूँ।

**भोलानाथ** : वह कौन बडभागी लडकी है, श्रीमान् ?

[ **चपरासी का प्रवेश।** ]

**चपरासी** : श्रीमान्! प्रमोदिनी जी सन्यासिनी कौमुदी देवी और चन्द्रसेन जी को सग लेकर आयी है। श्रीमान् से मिलना चाहती है।

**शूरसेन** : (**आश्चर्य से**) भोलानाथ ! भोलानाथ ! यह मै क्या सुन रहा हूँ! ऐसा आनंददायक सवाद ! क्या यह सच है ? क्या यह सम्भव है ? आह ! मुझे चक्कर आ रहा है, सम्हालो, नही तो मैं गिर पडूँगा।

[ **शूरसेन गिरने लगता है। भोलानाथ सँभालता है।** ]

**परदा गिरता है।**

## चौथा दृश्य

स्थान  मोहन के कमरे की दालान

समय : सन्ध्या

[मोहन और बल्देव का प्रवेश]

**मोहन :** शूरसेन जी का शोक तो हृदय विदीर्ण किये देता है, मित्र ! उन्हे देखकर जब मैं उनके यहाँ रहता था उस समय के उनके जीवन की एक-एक घटना का स्मरण आता है। कहाँ वह गर्व और निश्चिन्तता और कहाँ इस समय की नम्रता और शोक !

**बल्देव :** पर, भाई, कौमुदी के मिल जाने से उनका शोक कुछ तो कम हुआ। प्रमोदिनी माता के उद्योग से चन्द्रसेन के पागलपन का दूर होना, उनका सुनार्गी बनना तथा कौमुदी का और उनका विवाह हो जाना ये भी बडी अच्छी घटनाएँ हुई। इससे कालिन्दी की सखी उमा का भी कुछ दु ख घटा अन्यथा वह तो पागल-सी हो गयी थी।

**मोहन :** अब तो तुम्हारे विवाह को भी बहुत कम समय शेष है। कहो, विवाह की कभी-कभी उमग उठती है या नही ?

**बल्देव :** उमग उठती हो या न उठती हो, मेरा विवाह तो अब होगा ही, पर तुम अपने और बेचारी उस रूपवती के भाग्य का भी तो कुछ निर्णय करो। हम दोनो की समानता के लिए भी तो यह आवश्यक है। हमारी असमानता मे तो ईश्वरीय विचित्रता के नियम का भग होता है, क्योकि एक अपवाद तो चाहिए।

[ **चपरासी का प्रवेश।** ]

**चपरासी :** श्रीमान् रूपसेन जी और प्रमोदिनी जी पधारी है।

**मोहन :** (**आश्चर्य से**) कौन? मत्री जी! मंत्री जी!

**प्रतिहारी :** हाँ, श्रीमान्।

[**मोहन, बल्देव और चपरासी का** [illegible] **न।** ]

**परदा उठता है।**

## पाँचवाँ दृश्य

स्थान : रूपवती के कमरे की दालान

समय सन्ध्या

[रूपवती और रेवती खड़ी हैं। रूपवती गा रही है।]

(राग केदारा)

यह प्रेम जगत का सार, रहे यह अजर अमर।
यह प्रेम विश्व आधार, रहे यह अजर अमर।
मद मोह सभी, दुख आतप भी, हर लेवे प्रेम उदार।
रहे यह अजर अमर।
रिपु रहे नही, जग बीच कही, सुन इसकी मृदु झकार।
रहे यह अजर अमर।
दिखता भगवत, यह सकल जगत, हो इससे दृष्टि अपार।
रहे यह अजर अमर।
जो प्रेम लीन, वे दुख विहीन, हो भव सागर से पार।
रहे यह अजर अमर।

**रेवती** : कितना सुन्दर गायन है, बहन ! प्रेम ! प्रेम तो सचमुच प्रेम ही है, पर यह विश्व-प्रेम गा रहा है या मोहन के प्रेम की वशी बज रही है ?

**रूपवती :** (**लम्बी साँस लेकर**) क्या कहूँ, बहन ? अभी भी मेरे प्रेम के केन्द्र वही है। उनका प्रेम सूर्य के उस प्रकाश के सदृश है जो पहले कालिन्दी देवी रूपी प्राची के प्रकाशित करने मे ही अनुरक्त था, पर शनै. शनै सभी दिशाओ पर फैल गया, पर मेरा प्रेम अभी भी उस कमलिनी के प्रेम के सदृश है जो केवल कमलिनी नायक से ही प्रफुल्लित हो सकती है।

**रेवती :** आश्चर्य तो यह है, बहन, कि कालिन्दी देवी की मृत्यु हुए भी इतने दिन हो चुके पर अभी भी वे तुम्हारे सम्बन्ध मे चुप है।

**रूपवती :** इतना ही नही, सखि, मुझे उनकी मुद्रा देख शिवजी के उस विराग का स्मरण हो आता है जो उन्हे सती की मृत्यु के पश्चात् हुआ था।

**रेवती :** यदि वही विराग है, तो विशेष चिन्ता की बात नही है। भगवान् तुम्हे पार्वती बनावे।

**रूपवती :** (**लम्बी साँस लेकर**) यह सब तो भविष्य के गर्भ मे है, बहन।

**रेवती :** पर यह चुप्पी कब तक रहेगी, तुम्ही क्यो नही बात छेड़ती ?

**रूपवती :** मै ? बहन, मै ? कैसे आश्चर्य की बात करती हो ? उन्हें क्या सारा वृत्त ज्ञात नही है ! पिता जी का पत्र वे देख चुके है। स्त्री-हृदय का रहस्य कालिन्दी देवी के कारण वे जानते है। अभी नेह नगर से कौमुदी और

चन्द्रसेन का विवाह देखकर लौटे है। मेरे विवाह की बात! वह भी उनसे, और मै ही करूँ? सखि, कभी-कभी तुम बडे पागलपन की बात करती हो!

**रेवती :** परन्तु अन्त मे इसका निर्णय क्यो कर होगा?

**रूपवती :** अब बहुत शीघ्र निर्णय होगा, सखि, घबराओ नही। प्रमोदिनी जी कहती थी कि शूरसेन जी का एक आवश्यक पत्र लेकर उन्हे उनसे मिलना है। सुना है, उस पत्र मे मेरे सम्बन्ध की ही कुछ बाते है। उस समय जो कुछ भी हो, कुछ-न-कुछ निर्णय हो ही जायगा।

**रेवती :** कुछ-न-कुछ क्या, अच्छा ही निर्णय होगा, बहन।

**रूपवती :** वह जो कुछ भी हो, उसकी मुझे विशेष चिन्ता नही, केवल यह प्रतीक्षा और अनिश्चित् अवस्था ही मुझे दुख दे रही है। मै भी तो अपना मार्ग निश्चय कर चुकी हूँ। तुम्हे वता भी दिया है।

**रेवती :** परन्तु, बहन, उस बात का तो स्मरण मात्र करने से हृदय काप उठता है।

**रूपवती :** नही, नही, सखि, यह बात नहीं, वह भी है—एक अद्भुत प्रकार के आनन्द का मार्ग और जहाँ तक वैवाहिक जीवन का सुख है वहाँ तक तुम्हारे और बल्देव के जीवन को देखकर मै आनन्द प्राप्त करूँगी। इस आनन्द-अवलोकन मे भी तो अब केवल सत्रह दिन ही बाकी है।

[चपरासी का प्रवेश।]

**चपरासी :** श्रीमान् रूपसेन जी और प्रमोदिनी जी पधारी है, मोहन जी के कमरे मे गयी है, और आपको बुलाया है ।

**रूपवती :** (**आश्चर्य से**) कौन ? पिता जी ! पिता जी !

**चपरासी :** हाँ, श्रीमती जी ।

**रूपवती :** अहा हा ! मै अभी आयी ।

[ **चपरासी का प्रस्थान ।** ]

**रूपवती :** इस जीवन मे मुझे उनके दर्शन की आशा न थी । प्रमोदिनी भी उनके साथ आयी है, और उनके कमरे में मै बुलायी गयी हूँ । जान पडता है मेरे भाग्य-निर्णय का समय आ गया । मैने तुमसे अभी कहा था कि प्रतीक्षा और अनिश्चित अवस्था बहुत बुरी होती है, पर अब जब निर्णय का समय आया जान पड़ता है तब हृदय की और भी बुरी अवस्था हो गयी है ।

**रेवती :** सखि, तुम तो काँप रही हो ?

**रूपवती :** कुछ नही, बहन, कुछ नही, यह हृदय बड़ा अद्भुत है । परन्तु, सखि, अब तो मुझे उस न्यायालय मे जाना ही पड़ेगा ।

**रेवती :** अवश्य और वह भी तत्काल ! ईश्वर करे वह न्यायालय तुम्हारे लिए प्रेमालय हो जावे ।

**रूपवती :** पर, रेवती, इन पैरो मे जैसे किसी ने सीसा भर दिया है, उठ ही नही रहे है ।

**रेवती :** नही, नही, बहन, तुम्हे जाना ही होगा, ऐसे अवसरो पर तो हृदय को बहुत सम्हालने की आवश्यकता होती

है। विवेक और शान्ति, साहस और दृढता की ऐसे ही अवसरों पर परीक्षा होती है, तुम तो विदुषी हो।

[रूपवती का धीरे-धीरे रेवती की ओर देखते हुए प्रस्थान। रेवती का दूसरी ओर प्रस्थान।]

**परदा उठता है।**

## छठवाँ दृश्य

स्थान रूपसेन के मकान मे मोहन का कमरा

समय . सन्ध्या

**[मोहन, बल्देव, संन्यासी के वेष में रूपसेन और प्रमोदिनी बैठे हैं। रूपसेन ६० वर्ष का गौर वर्ण, दुबला आदमी है। कभी सुन्दर रहा होगा ऐसा प्रतीत होता है। सिर, दाढ़ी और मूँछे मुड़ी हुई हैं।]**

**मोहन :** मेरे बडे भाग्य है कि आपके पुन दर्शन हो गये, पिताजी !

**[रूपवती का प्रवेश। रूपवती आगे बढ़कर रूपसेन के पैर पकड़ लेती है। रूपसेन खड़े हो रूपवती को हृदय से लगा लेते हैं। रूपवती के नेत्रों से अश्रुधारा बह निकलती है । रूपसेन के भी आँसू गिरते हैं। दोनों बैठ जाते हैं।]**

**रूपवती :** **(गद्‌गद् हो)** पिताजी, पिताजी, आप बड़े निष्ठुर है ! मुझे तो इस जीवन मे पुनः दर्शन की आशा न थी।

**रूपसेन :** यह सब **(प्रमोदिनी की ओर संकेत कर)** माताजी की कृपा है। मै तो एक तीर्थ के मार्ग मे था और वह पथ नेह नगर और अयोध्या से ही होकर जाता था। मार्ग में माता जी मिल गयी और मेरे लाख मना करने पर

भी यहाँ ले ही आयी ।

**मोहन** : परन्तु, पिताजी, इस मार्ग से निकल जाना और हम लोगो को दर्शन न देना यह तो हम लोगो के सग अन्याय करना था ।

**रूपवती** : सरासर अन्याय था ।

**रूपसेन** : **(कुछ मुस्कराकर)** तुम लोगो की दृष्टि मे कदाचित् हो, परन्तु मेरा जीवन अब जिस स्रोत मे बह रहा है उस स्रोत के लिए इस प्रकार के सम्मिलन पर्वतो की चट्टाने है । मै अपने सासारिक कर्तव्यो को पूर्ण कर चुका । पारलौकिक अनुष्ठानो मे इन सब सम्मेलनो से बडी बाधा पहुँचती है ।

**प्रमोदिनी** : परन्तु, भाई,

**रूपसेन** : **(बात काटकर)** आपके तर्को का उत्तर मेरे सामर्थ्य के बाहर है । आप मुझसे बहुत आगे है । आपकी स्थिति मे आने के लिए मुझे अभी बहुत समय चाहिए । **(कुछ ठहरकर मोहन से)** बेटा, तुम्हारे साहसपूर्ण कर्तव्यो को सुन चित्त को बडा आनन्द हुआ । कहो, मेरा अन्तिम प्रार्थना-पत्र खोला था ?

**मोहन** : प्रार्थना-पत्र, पिता जी, प्रार्थना-पत्र ? आज्ञा-पत्र कहिए । आज्ञानुसार ही समय पर खोल लिया गया था ।

**प्रमोदिनी** : परन्तु उसकी आज्ञाओं का अब तक पालन न हुआ, क्यो ?

[ **मोहन कुछ उत्तर नहीं देता और मस्तक नीचा कर लेता है ।** ]

**प्रमोदिनी :** (**एक पत्र निकालकर बल्देव को देते हुए**) बेटा, यह पत्र शूरसेन जी ने तुम्हारे मित्र के नाम भेजा है। इस पत्र को तो पढ दे । हम सब लोग भी सुन लेगे ।

**बल्देव :** (**पत्र लेकर**) जो आज्ञा । (**पत्र खोलकर पढ़ता है ।**)

प्रिय पुत्र मोहन,

आशीष ।

ससार मे मेरे सदृश अभागे, कुकर्मी और पातकी बहुत कम लोग होगे । तुम्हारा अपमान कर मैने तुम्हारे ही सग अन्याय नही किया, परन्तु उस अपमान के फलस्वरूप मैने अपनी एकमात्र कन्या को भी खो दिया । उस दु ख को उसकी बडभागी माँ को बहुत काल तक न सहना पडा, परन्तु अपने कर्मो का प्रायश्चित करने के लिए इस दु.ख में आठो पहर और चौसठो घडी तप्त होने के लिए ईश्वर ने मुझे जीवित रखा है । बेटा, तुम्हारे हृदय की उच्चता और निर्मलता, और तुम्हारे कर्तव्य-पालन की निस्पृहता और दृढता केवल तुम्हारी ही नही आज सारे अयोध्या राज्य की सम्पत्ति हो गयी है। अब मुझे ज्ञात हुआ कि ससार मे सच्ची सम्पत्ति क्या है ? धन्य है उन रूपसेन जी को, जिन्होने सच्चे रत्न को पहचाना । मुझ अन्धे ने जो खोया, उसी को उन्होने पाया । जिसे मैने फेका, उसे उन्होने उठाया । तुम्हारा जो जीवन ससार को सुख पहुँचाने वाला है, संसार को पवित्र करने वाला है, उससे मुझ सदृश दु.खी, अभागे और पातकी का भी कुछ कल्याण हो सके, तो क्या तुम उससे मुझे वंचित रखोगे ? मैने

तुम्हारे सग जो व्यवहार किया है उससे मेरा अधिकार तो नही कि मै तुमसे कुछ चाहूँ, मेरा साहस भी न होता था कि मै तुमसे कुछ याचना करूँ, परन्तु, बेटा, तुम तो इन सब बातो के परे हो। जिसका जीवन पापी, दुखी और सन्तप्त जनो को अपने जीवन की आहुति देकर भी पवित्र, सुखी और शीतल करने के लिए है, उससे यदि मुझ सदृश दुखी और सतप्त पातकी भी कुछ आशा करे तो क्या यह अनुचित होगा ? मोहन, तुम मेरा इस कष्ट के नरक से उद्धार कर सकते हो और मुझे आशा है कि तुम मेरे पातको की ओर ध्यान न देकर यह करोगे भी। मुझे विश्वसनीय सूत्र से पता लगा है कि रूपसेन जी अपनी सम्पत्ति तुम्हे दे गये है और अपनी कन्या रूपवती के सग तुम्हे विवाह करने का आदेश कर गये है। तुम्हारी बाल-सहचरी कालिन्दी अब ससार मे नही है, पर उसके स्थान मे एक दूसरी उच्च हृदय वाली बाला रूपवती है। पहले मेरे गृह मे रहते हुए तुमको जिस प्रकार रूपसेन जी ने अपनाया था, उसी प्रकार उसकी हृदय-सर्वस्व रूपवती को मै यदि अपनी मान लूँ तो क्या उपयुक्त न होगा ? बेटा, रूपवती को ही कालिन्दी मानने, कालिन्दी के भाग की अपनी छोटी-मोटी संपत्ति उसे देकर और इस कालिन्दी का हाथ तुम्हारे हाथ मे देने से ही मेरा जीवन, दुखी—महादुखी—जीवन, त्राण पा सकता है।

पुत्र, क्या तुम मेरी प्रार्थना स्वीकृत न करोगे ?

कभी जिसे तुम अपना पिता कहते थे,<br>वही तुम्हारा अभागा पातकी और<br>दुखी शूरसेन।

**[पत्र पूरा करते-करते बल्देव का कण्ठ भर आता है। मोहन, बल्देव और रूपवती के नेत्रों से अश्रुधारा बह निकलती है। रूपसेन और प्रमोदिनी के नेत्रों में जल भर आता है। कुछ देर तक सन्नाटा छा जाता है।]**

**प्रमोदिनी :** (**मोहन से**) कहो, बेटा, क्या निश्चय किया ? रूपसेन जी की पवित्र आज्ञा है शूरसेन जी के दुःख-निवारण की योजना है, और इसी के सग मै, जो तुम्हारी गुरु हूँ, यही उपयुक्त समझती हूँ कि तुम रूपवती को ग्रहण करो।

**मोहन :** (**सिर उठाकर**) माता, क्या कहूँ ?

**प्रमोदिनी :** कहो, बेटा, कहो, जो कहना हो स्पष्ट कहो। ऐसे समयो मे ही स्पष्टवादिता की आवश्यकता होती है।

**मोहन :** हाँ, भगवती, स्पष्ट तो कहना ही होगा। माता, जिस समय रूपसेन जी का आज्ञा-पत्र खोला गया था, उस समय कालिन्दी देवी जीवित थी, उस समय मेरा कर्तव्य निश्चित था, परन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात् समस्या जटिल—अत्यन्त जटिल—हो गयी है।

**प्रमोदिनी :** कैसे, बेटा !

**मोहन :** वही कह रहा हूँ, माँ। मैने कालिन्दी की मृत्यु के पश्चात् सम्पूर्ण प्रश्न पर न जाने कितने काल तक विचार किया, यही प्रश्न मेरी दिवस की चिन्ता और रात्रि का स्वप्न रहा है। मैने बार-बार हृदय को रूपवती के सग विवाह करने को कहा है।

**प्रमोदिनी :** और हृदय ने क्या उत्तर दिया ?

**मोहन** : बहुत समय तक कुछ स्पष्ट नही। अन्त मे मुझे अनुभव हुआ कि जहाँ तक कि विवाह करने का प्रश्न है मै एक को भेंट कर चुका हूँ। जिस प्रकार कोई भक्त अपने इष्ट को नैवेद्य भेंट करता है, उसी प्रकार मै भी कर चुका हूँ। यह पृथक् बात है कि मेरा इष्ट मेरे नैवेद्य को ग्रहण न कर सका। भगवती, भेंट की हुई वस्तु इष्ट के ग्रहण न कर सकने के कारण क्या भेंटकर्त्ता लौटाकर उसे अन्य को दे सकता है? माता, मेरा हृदय विवाह की भावनाओं से रहित है। ऐसे हृदय को मै किस प्रकार रूपवती को भेंट करूँ? सारे विश्व से प्रेम करने की मुझ मे शक्ति है, मै रूपवती से प्रेम कर सकता हूँ, पर जहाँ तक वैवाहिक भाव का सम्बन्ध है, वहाँ तक मेरे पास कुछ शेष नही है। रूपवती के चरणो मे भेंट करने को मेरे पास वह भेंट नही है। (**रूपसेन से**) पिता जी, मै आप से क्षमा चाहता हूँ, अब आप ही को अधिकार है कि आप रूपवती के विवाह की अन्य योजना बनावे। मै स्वय विवाह का कार्य सचालन करूँगा और दहेज के रूप मे यह सारी सम्पत्ति उनकी होगी।

[ **कुछ देर को सन्नाटा छा जाता है। रूपवती खड़ी हो जाती है।** ]

**रूपवती** : (**भर्राये हुए स्वर से**) पिता जी, मुझे क्षमा कीजियेगा, इस समय लज्जा का मेरे हृदय मे कोई स्थान नही है। (**मोहन से**) धन्य है, देव! आपको धन्य है! आपने

अपनी दिशा का यथार्थ निर्णय किया, परन्तु आपने मेरे सम्बन्ध मे जो कुछ कहा वह सर्वथा अनुपयुक्त है। अब मेरा भी निर्णय सुन लीजिए। जिस प्रकार आप अपनी वैवाहिक भावना कालिन्दी देवी को भेट कर चुके है, उसी प्रकार मैने भी, पूज्य पिता जी के पत्र खोलने के दिन, पूज्य पिता जी की आज्ञानुसार, अपना हृदय आपके चरणों मे अर्पण कर दिया था। कालिन्दी देवी, दैवी कारण से आपकी भेट को स्वीकार न कर सकी और आप भी मेरी भेंट स्वीकार करने मे अपने को असमर्थ पाते है, अत:, देव, आपके न्याय के अनुसार ही मै भी यह भेट किसी अन्य को अर्पण नही कर सकती। **(रूपसेन से)** पिता जी, **(मोहन की ओर देखकर)** भले ही मैने आपकी आज्ञा से यह भेट इनके चरणो में की हो, किन्तु यदि अब आप भी इसे लौटाकर किसी दूसरे को अर्पण करने की आज्ञा देगे, तो यह मेरे लिए सम्भव नही है। व्यक्ति प्रेम-से विश्व-प्रेम के मार्ग मे मै भी बढूंगी, यह विशाल ससार मेरी सेवा का क्षेत्र होगा, मै उसी से आनन्द पाऊंगी और जन्म भर कौमार-व्रत धारण करूँगी।

**रूपसेन :** **(खड़े होकर)** धन्य, बेटी, धन्य, पुत्री, तुम्हारे कारण मैं भी धन्य हुआ। तुम्हारे कौमार-व्रत का मेरा दु:ख तुम्हारे विश्व-प्रेम के सेवा-व्रत से दूर हो गया।

[**मोहन और रूपवती, रूपसेन के पैरों पर गिर पड़ते हैं, रूपसेन जी उठाकर दोनों को हृदय से लगाते हैं। सब लोग यथास्थान बैठते हैं।** ]

**मोहन :** पिताजी, इस सारी घटना मे केवल दो ही दुःख मुझे आजन्म पीडित करते रहते, एक आपकी और दूसरे शूरसेन जी की आज्ञा उल्लघन का। आपने मेरे भारी दु.ख का निवारण कर दिया, अब दूसरे का शूरसेन जी को समझाकर निवारण कराना माता जी के हाथ मे है।

**रूपवती :** पिताजी, एक प्रार्थना और है।

**रूपसेन :** कह, बेटी, वह भी कह दे।

**रूपवती :** पिताजी, आपकी इस अतुल सम्पत्ति की मुझे आवश्यकता नही है। (**मोहन की ओर देखकर**) ये तो आज भी उस सम्पत्ति से भोजन और वस्त्र के अतिरिक्त कुछ ग्रहण करते नही है, मै इस सारे वैभव का क्या करूँगी ? हम लोगो का जीवन तो अब सरयू किनारे एक छोटी सी कुटी मे व्यतीत होना चाहिए। ईश्वरीय सौन्दर्य, ईश्वरीय वैभव को निरखते हुए इस विशाल विश्व से प्रेम और इस विशाल सृष्टि की सेवा करके ही हम लोगो को सच्चा सुख मिल सकता है। पिताजी, इस सारी सम्पत्ति को आप लोकोपकार के लिए दान करदे। आपको इसी मे आनन्द होना चाहिए कि आप जिस त्याग और सन्यास-सुख का अनुभव इस अवस्था मे कर

रहे है, उसे आपकी इस कन्या को आपकी ही कन्या को नही, किन्तु आज से तो आपकी और शूरसेन जी की दो श्रीमान् पिताओ की कन्या को, युवावस्था से ही अनुभव करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

**रूपसेन :** बेटी, तेरे इस अन्तिम प्रस्ताव को मानने से अधिक हर्ष मुझे और किसी बात मे नही हो सकता था, मैंने आजीवन इस धन से लोकोपकार करके ही आनन्द पाया है और आज यदि यह सारी की सारी सम्पत्ति लोको-पकार के लिए जावे तो इससे अधिक इसका कोई सदुपयोग नही हो सकता, पर इस सम्पत्ति पर मेरा अब कोई अधिकार नही है । मै सन्यासी हूँ और यह सारी सम्पत्ति मोहन की और तुम्हारी है। तुम लोग जो उचित समझो इसका कर सकते हो।

**मोहन :** यदि यही बात है, पिताजी, तो रूपवती की आज्ञा-नुसार आज ही मैने यह सारी सम्पत्ति आपके नाम से लोकोपकार के लिए प्रदान की।

**रूपसेन :** मेरे नाम से बेटा, मेरे नाम से ? मेरा तो इस सम्पत्ति पर कोई अधिकार नही है, तुम्हारे नाम से।

**मोहन :** यह कभी नही हो सकता, पिताजी, कभी नही, अवश्य आपके नाम से और इसका किस प्रकार उपयोग होगा, इसका निर्णय माता जी करेगी।

**प्रमोदिनी :** रूपसेन जी, आपको धन्य है और धन्य है आपकी इस अद्भुत बेटी को! **(मोहन से)** बेटा, तू ने मुझे भी आज

धन्य किया। मैने तुझे विवाह करने की सम्मति इसलिए दी थी कि एक तो मैने उसमें कोई हानि न देखी और दूसरे मैने यह सोचा कि शूरसेन जी तथा रूपसेन जी एव सबसे अधिक रूपवती के सन्तोष के साथ ही तेरी युवावस्था के लिए भी यही मार्ग कदाचित् उपयुक्त हो। विश्व-प्रेम के पथ पर तू विवाहित होकर भी चल सकता था। बेटा, कभी-कभी युवावस्था मे भावुकता और आवेश के कारण मनुष्य कई ऐसे निर्णय कर बैठते है कि उन पर स्थिर नही रह सकते और फिर गहरे गढों मे गिर पडते है, इसीलिए हमारे यहाँ ब्रह्मचर्य के पश्चात् गृहस्थाश्रम और तदुपरान्त वाणप्रस्थ और सन्यस्त की व्याख्या है, परन्तु यहाँ तो शिष्य गुरु से भी आगे बढ गया। गुरु की भी इस प्रकार की आज्ञा को तूने न माना। इस प्रकार के शिष्य गुरु को धन्य करते है। गुरु की महत्ता गुरु मे नही, शिष्य मे है।

**यवनिका**

**समाप्त**

# सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य

# निवेदन

यह नाटक मेरी तीसरी जेल-यात्रा के समय नागपुर जेल मे दो दिनो में लिखा गया था ।

स्वर्गीय बाबू प्रेमचन्दजी को यह नाटक बहुत पसन्द आया और उन्होने इसे 'हस' के दो अङ्को मे प्रकाशित किया । इसके प्रकाशित करने पर 'हस' मे जमानत माँगी गयी थी ।

अब यह पुस्तकाकार प्रकाशित हो रहा है ।

—गोविन्ददास

## पात्र, स्थान और समय

पुरुष—

**लाला चतुर्भुजदास** : पीछे से राजा चतुर्भुजदास एक साहूकार और जमीदार

**त्रिभुवनदास** : पीछे से सर त्रिभुवनदास—चतुर्भुजदास का पुत्र—पीछे से प्रातीय होम मेम्बर

**मनोहरदास** : त्रिभुवनदास का पुत्र

**विश्वेश्वरदयाल** : तहसीलदार, पीछे से डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट

स्त्री—

**सरस्वती देवी** : त्रिभुवनदास की पत्नी

अन्य पात्र पात्री—

चतुर्भुजदास का गुमाश्ता, त्रिभुवनदास के साथी डाक्टर, नौकर इत्यादि

स्थान—एक नगर

समय { **पहला अक १९०५ ई०**
**दूसरा अक १९३० ई०** }

# पहला अङ्क

स्थान  लाला चतुर्भुजदास के मकान का बैठकखाना

समय . रात्रि

[कमरा पुराने ढग का है। कोई सजावट नहीं है। तीन ओर दीवारे दिखती हैं, जो सफेद कलई से पुती हुई हैं; पर बहुत मैली हो गयी हैं। दाहिनी और बायीं दीवार में एक-एक छोटा दरवाजा है, जिसके किवाड़ पुराने ढंग के भद्दे हैं। किवाड़ खुले हुए हैं, जिनसे अन्य छोटे-छोटे गन्दे कमरों के कुछ भाग दिखायी देते हैं। कमरे के सीलिंग में कपड़े की छत बँधी हुई है, जो अत्यन्त मैली है और यहाँ-वहाँ फट गयी है। जमीन पर टाट बिछा है। टाट पर सामने की दीवार से लगी हुई एक गद्दी है। उस पर दो मसनद लगे हैं। गद्दी की चादर और तकियों की खोलियाँ धुले हुए सफेद कपड़े की हैं। गद्दी के नीचे दो छोटी-छोटी भद्दी-सी लकड़ी की सन्दूके रखी हुई हैं। इन पर कुछ बहियाँ रखी हैं। दोनों सन्दूकों के बीच में एक परात पर रखी हुई पीतल की समाई के सब घरों में बत्तियाँ जल रही हैं। कमरा खाली है। चतुर्भुजदास और उसके गुमाश्ते का दाहिनी ओर के दरवाजे से प्रवेश। चतुर्भुजदास साँवले रंग का लम्बा और साधारणतया मोटा मनुष्य है। अवस्था लगभग ५० वर्ष की है। बाल और बड़ी-बड़ी मूँछें आधी सफेद हो गयी हैं। जाँघों तक लम्बा अँगरखा

**और घुटनों तक चढ़ी हुई धोती पहने है। गले में दुपट्टा डाले और सिर पर दोपलिया टोपी लगाये है। सभी कपड़े मोटे और मैले हैं। गुमाश्ता गेहुएँ रंग का दुबला और ठिगना मनुष्य है। अवस्था लगभग ४० वर्ष की है। अचकन और पाजामा पहने तथा सिर पर यह भी दुपलिया टोपी लगाये है। इसके वस्त्र चतुर्भुजदास के वस्त्रों से पतले और साफ हैं।]**

**चतुर्भुजदास :** **(चारों ओर देखकर)** देखते हो, अशर्फीलाल, एक दिन को तहसील मे गवाही देने गया और यहाँ दिवाला निकालने की तैयारी हो गयी। आजकल जब-जब मै कही जाता हूँ, इसी तरह का कोई-न-कोई खुराफात होता है। **(जोर से)** भैरों, अरे ओ भैरो !

**[बायीं ओर के दरवाजे से धोती पहने नगे बदन एक काले मनुष्य का प्रवेश।]**

**चतुर्भुजदास :** यहाँ दिवाली क्यो की है ? समाई मे इतनी बत्तियाँ !

**भैरों :** हम का करी, सरकार, बाबूजी हुकुम दिया रहा ··

**चतुर्भुजदास :** बाबूजी हुकुम दिया रहा ! बत्ती बुझा जल्दी। बस, एक बत्ती बहुत है।

**[भैरों समाई की एक बत्ती छोड़कर बाकी सब उसी तेल में ठंडी कर देता है।]**

**चतुर्भुजदास :** **(गद्दी की ओर आगे बढ़ उसकी धुली हुई चादर और तकियों की खोलियों को देखकर)** और ये चादर और खोलियाँ क्यो बदली है ?

**भैरों :** हम करी, हजूर यहू वाबूजी

**चतुर्भुजदास :** उठा, उठा, इस चादर को उठा और उतार खोली। पुरानी चादर और खोली ला।

**भैरो :** पुरानी चादर और खोली नो धोबी के डाल दिहिन।

**चतुर्भुजदास :** धोबी का मैने क्या कर्ज खाया है। (**कुछ ठहरकर**) अच्छा, उन्हे उतारकर भीतर रख। जब तक पुरानी चादर-खोलियाँ धोबी के यहाँ से आयँगी, तब तक गद्दे-तकिये बिना चादर-खोली के रह सकते है।

[**भैरों तकियो की खोली उतारने लगता है।**]

**चतुर्भुजदास :** कहो, अशर्फीलाल, अब क्या करना ? आजकल के लडको का तो सिर ही ठिकाने नही है। कुछ दिन से त्रिभुवन का सिर भी बिगडता जा रहा है।

**अशर्फीलाल :** क्या कीजिएगा, हुजूर, जमाना ही ऐसा है।

**चतुर्भुजदास :** एक दिन को पीठ फेरता हूँ तब तो यह दशा होती है, जिस दिन आँखे बन्द होगी उस दिन तो घर चौपट ही हो जायगा।

**अशर्फीलाल :** पर आप तो जो कुछ करते है, उन्ही के लिए करते है। अगर उनको सब चौपट कर देना ही मजूर है, तो आप उसे कहाँ तक बचायेगे ?

**चतुर्भुजदास :** (**लम्बी साँस लेकर**) हाँ, मै तो अब नदी किनारे बैठा हूँ। (**कुछ ठहरकर लम्बी साँस ले**) उसकी माँ सन् १८९५ मे मरी, क्यो ?

**अशर्फीलाल :** हाँ, सरकार, दस साल हो गये, कल की-सी

**चतुर्भुजदास :** कुछ पूछो मत। यह तो सब से ज्यादा डर की बात है। और सब बाते एक तरफ और यह एक तरफ।

**अशर्फीलाल :** पर, हुजूर को यह कैसे मालूम हुआ ?

**चतुर्भुजदास :** बहुत पोशीदा बात है।

**अशर्फीलाल :** क्या सरकार समझते है कि मुझसे बात बाहर जा सकती है ?

**चतुर्भुजदास :** नही, यह बात नही है, अगर मुझे ऐसा शक होता, तो तुमसे कहता ही क्यो ? पर इसलिए जता दिया कि भूल से भी बात मुँह से न निकल जाय। तुम जानते हो, तहसीलदार साहब आज तहसील कचहरी मे मुझे अलग बात करने को ले गये थे।

**अशर्फीलाल :** हाँ, वह तो मुझे मालूम है।

**चतुर्भुजदास :** उन्होने मुझसे कहा कि डाकखाने से कुछ चिट्ठियाँ पकडी गयी हैं।

**अशर्फीलाल :** ओ हो !

**चतुर्भुजदास :** **(लम्बी साँस लेकर)** जब से मैने यह सुना है अशर्फीलाल, मेरा चित्त ठिकाने नही है।

**अशर्फीलाल :** हुआ ही चाहिए, सरकार।

**[दोनों कुछ देर तक चुप रहते हैं।]**

**अशर्फीलाल :** यह सब झगडा कॉलेज से शुरू हुआ होगा।

**चतुर्भुजदास :** **(जल्दी से)** बिल्कुल ठीक कहते हो। ये जितने लडके एफ० ए०, बी० ए० पास करते है, इनको यही

दशा होती है। ऐसा जानता तो उसे क्यो पढाता और बोर्डिंग मे रखता।

**अशर्फीलाल :** पर उसके बिना भी तो आजकल काम नही चलता, हुजूर। खैर, ईश्वर को धन्यवाद दीजिए कि बी० ए० पास कर वे बोर्डिंग से घर आ गये। अब वहाँ की सोहबत से पिण्ड छूटा।

**चतुर्भुजदास :** पर इससे क्या, अशर्फीलाल, अभी भी उसी तरह के लोग तो उसके पास आते है। वह भी उसी तरह के लोगो के पास जाता है। **(लम्बी साँस लेकर)** क्या कहूँ, भाई, एक ही लडका, उसका यह हाल होता जाता है। रुपये को कौडी समझने लगा है और जो सरकार हमारे माँ-बाप के माफिक है, उसके खिलाफ हो रहा है। तुम जानते हो, मै उसे कितना प्यार करता हूँ। जब सोचता हूँ कि अगर पैसा उडाने की उसे लत पड गयी, तो वह भिखारी हो जायगा और सरकार के खिलाफ हुआ, तो बगालियो के माफिक जेल जायगा, तो उसी की तकलीफ सोचकर कलेजा मुँह को आ जाता है, आँखो के आगे अँधेरा छा जाता है। फिर यह भी चिन्ता खाये जाती है कि इसकी यह हालत रही, तो बहू की क्या दशा होगी।

**अशर्फीलाल :** पर अभी तो बहुत बिगाड़ नही हुआ है, हुजूर।

**चतुर्भुजदास :** हाँ, अभी तो मामला सुधर सकता है। अब तक तो उसने मेरी किसी बात का बेरुखाई से जवाब

तक नही दिया है, हालॉकि उसके चाल-ढाल मे जरूर फर्क पडा है । उसे समझाऊँगा। **(कुछ ठहरकर)** अशर्फीलाल, एक वक्त जहॉ लडका उडाऊ हुआ कि पहले पैसे उडते है, फिर रुपये और फिर हीरे-मोती, आखिर घर-का-घर उड जाता है। इसी तरह जहॉ राज-द्रोह घर मे आया कि पहले जेल होती है, फिर काला पानी और फिर फॉसी। ये रास्ते ही अच्छे नही है। **(कुछ ठहरकर जोर से)** भैरो! ओ भैरो!

**अशर्फीलाल :** **(उठकर)** मै अभी बुलाता हूँ।

**[अशर्फीलाल के बाहर जाने के पूर्व ही भैरों का प्रवेश।]**

**चतुर्भुजदास :** बाबूजी कहाँ है ?

**भैरों :** बाइसिकिल पर बाहिर गइन है, सरकार, कहा रहा सात बजे भर मे आ जइ है।

**चतुर्भुजदास :** **(कुछ सोचते हुए)** सात तो बज ही रहे होगे। **(कुछ ठहरकर)** और बहू को कुछ हरारत थी। उसकी तबीयत कैसी है ?

**भैरों :** अब तो ठीक है, हजूर। उन सँदेसा पठवा है कि भोजन तैयार है।

**चतुर्भुजदास :** **(कुछ ठहरकर)** आज मै भोजन न करूँगा।

**अशर्फीलाल :** यह क्या बात है, सरकार। रज का यह मतलब नही है कि भोजन ही न किया जाय। आज दौरे के सबब दोपहर को भी ठीक भोजन नही हुआ है। अब हुजूर की ऐसी उम्र नही है कि इस तरह काम चल सके।

**चतुर्भुजदास :** पर आज तो भूख ही नही है, अशर्फीलाल।

**अशर्फीलाल :** तब शायद बहूजी भी न खायँगी। दो-चार कौर ही खा लीजिए, पर खाइए जरूर। लंघन से बहुत कमजोरी हो जाती है और फिर बहूजी का भी तो खयाल रखना है, खासकर इस वक्त।

**[चतुर्भुजदास लम्बी साँस लेकर उठता है। बायीं ओर के दरवाजे से प्रस्थान। अशर्फीलाल और भैरों भी जाते हैं। कुछ देर तक कमरा खाली रहता है। फिर दाहिनी ओर के दरवाजे से त्रिभुवनदास और उसके दो साथियों का प्रवेश। त्रिभुवन-दास लगभग बीस वर्ष का सॉवले रंग, पर गठे हुए शरीर का कुछ ऊँचा, साधारणतया सुन्दर मनुष्य है। बाल लम्बे हैं और छोटी-छोटी मूँछे। कोट, कमीज और धोती पहने तथा सिर पर काली टोपी लगाये है। उसके साथी भी युवक हैं। उनकी वेष-भूषा भी त्रिभुवनदास के समान ही है। दरवाजा छोटा होने के कारण उसमें से आते समय चौखट त्रिभुवनदास के सिर में लगती है।]**

**त्रिभुवनदास :** **(सिर पकड़कर)** आह ! कितना छोटा दरवाजा है, सिर फूट गया, पर ऊँचा थोडे ही किया जा सकता है, उसमे तो रुपये लगेंगे।

**एक साथी :** क्यों, अधिक लग गया क्या ?

**त्रिभुवनदास :** उँह, यह तो नित्यप्रति का धन्धा है। **(आगे बढ़कर, गद्दी-तकिये और समाई आदि को देखकर अपने साथियों में)** जान पड़ता है लाला साहब आ गये।

'पहला : यह कैसे ?

**त्रिभुवनदास :** देखते नही हो, समाई मे एक ही बत्ती है और गद्दी-तकियो पर चादर-खोली नही है ।

**[उसके दोनों साथी हँस पड़ते हैं ।]**

**त्रिभुवनदास :** (**जोर से**) भैरो ! ओ भैरो !

**[भैरों का प्रवेश ।]**

**त्रिभुवनदास :** तुझ से कहा था न कि गद्दी-तकियो पर नयी चादर-खोली चढा देना और समाई मे पूरी बत्तियाँ लगाना ।

**भैरों :** हम तो चढा दिहन रहै और लगा दिहन रहै, साहिब, पर का करी । बडे सरकार उतरवा दिहिन और बुझवा दिहिन ।

**त्रिभुवनदास :** फिर मै कहाँ बैठूँ ? तेरे सिर पर ?

**भैरो :** तौ हम का करी सरकार

**त्रिभुवनदास :** ला बे, चादर-खोली ला और फिर चढा ।

**भैरों :** पर, हजूर

**त्रिभुवनदास :** (**जोर से**) लाता है या जूते लगाये जायँ ।

**[भैरों जल्दी से चला जाता है ।]**

**त्रिभुवनदास :** (**अपने साथियों से**) अब कहो, मित्रो, इस घर मे मेरा निर्वाह किस प्रकार हो ? मै कोई दुधमुँहा बच्चा नही हूँ । बीस वर्ष का हुआ । नयी चादर-खोली भी नही चढवा सकता ।

**'पहला :** सचमुच यह तो बड़ा अन्याय है ।

**दूसरा :** अवश्य ।

**त्रिभुवनदास :** यह तो एक उदाहरण-मात्र है । हर बात मे यही आपत्ति है । (**कमरे को चारों ओर से देखकर**) देखते हो यह कमरा । कोई कह सकता है कि यह कमरा उस मनुष्य का बैठकखाना है, जिसके पास पच्चीस लाख रुपये तो नकद है और लाखो की जायदाद अलग ।

**दूसरा :** पुताई तो जान पडता है पॉच वर्षो से नही हुई ।

**पहला :** ये गद्दी-तकिये तथा कपड़े की छत तो बहुत कर आपके दादा के समय की होगी ।

**दूसरा :** और यह समाई तो कदाचित् आपके परदादा के समय की ।

[**भैरों आकर चादर बिछाता है ।**]

**त्रिभुवनदास :** कुछ पूछो मत । इतना गन्दा मकान और सामान है, जिसका ठिकाना नही । फिर सामान तो है ही कहाॅ ? न कुर्सियाॅ है, न टेबिले, न शीशे है, न लैम्प, न टब है, न कमोड । गोबर से मकान की जमीन लीपी जाती है और उसी गन्दी जमीन पर दुर्गन्ध में भोजन बनता है । सवारी तक नही, पैदल घूमो या टूटी-सी साइकिल पर । कोई भला आदमी इस प्रकार की रहन-सहन मे रह सकता है ? इससे तो बोर्डिङ्ग-हाउस लाख दरजे अच्छा था ।

**पहला :** इसमे क्या सन्देह है ।

**दूसरा :** वहाॅ के पाखाने भी इन कमरो से अच्छे है ।

**त्रिभुवनदास :** भई, जब बोर्डिङ्ग-हाउस मे था तभी अच्छा था। यहाँ तो वीमार पड जाऊँगा। भूल हुई, नही तो दो-चार वर्ष जान-बूझकर फेल होता, तो बोर्डिङ्ग मे रहने को और मिलना।

**पहला :** फिर जब इन जरा-जरा-सी बातो मे यह दशा है, तव आपके जो वडे-वडे मिद्धान्त है, उनमे आपकी और उनकी पटरी कैसे बैठेगी ?

**दूसरा :** विल्कुल नही वैठ सकती।

**त्रिभुवनदास :** तुम जानते हो कि मै सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य का पुजारी हूँ। चाहे लाला साहव से बने या न बने, चाहे घर मे रहूँ या घर छोड दूँ, अपना सिद्धान्त नही छोड सकता। अब तक तो पढता था, सत्रह वर्ष की अवस्था से बोर्डिङ्ग-हाउस मे रहने लगा था, बातें ही दूसरी थी। प्रत्यक्ष मे उनसे इस प्रकार की बाते तक करने का अवसर तक नही आया, वरन् ऐसे अवसरो को मैं स्वय ही टालता रहा, पर अब इस प्रकार कार्य थोडे ही चल सकता है। **(भैरों से, जो चादर बिछाकर खोलियाँ चढ़ा रहा है)** जल्दी चढा।

**पहला :** बहूजी को भी इस घर मे बडा कष्ट होगा।

**त्रिभुवनदास :** हाँ, उन्हे घर का सब काम हाथ से करना पडता है। रोटी वनानी पडती है, मठा बिलोना पड़ता है। महरी केवल बर्तन माँजती है और झाड़ू लगाती है। बस एक यह गधा भैरों नौकर है। महरी तो थोड़ी

देर को आती है। फिर इस समय तो उन्हे और भी कष्ट है।

**पहला** : यह क्यो, उनका स्वास्थ्य तो अच्छा है न ?

**त्रिभुवनदास** : हाँ, हाँ, स्वास्थ्य तो साधारणतया अच्छा है; पर (**मुस्कराकर**) बच्चा होनेवाला है।

**दूसरा** : यह तो आपने बडे हर्ष की बात सुनायी।

**पहला** : इसमे क्या सन्देह है ? मिठाई खिलाइए, मिठाई।

**दूसरा** : ऐसी दशा मे भी लाला साहब ने भोजन बनाने के लिए मिसरानी और पूरे समय के लिए महरी का प्रबन्ध नही किया ?

**त्रिभुवनदास** : अभी तीन ही महीने हुए है। उनका सिद्धान्त तो यह है न, कि स्त्रियो को घर का कार्य करना ही चाहिए। इसी से उनका व्यायाम होता है, पर खैर, इस समय के लिए तो दो-चार दिनो मे मिसरानी और महरी का प्रबन्ध हो जायगा। (**भैरों से**) क्यो बे, इतनी देर क्यो लगा रहा है ?

**भैरों** : हो गइन, हजूर। (**तकिये गद्दी पर रख देता है।**)

**त्रिभुवनदास** : चल, जल्दी बत्ती लगा।

**पहला** : देखिए, आप एक काम कीजिएगा।

**त्रिभुवनदास** : क्या ?

**पहला** : इस मिसरानी और महरी के नौकर रह जाने पर फिर उन्हे न निकलने दीजिएगा।

**त्रिभुवनदास** : यह तो होगा ही।

**[बत्ती लगाकर भैरों का प्रस्थान । तीनों गद्दी पर बैठते हैं । कुछ देर तीनो चुप रहते हैं ।]**

**त्रिभुवनदास :** हाँ तो हम लोगो की उस विपय की चर्चा अधूरी ही रह गयी । हम लोग कहाँ तक आये थे ?

**दूसरा : (कुछ सोचते हुए)** आपने कदाचित् यह कहा था कि बग-भग का प्रश्न प्रान्तीय न होकर अखिल भारतीय है ।

**पहला :** हाँ, हाँ, यही तक चर्चा हुई थी ।

**त्रिभुवनदास :** अवश्य, यह प्रान्तीय प्रश्न न होकर अखिल भारतीय है ।

**पहला :** कैसे ?

**त्रिभुवनदास :** बात यह है कि स्वतन्त्रता के लिए हमे सबसे अधिक आवश्यकता एकता की है, इसीलिए हमारे बीच मे फूट डालकर राज्य करना, यह अग्रेजी राज्य की नीति है । बग-विच्छेद मे बगाली जाति को, जो इस समय अपने अधिकारो को सबसे अधिक पहचानने लगी है, दो टुकडो मे बॉट देने का सरकार का उद्देश्य छिपा हुआ है । आज जो बगाल मे हुआ, वही कल अन्य प्रान्तो मे होगा । इसीलिए बग-भग के विरोध मे जो आन्दोलन हो रहा है, उसमे अरविन्द घोप, सुरेन्द्रनाथ बेनरजी और विपिनचन्द्रपाल आदि को तिलक सहयोग दे रहे है ।

**पहला : (अपने साथी से)** आप ठीक कह रहे है । बग-भग

अखिल भारतीय प्रश्न ही है ।

**दूसरा :** हाँ, जान तो ऐसा ही पडता है ।

**त्रिभुवनदास :** सन् १८५७ का स्वातन्त्र्य-समर, जिसे अग्रेज 'सिपाही-विद्रोह' कहकर सदा उसका महत्त्व घटाने का प्रयत्न करते है, इसीलिए सफल नही हुआ कि हम सयुक्तप्रान्त-निवासियो को अन्य प्रान्तो के लोगो ने सहायता नही दी , वरन् उल्टी हमारे विरुद्ध अग्रेजो की सहायता की । बग-भग के विरुद्ध आन्दोलन मे यदि सारे भारतवर्ष ने योग दिया, तो यह आन्दोलन सफल हो जायगा । इतना ही नही, किन्तु हममे एकता और सगठन हो जायगा और उसका हम स्वतन्त्र होने के व्यापक आन्दोलन मे उपयोग कर सकेगे । फिर सन् १८५७ का युद्ध था और यह आन्दोलन है । इसमे और उसमे तो एक बड़ा भारी अन्तर है ।

**पहला :** किस प्रकार का ?

**त्रिभुवनदास :** युद्ध मे देश का सर्वसाधारण जनसमुदाय, जब तक उसे सैनिक-शिक्षा न मिली हो, नही लड़ सकता । युद्ध मे सेनाऐं लड़ती है, तोपो, बन्दूको आदि जिन बडे-बड़े शस्त्रो का उपयोग युद्ध मे होता है, वे न सबके पास रहते ही है और न सैनिक-शिक्षण बिना सब उनका उपयोग ही कर सकते है ; परन्तु इसके विपरीत आन्दोलन की सफलता, आन्दोलन के शस्त्रो का जन-समुदाय-द्वारा उपयोग होने पर निर्भर रहती है ।

वर्तमान बंग-विच्छेद सम्बन्धी आन्दोलन के बॉयकाट-शस्त्र का जब तक समस्त देश की जनता उपयोग न करेगी, तब तक यदि बगाल की जनता ने इसका उपयोग भी किया तो भी उतनी सफलता नही मिल सकती ।

**दूसरा :** आपको आशा है कि यदि हमने ब्रिटिश माल का बॉयकाट कर दिया, तो बंगाल के दोनो टुकड़े फिर एक कर दिये जायँगे ?

**त्रिभुवनदास :** बॉयकाट का अर्थ केवल ब्रिटिश-माल का बॉयकाट नही है ।

**पहला :** तब ?

**त्रिभुवनदास :** इसका पूरा अर्थ समझने के लिए इसके इतिहास को जानना आवश्यक है । तुम लोग जानते हो, 'बॉयकाट' शब्द कैसे निकला ?

**पहला :** नही ।

**दूसरा :** मै भी नही जानता ।

**त्रिभुवनदास :** इस शब्द की उत्पत्ति आयर्लैण्ड मे हुई है । सन् १८७९ मे आयर्लैण्ड मे जमीदारो के विरुद्ध किसानों का बडा भारी आन्दोलन चल रहा था ।

**पहला :** अच्छा !

**त्रिभुवनदास :** उस समय के आयर्लैण्ड के नेता पार्नेल ने एक सार्वजनिक सभा मे भाषण देते हुए उपस्थित जनता से पूछा कि यदि किसानों की छीनी हुई जमीन को किसी ने ले लिया, तो आप लोग क्या करेंगे ? उपस्थित लोगों

मे एक ने उत्तर दिया, हम उसे गोली से उडा देगे।

**पहला :** बडा वीरोचित उत्तर था।

**त्रिभुवनदास :** हाँ, किन्तु पार्नेल ने उससे भी अधिक प्रभावशाली युक्ति बतायी।

**दूसरा :** वह क्या ?

**त्रिभुवनदास :** यही बहिष्कार। पार्नेल ने जो शब्द उस समय कहे थे, वे जब मैने पढे तब मुझे इतने अच्छे जान पड़े कि मैने उन्हे कण्ठस्थ कर लिया है।

**पहला :** उसने क्या कहा था ?

**त्रिभुवनदास :** उसने कहा था कि 'छीनी हुई भूमि को यदि कोई लेवे, तो जहाँ कही भी वह व्यक्ति मिले—सडक पर, दूकान मे, यात्रा करते हुए, बाजार मे या गिरजाघर में, उसे उँगली दिखायी जाय, उसका बहिष्कार किया जाय, कोढी के समान उसका तिरस्कार किया जाय। सदैव उसे इस बात का स्मरण दिलाया जाय कि उसने महान् दुष्कर्म किया है। यह गोली की अपेक्षा कही अधिक परिणामकारक शस्त्र होगा।'

**दूसरा :** और आयर्लैण्ड मे इसका उपयोग हुआ ?

**त्रिभुवनदास :** हाँ, इस भाषण के एक मास के भीतर ही।

**पहला :** किस प्रकार ?

**त्रिभुवनदास :** आयर्लैण्ड के एक जमीदार के नौकर केप्टन बॉयकाट के ऊपर यह शस्त्र सर्वप्रथम चलाया गया। उसके नौकरो को उसकी नौकरी छोड़नी पड़ी। उसकी

खेती के लिए रखवाले, उसकी गाडियो के लिए हाँकने-वाले, मिलना असम्भव कर दिया गया। लुहार उसके घोडों की नाले न बाँध सकता था और न कोई दूकानदार उसे कोई सामान बेच सकता था। यहाँ तक हुआ कि चिट्ठीरसा उसे चिट्ठी तक न देने को बाध्य कर दिया गया।

**पहला :** ओ हो !

**त्रिभुवनदास :** क्या पूछते हो, आयर्लैण्ड का हर बात मे सगठन ही ऐसा होता था। तभी तो इतने छोटे से और निकट-तम पडोसी देश होने पर भी इगलैण्ड उसे अपने अधीन रखने मे इतनी कठिनाइयाँ देख रहा है। वहाँ के इतिहास का तो एक-एक शव्द भारतीयो को मनन करना चाहिए।

**दूसरा :** केप्टन बॉयकाट के बहिष्कार का फल क्या निकला ?

**त्रिभुवनदास :** अन्त मे उसकी खेती की रक्षा करने के लिए सरकारी पुलिस सहित अलस्टर से वहाँ के प्रसिद्ध 'आरेंजमैन' नामक पचास स्वय-सेवक आये।

**दूसरा :** तो अन्त मे उसकी खेती की रक्षा हो गयी ?

**त्रिभुवनदास :** हाँ, किन्तु उस रक्षा का परिणाम कुछ न निकला।

**पहला :** कैसे ?

**त्रिभुवनदास :** साढे तीन सौ पाउण्ड की खेती की रक्षा मे पैतीस सौ पाउण्ड खर्च पड़ गया।

**पहला :** (हँसकर) ओ हो !

**त्रिभुवनदास :** इतना ही नही हुआ । अन्त मे केप्टन बॉयकाट का आयर्लैण्ड मे रहना असम्भव हो गया और वह इगलैण्ड भाग गया ।

**दूसरा :** तो केप्टन बॉयकाट के नाम पर बहिष्कार का नाम बॉयकाट पडा है ?

**त्रिभुवनदास :** हॉ, केप्टन बॉयकाट के नाम पर। बात यह हुई कि इस अत्यन्त प्रभावपूर्ण बहिष्कार-प्रणाली को क्या नाम दिया जाय, इस पर एक अमेरिकन पत्र-प्रतिनिधि विचार कर रहा था। तब एक पादरी ने उसे सुझाया कि जिस व्यक्ति के ऊपर सर्वप्रथम इस शस्त्र का उपयोग हुआ है, उसी का नाम इस प्रणाली को दे देना चाहिए । तब से अग्रेज़ी भाषा मे इस शब्द का प्रचार हुआ । कहा जाता है कि इस प्रणाली का आयर्लैण्ड मे जितना प्रभाव पड़ा, उतना किसी का नही । इसी अग्रेज़ी शब्द का हमने भी उपयोग आरम्भ किया है ।

**दूसरा :** तो ब्रिटिश माल का बॉयकाट मात्र इसके अन्तर्गत नही आता ; परन्तु इससे कही अधिक इसके भीतर आ जाता है ।

**त्रिभुवनदास :** अवश्य । ब्रिटिश माल के बॉयकाट से तो इसका आरम्भ हुआ है । केप्टन बॉयकाट पर जिस प्रकार इस शस्त्र का उपयोग हुआ था, उस प्रकार प्रत्येक अग्रेज पर और अग्रेज ही नही उन भारतीयो पर भी

जो अग्रेज़ो के साथ किसी प्रकार का भी सहयोग करते है, यदि हम इसका उपयोग कर सके, तो अग्रेज़ो का इस देश मे रहना असभव हो जायगा। बगाल का एकीकरण तो बहुत छोटी बात है। जिम स्वतन्त्रता को सन् १८५७ के युद्ध मे हम प्राप्त करना चाहते थे, वह हमे उसकी अपेक्षा कही कम त्याग से मिल जायगी। हाँ, इसके लिए हमे ब्रिटिश माल के बहिष्कार के आन्दोलन के साथ ही एक बात और करनी पडेगी।

**दूसरा :** वह क्या ?

**त्रिभुवनदास :** गुप्त रूप से प्रत्येक अग्रेज उनके साथ सहयोग करनेवाले प्रत्येक भारतीय के प्रति, इस देश के बच्चे-बच्चे के हृदय मे घृणा की उत्पत्ति करना। (**कुछ ठहरकर**) तुम लोग जानते हो कि इस विषय मे जब मैने बोर्डिङ्ग-हाउस नही छोड़ा था, उसी समय से अरविन्द घोष से मेरा पत्र-व्यवहार चल रहा है।

**पहला :** हाँ, मुझे मालूम है।

**दूसरा :** मै भी जानता हूँ।

**त्रिभुवनदास :** उनका अन्तिम पत्र मुझे कल ही मिला है। उन्होने अब मुझे सयुक्त प्रान्त में बॉयकाट-आन्दोलन चलाने के लिए एक कमिटी नियुक्त करने को लिखा है।

**पहला :** अच्छा !

**त्रिभुवनदास :** यदि तुम दोनों इस कार्य मे मुझे सहायता दो, तो मेरी इच्छा इस काम को जोरों से करने की है,

पर इसके लिए सब कुछ त्याग करने को तैयार रहना पडेगा। मै तो अकेला भी इसे करूँगा, पर तुम जानते हो, बिना सहायको के इस प्रकार के कार्य नही चल सकते।

**पहला :** मै हर प्रकार से आपकी सहायता करूँगा। मातृभूमि को स्वतन्त्र करने का प्रयत्न सबका सबसे बडा कर्त्तव्य है। मै इसके लिए सर्वस्व त्याग करने को तैयार हूँ।

**दूसरा :** और मै भी पूर्ण बलिदान के लिए

**[चतुर्भुजदास का प्रवेश। उसे देखकर तीनो खड़े हो जाते हैं।]**

**चतुर्भुजदास :** कैसा त्याग और कैसा बलिदान! यह सब कैसा लडकपन है?

**त्रिभुवनदास :** यो ही हम लोग इधर-उधर की बाते कर रहे थे।

**चतुर्भुजदास :** नही, त्रिभुवन, मै देखता हूँ कि ये बाते इधर-उधर की नही है, इनमे **(कुछ रुककर दोनों युवकों से)** आप लोग यदि इस वक्त मेहरबानी करेंगे, तो अच्छा होगा। मै त्रिभुवन से अकेले मे कुछ बाते करना चाहता हूँ।

**पहला :** **(अपने दूसरे साथी से)** चलो, भई, हम लोग चले।

**दूसरा :** हॉ-हॉ, चलो।

**[दोनों जाने लगते हैं।]**

**त्रिभुवनदास :** **(अपने दोनों साथियों से)** कल सन्ध्या को मिलना होगा न?

**पहला :** अवश्य ।

**दूसरा :** हॉ-हॉ ।

[**दोनों चतुर्भुजदास और त्रिभुवनदास को प्रणाम कर जाते हैं।**]

**चतुर्भुजदास : (गद्दी पर बैठते हुए)** त्रिभुवन !

**त्रिभुवनदास : (गद्दी पर बैठते हुए)** कहिए ।

**चतुर्भुजदास :** तुम अपने इन दोनो दोस्तो मे क्या बाते कर रहे थे ?

**त्रिभुवनदास : (कुछ ठहरकर, रुखाई से)** मै समझता हूँ कि आपको उन्हे पूछने की आवश्यकता नही है ।

**चतुर्भुजदास : (कुछ आश्चर्य से)** क्या कहा ?

**त्रिभुवनदास : (और भी रुखाई से)** यही कि आपको उन बातो को पूछने की कोई आवश्यकता नही है , वरन् अधिकार भी नही है ।

**चतुर्भुजदास : (आँखों मे आँसू भरकर)** त्रिभुवन, तुम नही जानते कि तुम क्या कह रहे हो ?

**त्रिभुवनदास :** मै भली भॉति जानता हूँ, पिताजी ।

**चतुर्भुजदास :** तो तुम्हारे दोस्त तुम्हे बाप से ज्यादा हो गये ?

**त्रिभुवनदास :** यदि दोस्तो के बीच की कोई बात मै आपसे न कहूँ, तो इसका यह निष्कर्ष नही निकल सकता कि वे मेरे लिए आपसे अधिक है। **(कुछ रुककर)** मेरे मित्रो मे और मुझ मे क्या बातचीत होती है, यह जानने की आपकी इच्छा देखकर ही मुझे आश्चर्य होता

है। आप कदाचित् नही जानते कि आपका इस प्रकार का व्यवहार सभ्यता के सर्वथा प्रतिकूल है।

**चतुर्भुजदास :** आजकल की सभ्यता तो मै नही जानता, पर इतना जरूर जानता हूँ कि तुम अभी बच्चे हो और अगर तुम ठीक रास्ते पर न चलो, तो मुझे तुम्हे सुधारने की कोशिश करने का पूरा-पूरा हक है।

**त्रिभुवनदास :** प्राचीन सभ्यता के अनुसार भी पुत्र को सोलह वर्ष की अवस्था मे स्वतन्त्रता मिल जाती है और पिता उसका पथ-प्रदर्शक नही, किन्तु मित्र-मात्र रह जाता है।

**चतुर्भुजदास :** मै तुमसे जबान नही लडाना चाहता। आज तक ऐसा मौका भी नही आया, पर · · ·

**त्रिभुवनदास :** (**बीच ही में बात काटकर**) इसीलिए मौका नही आया, पिताजी, कि मै आपकी हर एक बात सहन करता गया। जिस प्रकार के स्थान मे कोई भला आदमी पैर भी नही रख सकता, उस प्रकार के स्थान में रहता रहा; जितना रुपया आप खर्च के लिए देते रहे, उतने मे बोर्डिङ्ग-हाउस मे पडा-पडा अपना खर्च चलाता रहा, जो कुछ आप कहते रहे, उसे चुपचाप सुनता रहा, जो

**चतुर्भुजदास :** त्रिभुवन, त्रिभुवन, तुम क्या कह रहे हो, क्या कह रहे हो ? (**लम्बी साँस लेकर**) तुम्हारी माँ को गये आज दस साल होते है, मेरी लकड़ियाँ भी मसान

मे पहुँच चुकी है, मुझे कुछ गठरी बाँधकर साथ नही ले जाना है। दिन-रात जो पिसा जाता हूँ, वह तुम्हारे लिए ही तो। जो कुछ करता हूँ, वह भी तुम्हारे भले के लिए ही तो। मुझे एक आँख से दुनिया दिखती है। तुम्हारे सिवा मेरे और कौन है ? तुमने तो आज तक मेरे सामने इस तरह जवाब न दिये थे। तुम्हे क्या हो गया है, त्रिभुवन ?

[**चतुर्भुजदास की आँखों में आँसू आ जाते हैं।**]

**त्रिभुवनदास :** नही, अब इस प्रकार काम नही चल सकता !

**चतुर्भुजदास :** तो किस तरह काम चलेगा ? मै तुम्हे बर्बाद होने के रास्ते पर चलने की आजादी दे दूँ, तब काम चलेगा ? रुपया-पैसा सब उडाकर तुम्हे भिखारी बनने के रास्ते पर, सरकार के खिलाफ होकर जेल जाने और फाँसी पर चढने के रास्ते पर जाने दूँ, तो काम चलेगा ?

**त्रिभुवनदास :** (**क्रोध से**) तब तो जान पडता है कि आपने छिपकर मेरी और मेरे मित्रों की सब बाते सुनी हैं। ओह ! इस प्रकार छिपकर दूसरो की बाते सुनना तो नीचता की ·· (**रुक जाता है।**)

**चतुर्भुजदास :** तुम्हारा गलत खयाल है। मैने तुम्हारे दोस्तों की और तुम्हारी बाते छिपकर हर्गिज नही सुनी। यहाँ आते-आते तुम्हारे दोस्तो के सिर्फ दो फिकरे मेरे कान मे पड गये थे। तुम्हारे आज-कल के कारनामो का हाल मुझे दूसरे ही रास्ते से मालूम हुआ है।

**त्रिभुवनदास :** दूसरे कोई रास्ते से आपको मेरी कोई बात मालूम हो ही नही सकती।

**चतुर्भुजदास :** तो तुम समझते हो, मै झूठ बोलता हूँ।

**त्रिभुवनदास :** क्षमा कीजिए, पिताजी, यदि मै यह कहूँ कि जो रुपये से बडी ससार मे कोई वस्तु नही समझता, दूसरो की बाते छिपकर सुन सकता है, दूसरो की गुप्त बाते निर्लज्ज होकर पूछ सकता है, वह यदि झूठ भी बोले तो कोई आश्चर्य की बात नही है।

**चतुर्भुजदास :** **(आँखों में आँसू भरकर भर्राये हुए स्वर में)** कहो, त्रिभुवन, जो तुम्हारी खुशी हो, कह डालो। आज तुम्हारी जबान खुल गयी है, अब वह बन्द थोडे ही हो सकती है। मुझे मक्खीचूस कहो, विश्वासघाती कहो, असभ्य कहो, झूठा कहो। बाप को जितनी गालियाँ दे सकते हो, उतनी दे लो।

**त्रिभुवनदास :** सहनशक्ति की सीमा होती है, पिताजी! जब सहन के बाहर कोई बात हो जाती है, तब सबसे पहले मनुष्य की बोली ही खुलती है। आज मेरे मित्रो और मेरी बातो को आपका इस प्रकार छिपकर सुनना और फिर उन्हे खोद-खोदकर पूछने का प्रयत्न करना, किसी भी सभ्य मनुष्य की सहनशक्ति के बाहर की बात है।

**चतुर्भुजदास :** परन्तु, त्रिभुवन, मै कहता हूँ न, कि मैने तुम लोगो की बाते छिपकर नही सुनी है।

**त्रिभुवनदास :** तो फिर आपको यह कैसे मालूम हुआ कि हम

लोग सरकार के विरुद्ध कोई कार्य करनेवाले है ?

**चतुर्भुजदास :** जानना ही चाहते हो ?

**त्रिभुवनदास :** जब तक मै न जान लूँगा, मुझे सन्तोष न होगा।

**चतुर्भुजदास :** और जानने के पश्चात् इसे किसी से कहोगे तो नही ?

**त्रिभुवनदास :** कदापि नही।

**चतुर्भुजदास :** वचन देते हो ?

**त्रिभुवनदास :** अवश्य।

**चतुर्भुजदास :** मुझे तुम्हारे वचन पर पूरा भरोसा है। अच्छा तो सुनो। तुम्हारे पास अरविन्द घोष की जो चिट्ठियाँ आती है, वे डाकखाने से पहले कलेक्टर के पास जाती है, वहाँ पढी जाती है और तब तुम्हारे पास पहुँचती है।

**त्रिभुवनदास :** आपसे यह किसने कहा ?

**चतुर्भुजदास :** आज मै तहसील मे गवाही देने गया था, वहाँ तहसीलदार ने ·

**त्रिभुवनदास :** **(आश्चर्य से)** अच्छा !

**चतुर्भुजदास :** अब तो तुम्हे विश्वास हो गया कि मैने तुम्हारी और तुम्हारे दोस्तो की बाते छिपकर नही सुनी ?

**त्रिभुवनदास :** **(कुछ चकपकाकर)** हाँ, क्षमा कीजिए, पिताजी, मैने आप पर इस प्रकार का सन्देह किया।

**चतुर्भुजदास :** **(आँसू भरकर गद्‌गद् स्वर से)** क्षमा, त्रिभुवन, तुम्हे तो मैने हमेशा ही क्षमा किया है। बेटा, तुमको

देखकर मै जीता हूँ; तुम्हारे सुख के लिए ही तो इस उमर मे भी दिन-रात खून का पसीना कर रहा हूँ, तुम्हारा बाल भी बाँका न हो, यही सोचना तो दुनिया मे मेरा अब एक काम रह गया है। त्रिभुवन, तुम अपना मन जान सकते हो, बाप का नही। बाप का मन तो वही जान सकता है, जो बाप हो चुका है। तुम नही, त्रिभुवन, तुम नही।

[**चतुर्भुजदास की आँखों से आँसू बहने लगते हैं। त्रिभुवनदास कुछ न कहकर सिर झुका लेता है। कुछ देर तक निस्तब्धता रहती है।**]

**चतुर्भुजदास :** (**आँखें पोछते हुए**) तुम्हे इतनी कमखर्ची पसद नही है। अच्छी बात है, जितना तुम्हारी खुशी हो, खर्च करो। तुम्हारे दादा से तो यही सुना था कि एक दफा खर्च बढकर फिर वह घट नही सकता, खुली मुट्ठी बन्द नही हो सकती, इसीलिए कम-से-कम खर्च रखने की कोशिश करता था। लक्ष्मी यों ही चचला है। अगर हाथ से उसे फेकने लगोगे, तो और जल्दी जायगी, पर नही, मेरे बाद भी तो यह सब धन तुम्हे ही मिलेगा। मै अब कितने दिन का ? आज ही ले लो और इसका जो चाहो करो। तुम्हारे लिए ही तो इसे इकट्ठा करता था। दुनिया का कुछ तजुर्बा हो जाता और उसके बाद यह तुम्हे मिलता, तो अच्छा होता ; पर नही (**कमर से चाबी खोलकर**) यह लो, यह

तिजोरी की चाबी है। उसी मे बैंक की चेकबुक भी है। अट्ठाईस लाख और कुछ हजार रुपये नकद और इतने ही आसरे की तुम्हारी जायदाद है; पर इस सब के बदले एक वचन तुमसे चाहता हूँ।

**त्रिभुवनदास :** (सिर उठाकर) वह क्या?

**चतुर्भुजदास :** सरकार के खिलाफ कोई काम करके तुम अपने ऊपर आफत न बुलाओ और अपने बुड्ढे बाप के बुढापे मे धूल न पटको।

**त्रिभुवनदास :** यह नही हो सकता, पिताजी।

**चतुर्भुजदास :** यह क्यो?

**त्रिभुवनदास :** इस सम्बन्ध मे मेरे और आपके सिद्धान्त एक दूसरे से सर्वथा प्रतिकूल है। आप अपने सिद्धान्त अपने पास रखिए और मेरा मेरे पास रहने दीजिए। मैं सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य का पूजक हूँ।

**चतुर्भुजदास :** मेरे तो कोई सिद्धान्त ही नही। मेरे सिद्धान्त तो तुम हो। तुम सुखी रहो, तुम आराम से रहो, तुम पर कभी कोई किसी तरह की भी आफत न आने पावे, यही मेरे सिद्धान्त हैं।

**त्रिभुवनदास :** परन्तु मैं अकर्मण्य सुख का जीवन बिताकर केवल खा-पी और चैन उडाकर शूकर के समान मोटा नही होना चाहता। मै संसार मे कुछ करके कुछ होना चाहता हूँ। मै अपने देश की सेवा करूँगा और परा-धीनता की जजीरो से अपनी मातृभूमि को स्वतंत्र

बनाऊंगा ।

**चतुर्भुजदास :** बेटा, बेटा, मेरे बुढापे की तरफ भी देखो, उस देवी के माफिक बहू की तरफ भी देखो। सात महीने के बाद ही तुम्हारे लडका हो जायगा। मेरा तो, आज मरूँ, कल मरूँ, यह हाल है। दुधमुँहे बच्चे की कौन हिफाजत करेगा, यह देखो। त्रिभुवन

**[तहसीलदार विश्वेश्वरदयाल का प्रवेश। विश्वेश्वरदयाल की अवस्था लगभग पच्चीस वर्ष की है। गौर वर्ण का सुन्दर युवक है। अंग्रेजी ढंग के कपड़े पहने है।]**

**चतुर्भुजदास :** (**तहसीलदार को देखकर खड़े हो, जमीन तक झुककर सलाम कर**) ओ हुजूर है! आइए, तशरीफ लाइए, गरीबखाने पर बडी मेहरबानी हुई, सरकार! (**त्रिभुवनदास से, जो बैठा हुआ है**) त्रिभुवन, तहसीलदार साहब को नही देखा, उठकर सलाम करो, बेटा। (**तहसीलदार से**) अभी यह कॉलेज के बोर्डिग से लौटे है, आपको शायद नही जानते, गरीब-परवर!

**त्रिभुवनदास :** मै उनको सलाम करूँ! मै खुशामदी, जी-हुजूर नही हूँ। उन्हे मुझे सलाम करना चाहिए। मै उनका नौकर नही हूँ, वे सार्वजनिक नौकर है।

**चतुर्भुजदास :** (**आश्चर्य से**) त्रिभुवन, त्रिभुवन, क्या कह रहे हो।

**विश्वेश्वरदयाल :** (**मुस्कराकर**) नही, लाला साहब, त्रिभुवनदासजी ठीक कहते है। हम लोग सार्वजनिक नौकर ही

है। उन्हे और आपको नही, पर यथार्थ मे मुझे ही आप लोगो का अभिवादन करना चाहिए।

**यवनिका**

# दूसरा अङ्क

स्थान—सर त्रिभुवनदास की कोठी का मुलाकाती कमरा
समय—तीसरा पहर

[आधुनिक ढंग का विशाल और मनोहर कमरा है। तीन ओर दीवारे दिखती हैं, जिनके बीच में बड़े-बड़े दरवाजे और खिड़कियाँ हैं। दरवाजों की चौखटों और किवाड़ो में खुदाव का काम है और किवाड़ों में फूलदार काँच भी लगे हैं। किवाड़ खुले हुए हैं, जिनसे बाहर के उद्यान का कुछ भाग दिखायी देता है, जो सूर्य की किरणो से प्रकाशित है। दरवाजों पर फूलदार चीनाई रेशम के परदे लगे हुए हैं, जो मोटी-मोटी रेशमी रस्सियों से दरवाजों के दोनों ओर बँधे हैं और इन डोरियों के बड़े-बड़े फुँदने जमीन तक लटक रहे हैं। दीवारों में फूलदार चीनी के ईंटों की 'डेडो' है और उसके ऊपर सुन्दर रग, जिसके किनारों पर बेलें बनी हैं। सीलिंग में फूलदार टीन के तख्ते लगे हैं और उन पर भी मनोहर रग है। फर्श पर इटली देश का रंग-बिरंगा संगमरमर लगा हुआ है। प्रत्येक दरवाजे के दोनो ओर ऊँचे शीशे लगे हैं, जिनकी चौखटें भी फूलदार शीशों की ही हैं। इन शीशों के दोनों ओर सुन्दर प्राकृतिक दृश्यों के तैल-चित्र हैं, जिनकी सुनहरी चौखटें हैं। बीच की दीवार के दरवाजे के ऊपर एक विशाल घड़ी लगी हुई है। जहाँ एक

दीवार दूसरे से मिलती है, उन कोनों पर लकड़ी के खुदाव की कामवाली 'कैबिनेट' रखी हैं, उन पर मनोहर खिलौने सजे हैं। कमरे के फर्श पर सोफा, आराम-कुर्सियाँ और सादी कुर्सियाँ रखी हुई हैं। सभी गद्दीदार हैं। उन पर फूलदार मखमल लगा हुआ है और रेशम के फूलदार तकिये रखे हैं। प्रत्येक सोफा और कुर्सी के नीचे छोटे-छोटे फारस देश के सुन्दर गलीचे बिछे हुए हैं और उनके सामने सुन्दर टेबिलें रखी हैं। टेबिलों पर चीनाई रेशमी फूलदार मेजपोश हैं और उन पर काँच और चीनी के रंग-बिरंगे कामदार फूल-दानों में पत्र-पुष्प सजे हैं। दाहिनी ओर की दीवार के दरवाजे के सामने कुछ हटकर 'पियानो' रखा है और पियानो के सामने गद्दीदार 'पियानो-स्टूल'। इसी प्रकार बायी ओर की दीवार के दरवाजे के सामने 'राइटिंग-टेबिल' रखी है और उसके सामने गद्दीदार 'आफिस चेयर।' राइटिंग-टेबिल का सब सामान चाँदी का है। उस पर एक 'टेलीफोन' भी रखा है और एक बिजली का सुन्दर टेबिल-लैम्प। छत से 'कट ग्लास' के बिजली के झाड़ और सफेद रंग के सीलिंग फैन झूल रहे हैं। बीच के सोफे पर त्रिभुवनदास और लेडी त्रिभुवनदास बैठे हुए हैं। अब त्रिभुवनदास की अवस्था पैंतालीस वर्ष की हो गयी है। सिर और मूँछों के कुछ बाल सफेद हो गये हैं। वे मोटे फ्रेम का चश्मा लगाये हुए हैं। अंग्रेजी ढंग के कपड़े पहने हैं। सिर नंगा है। लेडी सरस्वती देवी की अवस्था तैंतालीस वर्ष की है। वे गौर वर्ण और सुडौल शरीर की सुन्दर स्त्री हैं।

**काश्मीरी रेशमी साड़ी और उसी प्रकार का शलूका पहने हुए हैं। हीरे-मोती के आभूषण हैं। सोफा के सामने टेबिल पर चाय का सामान सजा हुआ है। चाय, केक और फल सभी वस्तुएँ हैं। दोनों चाय पी रहे हैं और बातें भी कर रहे हैं।]**

**सरस्वती :** आज उसका जन्म-दिवस है। चौबीसवाँ वर्ष पूर्ण कर वह पचीसवे वर्ष मे गया है। (**पीछे मुख कर घड़ी को देख**) आज से चौबीस वर्ष पूर्व वह इस समय के लगभग एक घटे पश्चात् हुआ था और जन्म-दिवस को भी वह घर मे नही है। हम लोग सुख से घर मे रहते है, हर प्रकार का आनन्द भोगते है और हम लोगों का इकलौता पुत्र घर-द्वार, ऐश्वर्य, सम्पत्ति सब कुछ छोडकर मारा-मारा घूम रहा है।

**त्रिभुवनदास :** तुम समझती हो, मै इसका कारण हूँ ?

**सरस्वती :** स्पष्ट ही सुनना चाहते हो ?

**त्रिभुवनदास :** क्या मुझ से भी तुम स्पष्ट न कहोगी।

**सरस्वती :** नाराज तो न हो जाओगे ?

**त्रिभुवनदास :** (**मुस्कराकर**) क्योकि प्राय हो जाता हूँ।

**सरस्वती :** अवश्य।

**त्रिभुवनदास :** अच्छा-अच्छा, आज कदापि न होऊँगा। जो कुछ तुम कहना चाहो, स्पष्ट-स्पष्ट और सत्य-सत्य कहो।

**सरस्वती :** तो स्पष्ट और सत्य बात तो यही है कि तुम्हीं इसका कारण हो। देखो ! सन् १९२० अर्थात्—

लगभग पन्द्रह वर्ष की अवस्था तक वह तुम्ही को यह सब करते देखता रहा, जो आज वह कर रहा है। बाल्यावस्था मे ही मनुष्य का हृदय बनता है। तुम्हारे ही कार्यो को देखकर वह यह सब सीखा है। (**चाय की ठसकी लग जाने से खाँसते हुए रुककर और रूमाल से मुँह पोंछकर**) जब तुम काँग्रेस, किसी प्रान्तीय परिषद् या सार्वजनिक सभा मे जाते, तब उसे प्राय: साथ ले जाते थे। जब वह वहाँ से लौटता, तब महीनों उन्ही बातों की चर्चा किया करता था। कहता, अमुक नेता जब बोलता है, तब ऐसा जान पडता है, मानो बादल गरज रहा है। कई बार तो उनके भाषणो का स्मरण कर-कर वह रो पडता और कहता कि ये अग्रेज मेरी भारत माता पर कैसा अत्याचार कर रहे है। हाय ! हाय ! मेरी भारत माता की सन्तानें कितना दु ख पा रही है। यही सब सोच-सोचकर उसने विवाह तक न करने की प्रतिज्ञा कर ली और अन्त मे घर तक छोडकर चल दिया।

**त्रिभुवनदास :** अच्छी, थोडी देर को यदि यह भी मान लिया जाय कि उसने ये सब बाते मुझसे सीखी, पर मैंने किससे सीखी थी ? राजा साहब तो इन सब बातों मे नही थे न ?

**सरस्वती :** तुमने स्कूल-कॉलेज मे अपने मित्रो से सीखी थी। संसार मे मनुष्य संग से ही सब कुछ सीखता है।

**त्रिभुवनदास :** मुझे बडा खेद है कि तुम इतनी बुद्धिमती और विदुषी होकर भी असल बात नही समझ रही हो ।

**सरस्वती :** तो क्या तुम यह कहना चाहते हो कि सग से मनुष्य कुछ नही सीखता ?

**त्रिभुवनदास :** मैं यह नही कहता कि सग से मनुष्य कुछ नही सीखता, परन्तु सग गौण कारण है, मुख्य नही । मनोहर के इस समय के जोश का मुख्य कारण उसकी युवावस्था है, अनुभव-शून्यता है। संग तो मुझे भी ऐसे ही लोगों का रहता है, फिर मेरे हृदय पर अब उनका प्रभाव क्यो नही पडता ? बात यह है कि कुछ समय से इस देश के वायु-मडल मे जोश का रोग आ गया है । युवको पर इसका सबसे अधिक असर होता है और इसमें ऐसी छूत है, जैसी किसी रोग में नही । युवको को संसार का अनुभव रहता नही, बस उसी जोश में बह जाते हैं। अवस्था के कुछ बढने और संसार के अनुभव के होने पर जब जोश ठण्डा हो जायगा तब वह चुपचाप घर लौट आयगा । कुछ दिन दुनिया की ठोकरे खा लेने दो ।

**सरस्वती :** तो तुम समझते हो, बंग-विच्छेद के आन्दोलन के समय तुम भी केवल जोश के कारण उस आन्दोलन के साथ हो गये थे और तुमने भी भूल की थी ?

**त्रिभुवनदास :** इसमे मुझे थोडा-सा भी सदेह नही है ; परन्तु मैं तो ठीक समय रास्ते पर आ गया । दिन-भर का

भूला-भटका यदि रात्रि को भी घर पर आ जावे वह भूला-भटका नही कहलाता , वरन् उलटा अनुभवी हो जाता है । मैने तो पढना-लिखना समाप्त कर देश के कार्य मे भाग लिया, (खांसते हुए रुककर) पर मनोहर तो ऐसा बहा कि सन् १९२१ मे सोलहवे वर्ष मे मैट्रिक से ही पढना-लिखना तक छोड बैठा । बिना पढे-लिखे स्वय का ज्ञान तो होता नही, मेरे अनुभव तक से उसने लाभ न उठाना चाहा और महात्मा गांधी के चक्कर मे पड गया । सन् १९२० के असहयोग-आन्दोलन के समय तुम जानती हो, मुझे सार्वजनिक जीवन मे पन्द्रह वर्ष हो चुके थे । उन पन्द्रह वर्षो मे मैंने भारतवर्ष के एक-एक नेता को अच्छी प्रकार देख लिया था । निकट से देखने पर मुझे मालूम हो गया था कि अधिकाश नेताओ की देश-भक्ति किस प्रकार की है !

**सरस्वती :** तो तुम्हारा यह कहना है कि सब नेता धूर्त्त है ?

**त्रिभुवनदास :** नही, मेरा यह कहना नही है , पर अधिकाश धूर्त्त हैं, इसमे सन्देह नही । ऊपर से वे देश-भक्ति दिखाते हैं, परन्तु उनके भीतर स्वार्थ कूट-कूटकर भरा है । सरकार का इसीलिए विरोध करते हैं कि सरकार उनसे सौदा करे और ज्यों ही सरकार सौदा करती है, त्यो ही सौदा पटते ही सरकार की ओर हो जाते है ।

**सरस्वती :** (मुस्कराकर) तो अन्य लोगो के समान तुमने भी

सरकार से सौदा किया ?

**त्रिभुवनदास :** मेरे लिए तुम ऐसा नही कह सकती ।

**सरस्वती :** क्यो, तुम भी तो १६०५ से १६२० तक सरकार के बडे भारी विरोधियो मे थे और आज सर की उपाधि से युक्त प्रान्त के होम-मेम्बर हो एव गवर्नर होने की भी आशा कर रहे हो । ससुरजी को राजा की पदवी मिल गयी है । ·

**त्रिभुवनदास :** पहले तो मै सरकार के साथ हूँ, यही मै नही मानता ; फिर यदि थोडी देर को तुम्हारा कहना मान लूँ, तो तुम समझती हो, मै रुपये और उपाधियो के लिए सरकार के साथ हूँ ?

**सरस्वती :** रुपये के लिए तुम सरकार के साथ हो, यह दोषा-रोपण कोई भी तुम पर नही कर सकता, क्योकि भगवान् ने तुम्हे बहुत रुपया दिया है । जो कुछ सरकार से तुम्हे मिलता है, उससे दूना तुम्हारा खर्च है ; परन्तु सरकारी उपाधियाँ तुमने ली है, इसे तुम अस्वीकृत नही कर सकते ।

**त्रिभुवनदास :** उपाधियाँ मैने ली है, यह नही, उपाधियाँ मुझे मिली है, यह कहो । मैने सरकार से उपाधियाँ लेने का भी कोई प्रयत्न नही किया ।

**सरस्वती :** परन्तु जब मिल गयी, तब उन्हे स्वीकार कर लिया ।

**त्रिभुवनदास :** हाँ, क्योकि उनके स्वीकार करने में मै कोई

आपत्ति नही देखता था, इसलिए मैने उन्हें स्वीकार किया कि उन्हे मै बडी भारी वस्तु समझता हूँ, यह बात नही है, क्योकि इन उपाधियो से भी कही बडी वस्तु सार्वजनिक प्रशसा तक को मैने लात मार दी। मुझे बडा खेद है कि तुम तक मुझे नही समझ रही हो ?

**सरस्वती :** किस प्रकार ?

**त्रिभुवनदास :** देखो, मैने बग-भंग के आन्दोलन मे सच्ची देश-भक्ति से प्रेरित होकर भाग लिया था। जैसा मैने तुमसे कहा कि पन्द्रह वर्षों तक मैने भारतीय नेताओ और जनता को निकट से देखा है और दोनो से मुझे अत्यधिक घृणा हो गयी।

**सरस्वती :** परन्तु उनसे घृणा होने के कारण सरकार की ओर होने की क्या आवश्यकता थी ?

**त्रिभुवनदास :** सरकार की ओर मै हुआ ही नही, यह तो मैने पहले ही कहा। हॉ, मैने अपनी कार्य-पद्धति अवश्य बदली और उसके दो कारण थे।

**सरस्वती :** क्या ?

**त्रिभुवनदास :** वही तो बता रहा हूँ। एक नेताओ का स्वार्थ और दूसरे इस देश की जनता की कायरता और अकर्मण्यता। सन् १६०५ से १६२० तक के सार्वजनिक जीवन मे मैंने देख लिया कि जिस प्रकार इस देश के नेता निकम्मे हैं, उसी प्रकार इस देश की जनता भी किसी काम की नही। जो जनता पन्द्रह वर्षों के लगातार

प्रयत्न पर भी ब्रिटिश माल तक का बहिष्कार न कर सकी, वह महात्मा गान्धी के असहयोग-आन्दोलन को सफल कर सकेगी, यह मुझे विश्वास ही न था। फिर असहयोग को तात्त्विक दृष्टि से भी मै हानिकारक समझता था, इसीलिए कॉग्रेस द्वारा उनके कार्य-क्रम के स्वीकृत होते ही मैने कॉग्रेस को छोड दिया और बडी-बड़ी आशाएँ छोड थोडा-बहुत भी जो लाभ कौसिलों द्वारा पहुँचाया जा सकता है, उसे पहुँचाने के लिए मैने कौसिल मे प्रवेश किया। मेरे कौसिल मे **(चाय पी चुकने के पश्चात् सिगरेट जलाते हुए)** मेरे कौसिल में **(माचिस बुझ जाती है; अतः फिर जलाता है)** मेरे कौसिल मे जाते ही मेरे बिना कुछ कहे सरकार ने लाला साहब को राजा की पदवी दी। तीन वर्ष पश्चात् जब मै फिर कौसिल मे गया और मिनिस्टर हुआ, तब मेरे बिना कुछ कहे सरकार ने मुझे सर की उपाधि दी। तीन वर्ष मिनिस्टरी करने के बाद मेरे बिना कुछ कहे उन्होने मुझे होम-मेम्बर बनाया। यदि मै गवर्नर भी हुआ, तो बिना किसी प्रयत्न के होऊँगा। **(कुछ ठहरकर)** मेरा अनुमान भी सत्य निकला। दो ही वर्षो के भीतर असहयोग-आन्दोलन असफल हो गया और देशबन्धुदास, पण्डित मोतीलाल नेहरू और लाला लाजपतराय के सदृश व्यक्ति तक कौंसिलो और एसेम्बली में गये। जो असहयोग-आन्दोलन का हाल

हुआ, वही इस सत्याग्रह का भी होगा । मै अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर कह रहा रहा हूँ, अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर । मै इस देश के नेताओ और जनता को अच्छी प्रकार जानता हूँ, खूब अच्छी तरह । मुझे विश्वास है कि मनोहर को भी धीरे-धीरे इन दोनो का अनुभव हो जायगा ।

**सरस्वती :** तो तुम्हारा मत है कि असहयोग असफल हो गया और सत्याग्रह असफल हो जायगा ?

**त्रिभुवनदास :** असहयोग-आन्दोलन के असफल होने मे तो कोई मतभेद हो ही नही सकता और सत्याग्रह भी असफल होगा, इसमे कम-से-कम मुझे कोई सन्देह नहा है ।

**सरस्वती :** असहयोग-आन्दोलन से कोई जागृति और लाभ नही हुआ ?

**त्रिभुवनदास :** जागृति और लाभ ! मेरा तो इस सम्बन्ध मे मत ही दूसरा है ।

**सरस्वती :** कैसा ?

**त्रिभुवनदास :** मैने कहा न कि मै तात्त्विक-दृष्टि से उसे देश के लिए हानिकारक समझता हूँ । तुम जागृति और लाभ की बात करती हो, मेरी दृष्टि से इस आन्दोलन से जो जागृति यहाँ हो रही थी, उसे तक बहुत रुकावट हो गयी और बडी भारी हानि पहुँची ।

**सरस्वती :** यह तो मै नयी बात सुन रही हूँ ।

**त्रिभुवनदास :** हॉं, क्योकि तुम को तो साहित्य से काम। राजनैतिक विषयो पर तुम मुझसे कभी बातचीत ही नही करती, आज ही कर रही हो।

**सरस्वती :** बातचीत क्या करूँ! अपने मत के विरुद्ध सम्मति सुनते ही तुम सदा आग-बबूला हो जाते हो। दो-चार बार बात करने का प्रयत्न भी किया, पर जब देखा कि उससे उलटा कलह होता है, तब उस चर्चा को ही न छेडने की मैने प्रतिज्ञा कर ली थी। आज ही न जाने तुम कैसे शान्ति से बाते कर रहे हो।

**त्रिभुवनदास :** (**मुस्कराकर**) अपने पुत्र के प्रति तुम्हारी अत्यधिक करुणा देखकर।

**सरस्वती :** (**लम्बी साँस लेकर**) जैसे तुम्हारा वह कुछ है ही नही।

**त्रिभुवनदास :** अच्छा-अच्छा, सुनो असहयोग से कैसे जागृति रुकी और कैसे हानि हुई ?

**सरस्वती :** उहॅं, हानि के सम्बन्ध मे तो यही बता दोगे कि इतने आदमी जेल गये, इतनी सम्पत्ति नष्ट हुई, पर हॉं, जागृति भी नही हुई, यह मैने कभी न सुना था।

**त्रिभुवनदास :** नही-नही, यदि कुछ हजार मनुष्य जेल गये और कुछ सम्पत्ति नष्ट हो गयी, तो इसमे मैं कोई बडी भारी हानि नही मानता। मै स्वयं भी तो जेल गया हूँ। सार्वजनिक कार्यो मे बहुत सी सम्पत्ति भी नष्ट कर चुका हूँ।

**सरस्वती :** फिर ?

**त्रिभुवनदास :** मै उस आन्दोलन में तात्त्विक-दृष्टि से ही बडा भारी दोष देखता हूँ।

**सरस्वती :** किस प्रकार ?

**त्रिभुवनदास :** महात्मा गान्धी बहुत बड़े आदमी है, इसमे सन्देह नही , परन्तु या तो महात्मा गान्धी को अभी सौ-दो-सौ वर्ष पश्चात् हमारे ससार मे जन्म लेना था या किसी दूसरे सितारे पर होना था। उनके असहयोग की नीव घृणा न होकर प्रेम है। वे अग्रेजो से प्रेम करने को कहते है और उनके दुष्कर्मो मे प्रेम के साथ असहयोग करने का उपदेश देते है, तुम्हे स्मरण होगा कि पहले वे अपने प्रेम के सिद्धान्तो के कारण विदेशी माल के बहिष्कार तक के विरुद्ध थे।

**सरस्वती :** हाँ, स्मरण है।

**त्रिभुवनदास :** पर फिर अन्य अनेक कारणो से उसे उन्होने स्वीकार कर लिया ; अकेले ब्रिटिश माल के बहिष्कार के तो वे आज भी विरुद्ध है।

**सरस्वती :** जानती हूँ।

**त्रिभुवनदास :** जब सारे ससार मे स्वार्थ का राज्य है और एक दूसरे के गले काटने के लिए हर एक मनुष्य, हर एक जाति और हर एक राष्ट्र तैयार हो रहे है, तब इस प्रकार के प्रेम-पूर्ण कार्य-क्रम से हमारा अभीष्ट कभी सिद्ध नही हो सकता। बग-भंग के आन्दोलन के समय

अंग्रेजी माल के बॉयकाट के साथ इस राज्य को उलट देने के लिए अनेक गुप्त सगठन हो रहे थे। इस देश का बच्चा-बच्चा अंग्रेजो से घृणा करने लगे, इस बात का प्रयत्न हो रहा था। हर स्थान पर घृणा की जागृति हो रही थी। महात्मा गान्धी ने बॉयकाट के स्थान पर असहयोग को जन्म देकर सारे गुप्त-सगठनो का ध्वस कर दिया। घृणा की उस जागृति को रोक दिया और इस प्रकार देश को बडी भारी हानि पहुँचायी। इन आधिभौतिकता के प्रेमी अंग्रेजो पर इस प्रकार के प्रेम-पूर्ण असहयोग का कोई प्रभाव नही पड सकता। सत्याग्रह की भी यही प्रेम नीव है। फिर उसमे तो स्वय चाहे नष्ट हो जाय, पर अपने बचाव के लिए भी हिसा निषिद्ध है। इस प्रकार के आन्दोलनो का अंग्रेज़ मजाक उडाते है। उन्हे तो आयर्लैण्ड के सदृश आन्दोलन चाहिए या अमेरिका के सदृश स्वाधीनता का सशस्त्र सग्राम।

**सरस्वती :** और ये दो बाते कर सकने की इस देश मे शक्ति नही।

**त्रिभुवनदास :** बिल्कुल नही, इसीलिए तो मैने कहा न कि बडी-बडी आशाएँ छोडकर मै देश का थोडा-बहुत ही लाभ करने को कौसिल मे चला गया।

**सरस्वती :** पर सर्व-साधारण जनता तुम्हारे कौसिल-प्रवेश, मिनिस्टरी और होम मेम्बरी को तुम्हारा स्वार्थ और

पतन कहती है । रुपये की तुम्हे भूख है, यह कोई नही कहता, पर तुम्हे अधिकार और प्रभुत्व की भूख हो गयी है, यह सबका कहना है । लोग कहते है कि इन दस वर्षो के कौसिल जीवन से तुम्हारे ऊपर कौसिल के विषैले वायु-मडल का पूरा-पूरा प्रभाव हो गया है और शनै शनै तुम्हारे हृदय की देश-भक्ति उस विष से सर्वथा नष्ट हो गयी है । विदेशी विजेता पराजितो पर वाह्य और आन्तरिक दोनो ही प्रकार की विजय तो करते है । जनता का कहना है कि उन्होने तुम पर दोनो प्रकार की विजय प्राप्त कर ली है । तुम्हारे इस समय के सार्वजनिक जीवन को देखकर, तुम्हारे पुराने त्यागपूर्ण सार्वजनिक जीवन के लिए भी वह यही कहने लगी है कि वह सब व्यक्तिगत महत्त्व के लिए था ।

**त्रिभुवनदास :** **(कुछ उत्तेजित होकर)** जनता क्या कहती है, इसकी मुझे ज़रा-सी चिन्ता नही है । एक अंग्रेजी कहावत है—'पब्लिक-पब्लिक, हाउ मेनी फूल्स मेक पब्लिक ।' इतना ही नही कि जनता मे बुद्धि नही है, न उसमे विवेक है और न साहस । उसका मन तो उस सूने गृह के सदृश है, जिसमे किसी के भी शब्द की प्रतिध्वनि हो सकती है । जनता से अधिक घृणास्पद वस्तु और कोई नही । यदि वह नीच नहीं है, तो कोष मे से 'नीचता' शब्द का बहिष्कार कर देना पड़ेगा । यदि वह कायर नही है, तो भाषा में से 'कायरता' शब्द

को निकाल डालना होगा और यदि वह अकर्मण्य नही है तो फिर 'अकर्मण्यता' शब्द का उपयोग किसके लिए होगा ? जिसमे इस देश की जनता ! मूर्ख और मूर्ख ही नही पशुओ का समुदाय ! जनता यो ही घृणास्पद होती है, फिर इस देश की जनता के लिए तो घृणास्पद शब्द से भी यदि कोई कडा शब्द हो, तो उसका उपयोग होना चाहिए। उसकी मूर्खता के कारण ही तो हम देखते है कि कुछ भी विशेषता रखनेवाला व्यक्ति उसके बीच ईश्वर का अवतार मान लिया जाता है और उस अवतार का वह पूजन अवश्य करती है, चाहे उसके अनुसरण करने की बात वह स्वप्न मे भी न सोचे ।

**सरस्वती :** किन्तु यह सोचने से कोई लाभ नही कि जनता कैसी होनी चाहिए। जैसी वह है, उसी से तो काम पडता है । जब उसके बीच मे रहना है, तब ऐसे कार्य तो न करने होगे, जिनसे उसे घृणा है ।

**त्रिभुवनदास :** तब ऐसे करने होगे, जिनसे करनेवाले को घृणा है। देखो यदि जीवन मे मुझे अपनी इच्छा के विरुद्ध कुछ करना पडे, तो उस जीवन तक को रखने की अपेक्षा मै उसे समाप्त कर देना अधिक अच्छा समझता हूँ। चूँकि जनता मे रहने के लिए मुझे अपनी इच्छा के विरुद्ध कार्य करना पड़ता है इसलिए मै जनता से कोई प्रयोजन नही रखना चाहता। मै अपने

अन्त करण से पूछकर हर एक कार्य करता हूँ और मेरा अन्त करण कहता है कि मै हर एक कार्य को पूर्ण विवेक से कर रहा हूँ। तुम जानती हो, मेरे लिए ससार मे सबसे अधिक मूल्यवान् कौनसी वस्तु है ?

**सरस्वती :** कौनसी ?

**त्रिभुवनदास :** सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य। धन को यदि मूल्यवान् समझता हूँ, तो इसीलिए कि वह मनुष्य की स्वतत्रता के लिए आज सब से बडा साधन है। मैने अपना काम पूरी ईमानदारी के साथ किया है। मिनिस्टरी के काम मे मैने अपने सब मुहकमो को आशातीत रूप से सुधारा है। जब से होम-मेम्बर हुआ हूँ, कमिश्नरो, कलक्टरों आदि को एक-एक करके दुरुस्त किया है। पिताजी छोटे-छोटे सरकारी कर्मचारियो को झुक-झुककर सलामें किया करते थे। बडे-बड़े अफसर मुझे झुक-झुककर सलामे करते है, वे सदा उनकी हॉ-हुजूरी मे दत्तचित्त रहते थे, मै उन पर हुक्म चलाता हूँ।

**सरस्वती :** देखो, अब तुम फिर उत्तेजित होने लगे। कुछ लोग कहते है, व्यक्तिगत महत्त्व बढने के अतिरिक्त तुम्हारे कौंसिल मे जाने, मिनिस्टर और होम-मेम्बर होने से देश को लाभ हुआ है, इसका कोई प्रमाण नही है ?

**त्रिभुवनदास :** ओह ! एक नही, बीसो प्रमाण है, पर उसे समझने की लोगों मे बुद्धि कहाँ है ?

[सरस्वती चुप रहती है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

**सरस्वती :** (कुछ ठहरकर) क्यो तुम ममभते हो कि महात्मा गान्धी का प्रेम-पूर्ण और अहिमात्मक मार्ग इस देश को स्वतन्त्र नही कर मकना ?

**त्रिभुवनदास :** कदापि नही।

**सरस्वती :** परन्तु मै तो ऐमा नही ममभती। मेरा तो यह ·

**त्रिभुवनदास :** (बीच ही मे) तुम ऐमा इमलिए नही समभती कि तुम स्त्री हो। स्त्रियो के हृदय मे पुरुपो की अपेक्षा अधिक प्रेम रहता है।

**सरस्वती :** क्यो, कई समभदार पुरुप भी तो ऐमा ही समभते है।

**त्रिभुवनदास :** वे या तो समभदार है ही नही, या स्त्रैण है।

**सरस्वती :** परन्तु तुम तो मिद्धान्त-स्वातन्त्र्य के बडे भारी पुजारी थे। दूसरो के सिद्धान्तो को

**त्रिभुवनदास :** (बीच ही मे) आरम्भ से था। और आज भी हूँ। इसी सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य के कारण आरम्भ मे पिताजी से लडा और इसी कारण तो लडका घर छोडकर निकल गया, पर मैने इमकी कोई परवा न की, बराबर अपने सिद्धान्त पर अटल हूँ।

**सरस्वती :** क्षमा करना, यदि मै फिर स्पष्ट कह दूँ तो।

**त्रिभुवनदास :** हाँ-हाँ, जो तुम कहना चाहती हो, कहो।

**सरस्वती :** अपने ही सम्बन्ध मे तुम सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य के पुजारी हो, दूसरो के सम्बन्ध मे नही। तुम्हारे घृणा

और गुप्त सगठनो के सिद्धान्तो से महात्मा गान्धी का प्रेमपूर्ण असहयोग और सत्याग्रह का सिद्धान्त कहीं उच्च और व्यवहार्य है ।

**त्रिभुवनदास :** उच्च चाहे हो , किन्तु व्यवहार्य नही है ।

**सरस्वती :** इसीलिए तुम उसे अव्यवहार्य मानते हो न कि सन् २० का असहयोग-आन्दोलन असफल हो गया !

**त्रिभुवनदास :** अवश्य ।

**सरस्वती :** तो सन् ५ मे किये गये घृणा-प्रचार और गुप्त सगठन भी असफल हो गये । सन् २० के असहयोग-आन्दोलन के असफल होने का दोष, असहयोग के कार्य-क्रम को न होकर, इस देश की जनता को है, जिसे तुम भी अकर्मण्य कहते हो । यदि सत्याग्रह भी असफल हुआ, तो इसका दोष भी जनता के सिर पर होगा, यह नही, कि ये सिद्धान्त ठीक नही है । भारतीयो के सदृश नि शस्त्र जनता यदि किसी मार्ग से स्वतन्त्र हो सकती है, तो असहयोग और सत्याग्रह से ही । फिर इनका विश्व-व्यापी महत्त्व है । यदि भारतवर्ष ने इन मार्गो द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली, तो नित्य-प्रति की मार-काट से ऊबकर जो ससार नि शस्त्रीकरण के प्रयत्न मे लगा हुआ है, उसे त्राण पाने के लिए भारत नवीन मार्ग बतावेगा । ससार मे अन्याय के प्रतिकार के लिए जो युद्ध अनिवार्य माना जाता है, उसका स्थान यदि कोई ले सकता है, तो सत्याग्रह ही । (**जोर से**) बैरा ! बैरा !

**(सफेद कपडों मे बैरा का प्रवेश । वह अभिवादन करता है)** यह टेबिल उठाकर ले जाओ। **(वह चाय की टेबिल ले जाता है)** स्मरण रखो, नि शस्त्रो पर शस्त्रधारियो का सदा प्रहार कर सकना नैसर्गिक नियम के प्रतिकूल है । शस्त्रधारियो पर ही शस्त्रधारी प्रहार कर सकते है । इस सत्याग्रह-आन्दोलन के सत्याग्रहियो पर जिस प्रकार की लाठियाँ चलाना आरम्भ हुआ है, स्त्रियो और बच्चो तक पर जिस प्रकार गोलियाँ बरसाना आरम्भ हुआ है, ससार सदा इसे नही देख सकेगा । यह भीषण अन्याय और अत्याचार एक दिन सारे भू-मण्डल को कँपा देगा और अग्रेजी सत्ता तो बहुत छोटी वस्तु है, सारे ससार की सम्मिलित पाशविक शक्ति भी इसके सम्मुख थर्रा उठेगी ।

**त्रिभुवनदास :** परन्तु

[**उसी समय टेलीफोन की घण्टी बजती है । त्रिभुवन-दास राईटिंग टेबिल के निकट जाकर ऑफिस चेयर पर बैठे फोन को कान से लगाता है ।**]

**त्रिभुवनदास :** हलो, हलो, यस टू फोर नाइन । ·यस · ओ ! · फाइरिग यस ! पहले पत्थर जनता की ओर से चले ? **(सरस्वती घबराकर राईटिंग-टेबिल के पास चली जाती है ।)** कितने पुलिसवालो को चोट आयी ? · कितने ? तीन ? ··· और जनता के कितने आदमी मरे ? · · ···

कितने ? आठ ? इनमे कितनी औरते और बच्चे ? · कितने ? दो और एक ? और घायल कितने हुए ? कितने ? बयालीस ? ·· डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट विश्वेश्वरदयाल मौके पर थे ? यस, यस, ऑल राइट, गुड नाइट ।

**सरस्वती :** (**घबराकर**) क्या हुआ, क्या हुआ ?

**त्रिभुवनदास :** कुछ नही, कोई घबराने की बात नही है, अब सब ठीक हो गया ।

**सरस्वती :** पर गोली चली न ?

**त्रिभुवनदास :** हाँ, चौक मे पुलिस को गोली चलानी पडी ।

**सरस्वती :** वहाँ क्या हुआ था ?

**त्रिभुवनदास :** पिकेटिग हो रही थी ।

**सरस्वती :** (**कुछ काँपते हुए**) फिर ?

**त्रिभुवनदास :** तुम काँपी क्यो जाती हो । अब तो घवडाने की कोई बात है ही नही ।

**सरस्वती :** (**भर्राये हुए स्वर में**) क्या हुआ, मुझे जल्दी से बता दो !

**त्रिभुवनदास :** कुछ नही, साधारण-सी बात है । आज विश्वेश्वरदयाल मेरे पास आये थे और मुझसे कहा था कि आज यहाँ से पिकेटिग आरम्भ होगी । मैने उनसे कह दिया था कि पिकेटर्स गिरफ्तार कर लिये जायँ । तुम जानती हो, ऐसे अवसरो पर भीड-भाड हो ही जाती है । बड़ी-सी भीड़ इकट्ठी हो गयी । ज्यो ही स्वय-

सेवक गिरफ्तार हुए, भीड से पत्थर आने लगे। तीन पुलिसवालो को गहरी चोट लगी। इस पर पुलिस ने लाठी चलायी। भीड ने पुलिस पर आक्रमण करना चाहा। बलवे का आसार देखकर पुलिस को गोली चलाने पर बाध्य होना पडा। एक बच्चा, दो औरते और पाँच आदमी मरे और लगभग चालीस-बयालीस व्यक्ति घायल हुए।

**सरस्वती : (कांपते हुए निकट की ही आराम-कुरसी पर बैठकर)** आह ! आज मनोहर भी पिकेटिंग के लिए जाने वाला था।

**त्रिभुवनदास : (घबड़ाकर)** क्या ? क्या ? मनोहर पिकेटिंग के लिए जानेवाला था ? तुम्हे कैसे मालूम हुआ ?

**सरस्वती : (भर्राये हुए स्वर में)** उसने मुझे सन्देश भेजा था।

**त्रिभुवनदास : (कुछ सँभलकर)** पर वह कदाचित् न गया हो।

**सरस्वती : (रोते हुए)** नही, वह अवश्य गया होगा।

**त्रिभुवनदास :** तो कदाचित् गिरफ्तार कर लिया गया होगा।

**[लाल वरदी पहने हुए शीघ्रता से चपरासी का प्रवेश।]**

**चपरासी : (जल्दी से सलाम कर)** हुजूर, हुजूर !

**त्रिभुवनदास : (घबड़ाकर)** हाँ, क्या हुआ, चपरासी ?

**चपरासी :** हुजूर, विश्वेश्वरदयाल साहब तशरीफ लाये है।

**त्रिभुवनदास : (सँभलकर)** अच्छा, उन्हे आने दो , पर तुम इतने घबड़ाये हुए क्यो हो ?

**चपरासी :** हुजूर, उनके साथ साहबजादे साहब की · ·
(रो पड़ता है ।)

**[ सरस्वती चीखकर मूर्च्छित हो जमीन पर गिर पड़ती है । त्रिभुवनदास दौड़ता हुआ बाहर जाता है । आगे दो पुलिसवाले मनोहरदास की लाश को उठाये हुए और उसके पीछे त्रिभुवनदास और विश्वेश्वरदयाल का प्रवेश । विश्वेश्वर-दयाल की अवस्था अब ५० वर्ष की है । सिर और मूँछों के बाल आधे से अधिक सफेद हो गये हैं । वह अंग्रेज़ी ढंग के कपड़ो में हैं । मनोहरदास की लाश एक सोफा पर लेटा दी जाती है । वह सुन्दर गौर वर्ण का युवक है । खादी के कपड़े पहने हुए है, जो खून से लथपथ हो गये हैं । पुलिसवाले बाहर चले जाते हैं और त्रिभुवनदास और विश्वेश्वरदयाल कुर्सियों पर बैठ जाते हैं । त्रिभुवनदास नीचा मुख कर फूट-फूटकर रोने लगता है । विश्वेश्वरदयाल नीचा मुख किये रहता है । कुछ देर तक उनके मुख से कोई शब्द नही निकलता । ]**

**विश्वेश्वरदयाल :** **(भर्राये हुए स्वर में धीरे-धीरे)** धैर्य रखिए, सर त्रिभुवनदासजी, ऐसे अवसरो पर धैर्य ही रखने से काम चलता है । आश्चर्य की बात तो यह है कि बाये हाथ को छोडकर और इन्हे कही गोली नही लगी दिखती । जब इनके शरीर को हम लोगो ने उठाया, उस समय सॉस भी थी । बदन तो अभी तक गरम है, हाथ से थोडा-थोडा खून भी निकल रहा है ; पर अब सॉस नही है । इतने पर भी मै डॉक्टर के लिए

मोटर भेजकर आया हूँ, क्योकि ईश्वर की गति बड़ी विचित्र है , कदाचित् अभी भी

[रोते हुए वृद्ध राजा चतुर्भुजदास का शीघ्रता से प्रवेश। उसकी अवस्था अब पचहत्तर वर्ष की है। मूँछे और बाल सन के सदृश सफेद हो गये हैं। मुख पर झुर्रियाँ पड़ गयी हैं। ठुड्ढी के नीचे का चमडा लटक आया है; यद्यपि कमर कुछ झुक गयी है, पर शरीर अभी वैसा ही मोटा-ताजा है। वह धोती और कुरता पहने हुए खुले सिर है। हाथ में लकड़ी है, जिसे टेकते हुए चलता है। उसे देखकर विश्वेश्वर-दयाल उठ खड़ा होता है।]

**चतुर्भुजदास**—(शीघ्रता से मनोहरदास की लाश के पास जा और जमीन पर बैठ लाश की कमर के निकट अपना सिर पटकते हुए) हाय! हाय! यह क्या हुआ! यह क्या हुआ! क्या बुढापे मे मुझे यह भी देखना बदा था! हाय! यह देखने के पहले ही मै क्यो न मर गया? (कुछ ठहरकर सिर पटकते हुए) बेटा, बेटा, जब तू पैदा हुआ था, तब मुझे कितनी खुशी हुई थी। तेरे बचपन मे हमेशा तुझे लिये घूमा करता था। कोई भी बाहर से आता, तो तुझे उसे जरूर दिखाता और कहता, देखो हम साँवलो के घर मे कैसा गोरा-नारा लडका हुआ है। यदि कोई रात को भी आता, तो लालटेन लेकर मै उसको तुझे दिखाता था। हाय! हाय! वही गोरा-नारा, वही सुन्दर, मनोहर! (कुछ

**ठहरकर फिर सिर पटकते हुए)** तेरी माँ के रहते हुए भी मै ही तुझे गाय का दूध पिलाता और जिस गाय का दूध तुझे देता, उसकी सानी भी मै अपने सामने बनवाता, जिससे वह दूध तुझे विकार न करे। हाय ! उसी की मेरे सामने यह हालत ! **(कुछ ठहरकर फिर सिर पटकते हुए)** जब तू कुछ बडा हुआ, तब तुझे खाना भी मै ही खिलाता। हमेशा इसी फिकर मे रहता कि तू कैसे बडा और मोटा होगा। मुझे याद है, जब मेरे हाथ काँपने लगे और कौर तेरे मुँह मे ठीक तरह न जाने लगा, तभी मैने तुझे खिलाना छोडा था। हाय ! बेटा, वही तू मेरे सामने इस तरह पडा है और ये आँखे तुझे इस हालत मे देख रही है ! **(कुछ ठहरकर फिर सिर पटकते हुए)** मुझे याद है, जब तू घर छोड-कर गया था, तब यह कहकर गया था कि अब जीते-जी इस घर मे आकर न रहूँगा। तू तो, बेटा, मरकर ही आया। बडा बातवाला था न, अपनी बात पूरी करके ही छोडी, पर मेरी उस वक्त बुद्धि कहाँ चली गयी थी। तेरे बाप ने अपने सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य के सबब तेरा कहा न माना ; पर मुझे क्या हो गया था। मुझे इस महल, इस जायदाद और इस पदवी से क्या सरो-कार था ? मै तेरे सग क्यो न चला गया ? फूल-से सुकुमार तूने न जाने क्या-क्या तकलीफे पायी होगी। अगर आखिरकार गोली ही तुझे लगनी थी, तो मेरे

कलेजे को पार कर लगती। मै यह नजारा तो देखने को न जीता बचता। पर, त्रिभुवन, हाय ! तूने यह कह-कहकर कि मनोहर को तजुर्बा होने पर वह चुपचाप लौट आयेगा और ब्याह भी कर लेगा, आप जरूरत से ज्यादा प्यार कर-करके उसे चौपट कर देगे, मुझे अपना कैदी बना रखा। हाय ! बेटा, हाय ! यह क्या हुआ ? यह क्या हुआ ? **(शिथिल होकर फूट-फूटकर रोने लगता है और सिर लाश से टिका लेता है।)**

**[डॉक्टर का हैण्डबेग लिये हुए प्रवेश। वह अधेड़ अवस्था का मनुष्य है और अग्रेजी ढग के वस्त्रों मे है।]**

**विश्वेश्वरदयाल : (उठकर डॉक्टर के निकट जा धीरे से)** डॉक्टर, इन्हे बाये हाथ को छोडकर और कही गोली नही लगी दिखती। जब हम लोगो ने इनके शरीर को उठाया, तब भी सॉस थी। थोडा-थोडा खून यहाँ लाने तक बहता था और शरीर भी गरम था, अब नही कह सकता, क्या हाल है।

**डॉक्टर :** हाथ की गोली से जान तो प्राय नही जाती, मूर्च्छा आ सकती है, पर, हाँ, सॉस न चलना यह तो मौत का पूरा प्रमाण है, पर कभी-कभी सॉस इतनी धीरे-धीरे चलने लगती है कि देखने मे यही जान पडता है कि सॉस नही चलती। आप पक्का कह सकते है कि सॉस नही है ?

**विश्वेश्वरदयाल :** कम-से-कम दिखता तो यही है। नाक और मुँह पर हाथ रखने से भी साँस हाथ मे नही लगती। (**जल्दी से**) डॉक्टर, देखिए, जल्दी देखिए। यदि सचमुच प्राण है, तो मेरे मुख की कालिख धुल जायगी। मुझ पर सर त्रिभुवनदास की इतनी कृपाएँ है कि मै उनसे उऋण नही हो सकता।

**डॉक्टर :** मै अभी देखता हूँ।

**[डॉक्टर लाश के पास जाकर पहले नब्ज देखता है, फिर हाथ को नाक और मुँह पर रखता है। फिर तो स्थैटिस-कोप निकालकर उसका हृदय देखता है।]**

**डॉक्टर :** (**हर्ष से चिल्लाकर**) राजा साहब, आप क्यो दुख कर रहे है? भैया को केवल मूर्च्छा है। वे जीवित है, राजा साहब, अवश्य जीवित है। मै अभी इन्जेक्शन देता हूँ। बहुत शीघ्र उन्हे होश आ जायगा।

**चतुर्भुजदास :** (**एक दम से उठकर**) जीवित है, जीवित है, मेरा प्यारा, मेरा दुलारा, मेरी आँखो का तारा बेटा जीवित है? डॉक्टर साहब, इसे अच्छा कर दीजिए, चाहे मेरी सारी जायदाद इसके अच्छा करने मे लग जाय, मै सारी जायदाद को बहा देने को तैयार हूँ, इसे अच्छा कर दीजिए, डॉक्टर साहब, इसे अच्छा कर •

**[मूर्च्छित होकर गिरने लगता है। विश्वेश्वरदयाल सँभाल-कर आराम-कुरसी पर ले जाता है और रूमाल से मुख पर**

**हवा करता है। डॉक्टर इन्जेक्शन की तैयारी करता है। ]**

**डॉक्टर : (इन्जेक्शन की तैयारी करते-करते)** त्रिभुवनदासजी, थोडा बर्फ और हाथ का पखा मँगवाइए, क्योंकि बिजली के पखे की हवा तीव्र होगी।

**[त्रिभुवनदास शीघ्रता से जाता है।]**

**सरस्वती : (मूर्च्छा से एकाएक जागकर उठती हुई पागलो के समान)** कहाँ, कहाँ ले जाते हो उसे ? अरे अरे ! मेरा इकलौता पुत्र है, और मेरे कोई नही है, भाई ! बडी कठिनाई से उसे दस महीने पेट मे रखा है और पाल-पोसकर बडा किया है। हाथ जोडती हूँ, पैर पडती हूँ, छोड दो, छोड दो, मेरे मनोहर को ! **(कुछ ठहरकर)** अरे रे रे रे ! गोली मारोगे ? आह ! पहले मुझे मारो, मुझे ! अरे ! मै तो पहले ही मनोहर के साथ घर से निकलती थी , पर पति और पुत्र के बीच मे चुनाव करना था। भला ऐसे अवसर पर स्त्री की जाति मै क्या करती ? **(फिर लेट जाती है, और आँखे बन्द कर लेती है।)**

**डॉक्टर : (विश्वेश्वरदयाल से)** मालूम होता है, दुख के कारण इनका सिर बिगड गया है। आप त्रिभुवनदास-जी को शीघ्र बुलाइए। यहाँ तो नयी-नयी आपत्तियाँ आती जा रही है।

**[विश्वेश्वरदयाल का प्रस्थान। कुछ देर निस्तब्धता रहती है। डॉक्टर मनोहरदास को इन्जेक्शन लगाता है।]**

**सरस्वती :** **(फिर उठकर)** हाँ, हाँ, मानती हूँ, घृणा और हिसा ही का यह परिणाम है। मै तो आरम्भ से ही उन्हें बुरा मानती हूँ। जिसके हृदय मे घृणा और हिसा होती है, वह पहले परायो को घृणा की दृष्टि से देखता है, उनकी हिसा करता है, फिर अपनो की भी। पिता ने पुत्र की हत्या की है, पिता ने पुत्र की! **(फिर चुप होकर लेट जाती है।)**

**[ त्रिभुवनदास और विश्वेश्वरदयाल का प्रवेश। साथ में एक नौकर भी है, जिसके हाथ में बर्फ और पंखा है। ]**

**डॉक्टर :** **(नौकर से)** उनके सिर पर बर्फ रखो। थोड़ा मुँह मे डालो और हवा करो। **(त्रिभुवनदास से)** आप लेडी साहब को सँभालिए। उनका सिर कुछ बिगड गया-सा जान पडता है। मैंने इसीलिए उनसे कुछ नही कहा कि ऐसे अवसरो पर जिनका घनिष्ट सम्बन्ध नही है, उनकी अच्छी बात का भी कभी-कभी बडा बुरा प्रभाव पडता है।

**[ विश्वेश्वरदयाल और नौकर मनोहरदास की ओर जाते हैं और त्रिभुवनदास सरस्वती की ओर। विश्वेश्वरदयाल मनोहरदास के सिर पर बर्फ रखता है और मुँह में भी डालता है। नौकर पंखा करता है। डॉक्टर चतुर्भुजदास की नब्ज देखता है और फिर मनोहरदास की।]**

**त्रिभुवनदास :** **(सरस्वती को धीरे से)** देखो

**सरस्वती :** **(आँखें खोलकर)** तुम, तुम हो, हटो मेरे सामने से,

मेरे पास न आओ। तुम हत्यारे हो, तुमने अपने एक-मात्र पुत्र की हत्या की है।

**त्रिभुवनदास :** परन्तु तुम्हे वृथा का भ्रम हो गया है, मनोहर जीवित है, बिलकुल जीविन है।

**सरस्वती :** **(शीघ्रता से उठकर)** क्या जीवित है, मेरा लाल जीविन है ? कहाँ, कहाँ है, मेरा प्राण कहाँ है ?

**त्रिभुवनदास :** वह देखो, वह सोफा पर लेटा है। उसे मूर्च्छा आ गयी है, डॉक्टर साहब दवा कर रहे हैं, बहुत शीघ्र चेतना आ जायगी।

**[ सरस्वती जल्दी से मनोहरदास के निकट जाती और उसके निकट बैठकर उसका सिर अपनी गोद में रख नौकर के हाथ से पखा लेकर स्वयं झलती है। त्रिभुवनदास भी वहीं जाकर खड़ा हो जाता है। विश्वेश्वरदयाल और डॉक्टर चतुर्भुजदास की ओर आते हैं। कुछ देर तक निस्तब्धता रहती है। ]**

**मनोहरदास :** **(करवट लेते हुए)** ओह !

**[ मनोहरदास फिर चुप हो जाता है। सरस्वती के नेत्रो से आँसू बहने लगते हैं। ]**

**सरस्वती :** **(त्रिभुवनदास को धीरे से)** आज तक मैने तुमको कभी कुछ नही कहा था, पर आज मुझे पूरा होश नही था। हाँ, कुछ-कुछ चेनना अवश्य थी। कदाचित् कुछ कटु वाक्य कह दिये है। मुझे क्षमा करना। **(फिर आँसू आ जाते हैं।)**

**त्रिभुवनदास :** इसकी चिन्ता न करो ।

[**मनोहरदास फिर करवट बदलता है ।**]

**मनोहरदास :** आह ! हाथ मे बडा (**फिर चुप हो जाता है ।**)

**त्रिभुवनदास :** (**डॉक्टर के निकट जाकर**) मनोहर दो बार करवट बदल चुका है । कुछ बोला भी था ।

[**डॉक्टर फिर मनोहरद स की ओर आता है ।**]

**चतुर्भुजदास :** (**एकाएक होश में आकर**) हॉ, डॉक्टर साहब, वह जीवित है न. जीवित है न ?

**डॉक्टर :** (**मनोहरदास की नब्ज देखते हुए**) हॉ-हॉ, राजा साहब, आप बिलकुल चिन्ता न करे । वे करवट बदलने लगे है । कुछ बोले भी है, बहुत शीघ्र इन्हे पूरा होश आ जायगा ।

[ **चतुर्भुजदास मनोहरदास के निकट जाता है । विश्वेश्वरदयाल भी उसके पीछे-पीछे जाता है । कुछ देर तक निस्तब्धता रहती है । डॉक्टर फिर स्थैटिस-कोप मनोहरदास के हृदय पर लगाता है ।** ]

**मनोहरदास :** (**दाहिने हाथ से स्थैटिस-कोप को हटाते हुए**) है, यह क्या है ? (कुछ ठहरकर) अरे, हाथ मे बडा दर्द है । (**कुछ ठहरकर**) मै कहॉ हूँ ?

**चतुर्भुजदास :** (**गद्‌गद् होकर**) बेटा, बेटा, तू बोलने लगा, तू बोलने लगा । तू अपनी मॉ की गोद मे है, अपने बुड्ढे दादा के मकान मे है ।

**मनोहरदास :** (**आँखें खोल, चौंककर**) कौन अम्माँ, दादाजी !

(उठते हुए) मे यहाँ कैसे आया ?

**चतुर्भुजदास :** कैसे आया, गोली लगकर आया, बेटा, मरा हुआ आया, बेटा। भगवान् ने तुझे जिला दिया, मेरे बुढ़ापे और तेरी माँ की कोख की लाज रख ली।

**डॉक्टर :** (**मनोहरदास से**) अभी आप उठिए नही।

[ **सरस्वती पुनः मनोहरदास को लेटा लेती है।** ]

**मनोहरदास** परन्तु, डॉक्टर साहब, मै तो इस घर मे नही रह सकता, मेरी प्रतिज्ञा थी

**चतुर्भुजदास :** हाँ-हाँ, बेटा, तेरी प्रतिज्ञा पूरी होगी। तेरी यह प्रतिज्ञा थी न कि जब तक कर्जदारो पर का सूद न छोड दिया जायगा, जब तक जमीदारी हक छोडकर जमीन किसानो को न देदी जायगी, जब तक कारखानो के मुनाफे मे से आधा हर साल मजदूरो को न बॉट दिया जायगा और जब तक मै और त्रिभुवन अपनी-अपनी पदवियाँ छोडकर महात्मा गान्धी के दल मे न मिल जायँगे, तब तक तू इस घर मे आकर न रहेगा। ये सब बाते होगी, जरूर होगी।

**डॉक्टर :** हाँ-हाँ, इन्हे कुछ ऐसी बाते सुनाइए, जिनसे इनका चित्त प्रसन्न हो। ऐसे अवसरों पर चित्त की प्रसन्नता बहुत दूर तक बीमार को स्वस्थ कर देती है। अस्पताल ले जाकर एक्स-रे कराना होगा, परन्तु इसके पूर्व इनका चित्त जितना प्रसन्न हो सके, उतना ही अच्छा है।

**मनोहरदास :** परन्तु, दादाजी, यह सब करना आपके अकेले

हाथ मे थोडे ही है, पिताजी के हाथ मे भी तो है !

**चतुर्भुजदास** : उनको करना पडेगा ।

**मनोहरदास** : और यदि उन्होने न किया तो ?

**चतुर्भुजदास** : उन्होने न किया तो ? (**कुछ सोचते हुए**) अगर उन्होने न किया, तो मै अपने हिस्से की आधी जायदाद लेकर उसमे यह सब करूँगा ।

**मनोहरदास** : पर यदि उन्होने आपको जायदाद न दी, तो क्या आप पिता होकर उन पर मुकदमा चलाने को बैठेगे, जो मैने पुत्र होने पर भी नही किया था ?

**चतुर्भुजदास** : (**कुछ सोचते हुए**) नही, बेटा, उन पर मुकदमा न चलाऊँगा । ऐसी हालत मे मै भी यह घर छोडकर तेरे सग ही इस घर के बाहर निकल जाऊँगा । मेरी पदवी छोडने के बीच मे तो वे आ ही नही सकते । उसे छोड जो तू कहेगा, वह करूँगा । भीख माँगनी पडे तो वह माँगकर तेरा और अपना गुजर-बसर करूँगा । हम दादा-पोता एक साथ रहेगे ।

**मनोहरदास** : डॉक्टर साहब के कहने के अनुसार ये सब बाते आप मेरा चित्त प्रसन्न करने के लिए कह रहे है या सचमुच करेगे ?

**चतुर्भुजदास** : यह तो देख लेना, बेटा । अब तक न किया, इसी का मुझे ताज्जुब है , क्योकि, बेटा, मै कभी अपने लिए जिया ही नही । पहले तेरी दादी के लिए जीता था, फिर तेरे बाप के लिए । एक-एक पैसा खून का

पानी कर तेरे बाप के लिए कमाया था। वह एक दिन सब-का-सब तेरे बाप को दे दिया। अब तेरे लिए जिऊँगा। तेरे पिता का सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य मेरी समझ मे नही आता। जब तेरे पिता ने बी० ए० पास किया था, उस वक्त देश को स्वतंत्र करने के सिद्धान्त पर वे मुझसे लड़े थे, पर वही जब तू करना चाहता है, तब वे तुझसे भी लड़ रहे है। मैने पिता होने के सबब उनसे हार मान ली थी, पर वे तुझसे हार नही मानते। न जाने उनका यह कैसा सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य है कि इसके पीछे वे अपने बाप से भी लड़े और बेटे से भी। तेरा देश-प्रेम भी अब तक मेरी समझ मे नही आया, पर, हाँ, तेरी दादी का, तेरे बाप का और तेरा प्रेम समझ मे आता है। अब मरते-मरते शायद तेरे साथ और महात्मा गान्धी के आशीर्वाद से देश-प्रेम भी समझ मे आ जाय। **(चतुर्भुजदास चुप हो जाता है। उसके नेत्रो से आँसू बहने लगते हैं। कुछ देर तक निस्तब्धता रहती है।)**

**विश्वेश्वरदयाल : (मनोहरदास से)** मनोहरदास जी, मै भी आपको इस समय एक शुभ-समाचार दिये देता हूँ। कदाचित् इसे भी सुनकर डॉक्टर साहब के कहने के अनुसार आपको आरोग्य होने मे सहायता मिलेगी।

**मनोहरदास :** क्या, विश्वेश्वरदयालजी ?

**विश्वेश्वरदयाल :** देश के लिए आपने अपना महल, अपनी

सम्पत्ति, सब कुछ छोडा है, अपने प्राणो तक की आहुति देने मे आप पीछे नही हटे। आपके इस अद्भुत आदर्श और राजा साहब के इस समय के कथन ने आज मेरे हृदय मे भी महान् परिवर्तन कर दिया है, मेरे आन्तरिक चक्षु खोल दिये है। यद्यपि आंज अपने देश-वासियो पर गोली चलाने की आज्ञा देते समय भी मेरे हृदय की विचित्र दशा थी, परन्तु उस समय मै अपने सम्बन्ध मे कुछ निर्णय नही कर सका था। अब मैने भी अपने सम्बन्ध मे निश्चय कर लिया।

**मनोहरदास** : वह क्या, विश्वेश्वरदयालजी ?

**विश्वेश्वरदयाल** : मै कल इस नौकरी से त्यागपत्र दे दूँगा। आप और राजा साहब के इस त्याग के सामने मेरी पन्द्रह सौ रुपये महीने की नौकरी का त्याग कोई बडा भारी त्याग नही है, परन्तु मेरे पास उसे छोडकर और त्यागने को है ही क्या ?

**मनोहरदास** : **(गद्गद् कंठ से)** आपका त्याग हम लोगो के त्याग से कही बडा त्याग है।

**विश्वेश्वरदयाल** : नही, मनोहरदासजी, कुछ नही। इस देश के पैतीस करोड़ आदमियो में कितने सरकारी नौकरी पर निर्भर है ? जो सरकारी नौकरी नही करते, उनका क्या निर्वाह नही होता ? अपने देशवासियो, न्याय-परायण देशवासियों और फिर मनुष्यता की दृष्टि मे नि शस्त्र मनुष्यों, स्त्रियो और बच्चो को जेलो मे ठूँसकर,

लाठियाँ मारकर और गोली का निशाना बनाकर पन्द्रह सौ रुपया माहवारी पाने की अपेक्षा पन्द्रह रुपया महीने पर गुजर कर लेना कही अच्छा है।

**चतुर्भुजदास :** (**कुछ ठहरकर त्रिभुवनदास से**) अब तुम क्या करोगे, त्रिभुवन ?

**त्रिभुवनदास :** (**कुछ सोचते हुए**) मे, मे, मे पिताजी ? (**कुछ रुककर**) मैने अभी कुछ निर्णय नही किया है। आप जानते है, मै हृदय से नही, परन्तु मस्तिष्क मे शामिल होता हूँ। मै इस प्रकार सस्ते वचन देने मे असमर्थ हूँ। (**फिर कुछ रुककर**) मुझे अभी सारे विषय पर सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य सिद्धान्त-स्वातन्त्र्य की दृष्टि से विचार विचार करना ..

**यवनिका**

# धोखेबाज़
# तथा
# दस अन्य एकांकी

# निवेदन

सेठ जी ने अपने एकाकियो मे हमारी बड़ी-छोटी अनेक सामाजिक, राजनीतिक और पारिवारिक समस्याओ पर प्रकाश डाला है। इन एकांकियों का कथानक हमारे सार्वजनिक सामाजिक जीवन के इतने निकट है कि वे हमारे अपने ही प्रश्न और समस्याएँ प्रतीत होती है। प्रस्तुत पुस्तक मे उनके सामाजिक तथा समस्यात्मक एकांकी संगृहीत हैं।

**प्रकाशक**

## एकांकी-सूची

# धोखेबाज़

## मुख्य पात्र, स्थान

मुख्य पात्र :

| | | |
|---|---|---|
| १. | दानमल | : एक व्यापारी |
| २. | रूपचन्द | : दानमल का मुनीम |
| ३ | कैलाशचन्द्र | एक खान वाला |
| ४ | नीलरतन | : एक राइस मिल वाला |
| ५ | मुमताजुद्दीन | : एक मकान वाला |
| ६ | लखमीदास | : दानमल के मित्र |
| ७. | कालीचरण | |
| | स्थान | : कलकत्ता |

## पहला दृश्य

स्थान : दानमल का दफ्तर

समय : प्रात काल

[तीनो तरफ़ लकड़ी के पार्टीशन की दीवालें है जिनमें ऊपर की तरफ काँच लगे है। पीछे की दीवाल में कोई दरवाजा नहीं है। आसपास की दीवालो के सिरों पर एक-एक छोटा सा एक पल्ले का दरवाजा है, जो बन्द है। इन दरवाजो में भी ऊपर की तरफ कॉच लगे है। कमरे के बीच में एक उसी तरह की पार्टीशन की दीवाल और है जिससे एक कमरे के यथार्थ मे दो कमरे हो गये है। दोनो कमरों के बीच की पार्टीशन की दीवाल के बीच मे भी एक दरवाजा है। यह भी बन्द है। दोनों कमरो के बीचोंबीच एक-एक बड़ी आफिस टेबिल रखी है। इन आफ़िस टेबिलो के ऊपरी भाग कॉच के तख्ते से पटे है। उन पर लिखने-पढ़ने का बेशकीमती सामान और स्टेशनरी सजे है। एक-एक टाइमपीस घड़ी और एक-एक घंटी भी रखी है। दाहिनी तरफ के कमरे की आफिस टेबिल पर छै टेलीफोन एक लाइन में रखे है और बायीं ओर के कमरे की आफिस टेबिल पर सिर्फ एक टेलीफोन है। हरेक आफ़िस टेबिल के पीछे की तरफ गद्दीदार

आफ़िस चेअर है, जिसका मुँह सामने की तरफ है। हरेक आफ़िस टेबिल के सामने की ओर चार-चार गद्दीदार साधारण कुर्सियाँ रखी है, इनके मुँह आफिस चेअर की तरफ है। बायी ओर का कमरा खाली है दाहिने तरफ के कमरे मे आफ़िस चेअर पर रूपचन्द बैठा हुआ है। रूपचन्द की उम्र करीब ४० साल की है। वह साँवले रंग और साधारण शरीर का व्यक्ति है। बाल कुछ-कुछ सफ़ेद हो चले है। सिर पर मारवाड़ी पगड़ी बाँधे और शरीर पर सफेद कुरता और धोती पहने है। रूपचन्द चश्मा लगाये हुए कुछ लिख रहा है। पीछे की पार्टीशन की दीवाल के पीछे से टाइप राइटरों की खटखटाहट की धीमी आवाज़ आ रही है। दाहनी तरफ के दरवाज़े को खोल चपरासी का प्रवेश। चपरासी के आते ही दरवाज़ा आप से आप बन्द हो जाता है। चपरासी सफेद रंग की वरदी पहने है। कमर मे कमरपेटी है जिस पर अंग्रेज़ी मे लिखा है—दानमल कम्पनी। चपरासी हाथ में चाँदी की तश्तरी लिये हुए है जिसमे एक विज़िटिंग कार्ड रखा है।]

रूपचन्द (तश्तरी का कार्ड उठाकर उसे देख) भेज दो।

[चपरासी का उसी दरवाज़े से प्रस्थान। उसी दरवाज़े को खोल कैलाशचन्द्र का प्रवेश। कैलाशचन्द्र गोरे रंग का ऊँचा पूरा मोटा-ताजा आदमी है। उम्र है क़रीब पचास वर्ष। बाल आधे सफ़ेद हो गये है। काले रंग की शेरवानी और चूड़ीदार पजामा पहने है। सिर पर फ़ैल्ट कैप लगाये है। कैलाशचन्द्र को देखकर रूपचन्द खड़े हो उससे हाथ मिलाता है। रूपचन्द अपनी कुर्सी

**पर और कैलाशचन्द्र सामने की एक कुर्सी पर बैठता है। ]**

**रूपचन्द** (**टाइमपीस घड़ी देखते हुए मुस्कराकर**) आप ठीक समय पर आये।

**कैलाशचन्द्र** कलकत्ते मे समय कितनी बहुमूल्य वस्तु है इसे मैं जानता हूँ, मुनीम जी।

**रूपचन्द** मैंने सेठ साहब से बाते कर ली है।

**कैलाशचन्द्र** बहुत अच्छा।

**रूपचन्द** उन्होने आपकी खाने लेना स्वीकार कर लिया है।

**कैलाशचन्द्र** (**अत्यन्त प्रसन्नता से**) यह आपकी कृपा के कारण।

**रूपचन्द** नही, कैलाशचन्द्र जी, एक तो वे यो ही उदार हृदय के मनुष्य है, दूसरे लडाई की इस तेजी मे उन्होने इतना रुपया कमाया है कि उनकी समझ मे नही आता कि उसे कहाँ लगावे।

**कैलाशचन्द्र** मैंने आपसे एक प्रार्थना और की थी कि मुझे इस समय रुपये की अत्यधिक आवश्यकता है।

**रूपचन्द** हाँ, उसके सम्बन्ध मे भी मैने उनसे निवेदन कर दिया है। आप खाने उनके नाम ट्रान्सफर करने की उचित कार्रवाही कीजिए, आपको पन्द्रह दिनो का एक लाख रुपये का पोस्टडेटेड चैक आज दे दिया जायगा।

**कैलाशचन्द्र** (**अत्यन्त प्रसन्न होकर**) मै किन शब्दो मे आपको धन्यवाद दूँ, यह मेरी समझ मे नही आता, मुनीम जी। (**जेब से हज़ार रुपये के पाँच नोट निकालकर टेबिल**

**पर रखता है।)**

**रूपचन्द** : इसकी इस समय आवश्यकता नही है।

**कैलाशचन्द्र** . आप मुझे एक लाख रुपये का पोस्टडेटेड चैक दिलावे और मै यह छोटी-सी सेवा भी न करूँ। दस हजार चैक सिकरने पर भेट करूँगा।

**रूपचन्द** . (**नोट उठाकर जेब में रखते हुए**) इच्छा आपकी। (**कुछ रुककर**) क्यो कैलाशचन्द्र जी, खानो के पत्थर मे जितना परसैन्ट ताँबा, चाँदी और सोना रिपोर्टो मे लिखा है, वह तो बराबर है न ?

**कैलाशचन्द्र** विशेषज्ञो की सारी रिपोर्टे आप देख चुके है। हिन्दुस्थान के ही नही विलायत तक के विशेषज्ञो की रिपोर्टे है।

**रूपचन्द** : (**मुस्कराकर**) विशेषज्ञो की रिपोर्टे ! कैलाशचन्द्र जी, ये रिपोर्टे कैसे मिल जाती है, यह तो आप और मै दोनो अच्छी तरह जानते है।

[**रूपचन्द जोर से हँसता है। कैलाशचन्द्र भी हँसने मे साथ देता है। चपरासी का तश्तरी मे दूसरा विजिटिंग कार्ड लिये हुए प्रवेश।**]

**रूपचन्द** : (**कार्ड को देखकर**) विजिटर्स रूम मे बैठाओ। मै अभी मिलूंगा।

[**चपरासी का प्रस्थान।**]

**रूपचन्द** : अच्छा, आप विजिटर्स रूम मे ठहरिए। सेठ साहब बाज़ार खुलने के कुछ पहले अवश्य आ जाते है। उनके आते

ही मै आपका चैक दिला दूँगा।

**कैलाशचन्द्र :** (**खड़े होते हुए**) बहुत अच्छा। अनेक धन्यवाद।

(**प्रस्थान।**)

[**रूपचन्द घंटी बजाता है। चपरासी का प्रवेश।**]

**रूपचन्द** नीलरतन बाबू को भेज दो।

[**चपरासी का प्रस्थान। नीलरतन का प्रवेश। नीलरतन करीब ६० वर्ष का काले रंग का बहुत ठिगना पर अत्यन्त मोटा और कुरूप बंगाली है। सिर और मूँछो के बाल सफेद हो गये है। वह कुरता और धोती पहने है तथा कुरते पर एक शाल ओढ़े है। रूपचन्द खड़े होकर नीलरतन से हाथ मिलाता है। रूपचन्द अपनी कुर्सी पर और नीलरतन उसके सामने की कुरसी पर बैठता है।**]

**रूपचन्द** बाबू, हॅमने आपका मामला मे सेठ से बात किया। ऊनको आपका राइस मिल लेना मजूर है।

**नीलरतन :** [**अत्यन्त प्रसन्नता से**] धॅन्यवाद, मुनीम, बॅहोत-बॅहोत धॅन्यवाद। मूल्य ठो ठीक कॅर लिया।

**रूपचन्द :** हॉ, साठ सॅहस्र टाका, बाबू

**नीलरतन .** (**और भी प्रसन्नता से**) बॅहोत ठीक, बॅहोत ठीक।

**रूपचन्द** आप सेलडीड का प्रॅबन्ध कॅरिये। पन्द्रा दीन मे सॅब हो जाय। आज आपका पॅन्द्रा दीन का पोस्टडेटेड चैक मील जायगा।

**नीलरतन** पोस्टडेटेड चैक! बॅहोत, बॅहोत धॅन्यवाद, मुनीम, बॅहोत बॅहोत धॅन्यवाद।

**रूपचन्द** · (**धीरे से**) अॅब हॅमारा ह्क्क ?

**नीलरतन** (**दो हज़ार के नोट टेबिल पर रखते हुए**) हॅम घॅर से लेकर चॅला था। पाॅच शॅहस्र चैक का रुपिया मिलने पॅर देगा।

**रूपचन्द** . (**नोट उठाकर जेब मे रखते हुए**) धॅन्यवाद, बाबू। (**कुछ रुककर**) आपका कारखाना चालीस बॅरस से जादा पूराना तो नई न ?

**नीलरतन** · चालीस बॅरष से एक ठो मॅहीना बी जादा हो तो टाका वापीश।

**रूपचन्द** और मॅशीन सॅब वर्किग आर्डर मे है न ?

**नीलरतन** : बीलकूल ठो वर्किग आर्डर मे।

[**चपरासी का फिर तश्तरी मे एक विज़िटिंग कार्ड लेकर प्रवेश। रूपचन्द कार्ड देखता है।**]

**रूपचन्द** विजिटर्स रूम मे बैठाओ। मै अभी मिलूँगा।

[**चपरासी का प्रस्थान।**]

**रूपचन्द** आछा, आप अॅबी विजिटर्स रूम मे बैठिये। सेठ बाजार खूलने का पेले आ जाता है। ऊसका आता ही आपको चैक मील जायगा।

**नीलरतन** : बॅहोत अॅच्छा, मुनीम, बॅहोत अॅच्छा। (**प्रस्थान।**)

[**रूपचन्द घंटी बजाता है। चपरासी का प्रवेश।**]

**रूपचन्द** : मुमताजुद्दीन साहब को भेज दो।

[**चपरासी का प्रस्थान। मुमताजुद्दीन का प्रवेश। मुमताजुद्दीन करीब ३५ वर्ष का गेहुएँ रंग का मनुष्य है। वह बहुत**

**ऊँचा है, पर बहुत दुबला है। सिर और दाढ़ी-मूछों के बाल काले हैं। वह शेरवानी और ढीला पाजामा पहने है। सिर पर लाल तुर्की टोपी लगाये है। रूपचन्द खड़े होकर उससे हाथ मिलाता है। रूपचन्द अपनी कुरसी पर और मुमताजुद्दीन उसके सामने की कुरसी पर बैठता है।]**

**रूपचन्द** . आपके मकान का सौदा पट ही जायगा, जनाब।

**मुमताजुद्दीन**—नवाजिश है, हुजूर की। सेठ साहब से गुफ्तगू हो गयी ?

**रूपचन्द** जी हाँ, सारा मामला तय हो गया। कीमत अस्सी हजार आपको मजूर है न ?

**मुमताजुद्दीन** हालाँकि जायदाद इससे कही ज्यादा की है, लेकिन ·

**रूपचन्द** (**बीच ही मे त्योरी बदलकर**) क्या कहा, जायदाद ज्यादा ·

**मुमताजुद्दीन** (**एकदम नरमी से**) गुस्ताखी मुआफ फरमाइए। मुझे अस्सी हजार मजूर है।

**रूपचन्द** . मकान तो वही चीतपुर रोड के कोने वाला ही है न ?

**मुमताजुद्दीन** जी हाँ, आपने तो शायद देखा भी है ?

**रूपचन्द** · हाँ, देखा है, शायद, ईस्ट इडिया कम्पनी के वक्त का बना हुआ है।

**मुमताजुद्दीन** क्या फर्मा रहे है सरकार, अभी पचास साल पुराना भी न होगा।

**रूपचन्द** खैर। बयाने का दस हजार का चैक आपको आज दे

दिया जायगा।

**मुमताजुद्दीन** (**प्रसन्नता से**) मै अजहद शुक्रगुजार हूँ।

**रूपचन्द** (**कुछ विचारते हुए**) पन्द्रह रोज मे तो मकान का नक्शा वगैरह बनकर बयनामा लिखा जा सकता है न ?

**मुमताजुद्दीन** · बडी खुशी से।

**रूपचन्द** तो देखिए, बाकी रुपये का पन्द्रह दिन का पोस्टडेटेड चैक भी आपको आज ही दिया जा सकता है, बशर्ते ·····

(**चुप हो जाता है।**)

**मुमताजुद्दीन** : बशर्ते, हुजूर ?

**रूपचन्द** . (**त्योरी बदलकर**) आप तो अजीबोगरीब आदमी मालूम होते है। बिजनेस किस चिडिया का नाम है यह भी शायद नही जानते।

**मुमताजुद्दीन** (**सिटपिटाकर**) हुजूर·· हुजूर ··

**रूपचन्द** : अजी हुजूर, हुजूर क्या ? दो सौ साल पुराना मकान, वीस हजार का भो न होगा, बिक रहा है, अस्सी हजार मे। दस हजार बयाने मे मिल रहे है और बाकी रकम का पोस्टडेटेड चैक। और फिर भी आप कुछ नही समझते।

**मुमताजुद्दीन** : ओ ! मै सरकार की हर तरह से खिदमत करने को ·· ·

**रूपचन्द** जरा धीरे बोलिए, जनाब।

**मुमताजुद्दीन** : (**डरते-डरते**) खता मुआफ।

**रूपचन्द** : (**धीरे-धीरे**) देखिए, ये दस हजार रुपये जो बयाने मे मिल रहे है कुल के कुल आपको मुझे देने होगे।

**मुमताजुद्दीन** मुआफी, हुजूर, मुआफी दीजिए। मुझे सब मजूर है।

**रूपचन्द** · (**बैठते हुए**) अच्छी बात है। आप विजिटर्स रूम मे तशरीफ रखिए। सेठ साहब के आने पर आपको चैक मिल जायँगे।

**मुमताजुद्दीन** (**खड़े होते हुए**) बहुत खूब।

[**चपरासी का तश्तरी मे एक कागज़ लिये हुए प्रवेश। रूपचन्द कागज़ देखता है।**]

**रूपचन्द** (**मुँह बिगाड़कर**) इन चन्दे माँगने वालो के मारे तो नाको दम है। (**चपरासी से**) अच्छा, भेज दो, उन लोगो को।

[**मुमताजुद्दीन और चपरासी का प्रस्थान। रूपचन्द टेबिल की दराज़ से चैक बुक निकालकर चैक लिखना शुरू करता है। तीन गुजरातियो का प्रवेश। एक वृद्ध है, एक अधेड़ और एक युवक। वृद्ध गुजराती ढंग की पगड़ी लगाये है और सफ़ेद कोट तथा धोती पहने है। युवक अंग्रेज़ी ढंग के कपड़ों मे है। तीनों गेहुँए रंग के है। वृद्ध कुछ मोटा तथा ठिगना है, शेष साधारण क़द और शरीर के है। तीनों व्यक्ति रूपचन्द का अभिवादन करते है, पर रूपचन्द अभिवादन का उत्तर भी नहीं देता, चैक लिखता रहता है। तीनों आदमी सामने की कुर्सियों पर बैठ जाते है और रूपचन्द की तरफ़ देखते रहते है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।**]

**वृद्ध गुजराती** · हम कल साँझ कूँ भी आया होता, पर आपका

मुलाकात नही हुआ ।

**[रूपचन्द कोई उत्तर न देकर लिखने में संलग्न रहता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है ।]**

**वृद्ध गुजराती** आज रात कूं मेल से हम मबई कूं जाना चाना।

**रूपचन्द** (**बिना सिर उठाये हुए लिखते-लिखते बड़े रूखे स्वर में**) आज रात कूं मेल से मबई कूं जा मकना हे ।

**वृद्ध** पण, मुनीम जी, हमारा जाना नो आपका शेठ पर निर्भर न ? उनकूं मिलने का वास्ते हम मबई से आया ।

**रूपचन्द** (**उसी प्रकार**) आपसे मिलने का वास्ते हम शेठ कूं पूछा, पण उनकूं इस बखत बीलकुल टाइम नई ।

**अधेड़** मुनीम जी, मुनीम जी !

**रूपचन्द** (**लिखना रोककर सिर उठा**) देखो, शेठ, आप सरखा चन्दा मॉगने वाला का रोज व रात आना हे वरान ! समजा ? इस तरा सब कूं चन्दा दिया जाय नो भुगतान मे देने कूं रुप्या नई बचे । समजा ?

**युवक** क्या केते हो, मुनीम जी । इस लडाई मे कलकत्ता ने रुप्या। कमाया हे, कलकत्ता ने । मंबई मे मिलियन्स कलकत्ता आया आपका शेठ ने कीतना कमाया हे ? उनके लिये फाइव टैन थाउजन्ड क्या है ?

**रूपचन्द** (**फिर से उसी तरह लिखते हुए**) कलकत्ता ने रुप्या कमाया हे इसलिये मबई वाला कलकत्ता वाला पर बलता हे, क्यूं ?

**वृद्ध** नई, नई ।

**रूपचन्द** (**लिखना रोककर सिर उठा जोर से**) कलकत्ता वाला मे अक्कल होती, समजा, अक्कल होती, ईसलिए कमाया । कलकत्ता वाला मे बल होता, समजा, बल होता, ईसलिए मबई से कलकत्ता कूँ रुप्या आया हे। मबई वाला ने कलकत्ता वाला पर कोई भला कीधा है।

**वृद्ध** . नई, नई।

[**बायीं तरफ के कमरे मे, बायीं तरफ की दीवाल का दरवाज़ा खोलकर दानमल का प्रवेश। दानमल की अवस्था करीब ३० वर्ष की है। वह गौर वर्ण का सुन्दर युवक है। मुख पर अत्यधिक प्रसन्नता और प्राफुल्य दृष्टिगोचर होता है। क़द मे वह ऊँचा है। शरीर न बहुत दुबला है, न बहुत मोटा। छोटी-छोटी मूँछे है। खादी का कुरता और धोती पहने है। सिर पर गान्धी टोपी है।**]

**रूपचन्द** . (**फिर से लिखते हुए**) सुनो, शेठ, आप फोकट अपना टाइम गमाते हो, और मेरा बी। आ बखत आपकूँ चन्दा नई मिल सकता।

**दानमल** · (**बायीं ओर के कमरे से जरा जोर से**) कौन है, रूपचन्द ?

**रूपचन्द** : (**अपने कमरे में से ही कुछ जोर से**) यो ही कुछ फालतू लोग बबई से चन्दा माँगने आ गये है।

[**दानमल दोनों कमरों के बीच का दरवाज़ा खोल रूपचन्द के कमरे में आता है। उसे देखकर रूपचन्द खड़ा हो अपनी कुर्सी से हटता है। तीनों गुजराती भी खड़े हो जाते है।**

**दानमल रूपचन्द की कुरसी पर बैठता है। तीनो गुजराती दानमल का अभिवादन कर अपनी-अपनी कुर्सियो पर बैठते है। दानमल नम्रता-पूर्वक अभिवादन का उत्तर देता है। रूपचन्द सामने की चौथी कुर्सी पर बैठ जाता है।]**

**दानमल** (गुजरातियो से) आप लोग बबई से आये है ?

**वृद्ध** · जी, शेठ, मबई की ह्यूमैनटेरियन लीग ने हमारा डेपुटेशन आपका पास भेजा है।

**दानमल** · इतनी दूर से पधारने का आपने कष्ट उठाया ?

**वृद्ध** कष्ट की तो कोई बात ई नई, शेठ।

**दानमल** कब आप लोगो का आना हुआ ?

**वृद्ध** चार दिवस हो गया, शेठ।

**दानमल** : चार दिन !

**वृद्ध** . जी, शेठ।

**दानमल** यहाँ और किसी ने कुछ दिया ?

**वृद्ध** एक आदमी से हजार रुप्या मिला, शेठ, बाकी सब केना हे आप कूँ मिले। आपके देने पीछे बाकी लोग देगा।

**दानमल** . अच्छा, मेरे लिये आपका काम रुका है ?

**वृद्ध** जी, शेठ।

**दानमल** मुझसे आप कितना चाहते है ?

**वृद्ध** · (**नम्रता से मुस्कराकर**) हम लोग तो बोन उम्मेद से आया हे, शेठ, आपका जितना रजा हो।

**दानमल** फिर भी, अपनी इच्छा तो बताइए।

[ **वृद्ध अपने साथियो की ओर देखता है।** ]

**अधेड़** कम से कम दस हजार तो दो, शेठ !

**दानमल** (**मुस्कराकर**) कम से कम दस हजार !

**युवक** . (**मुस्कराकर**) जी, शेठ।

**दानमल** (**रूपचन्द से**) मुनीम जी, इनको ग्यारह हज़ार एक सौ ग्यारह का चैक लिख दीजिए।

**वृद्ध** (**प्रसन्न होकर**) धन्यवाद शेठ, धन्यवाद।

**अधेड़** (**प्रसन्नता से**) बोत बोत, धन्यवाद।

**युवक** : (**प्रसन्नता से**) मैनी मैनी थेंक्स।

**दानमल** : (**खड़े होते हुए**) और कोई आज्ञा ?

**[ सब लोग खड़े हो जाते हैं। ]**

**वृद्ध** · आपने सब कुछ कर दिया, शेठ।

**[ दानमल अपने कमरे मे जाकर अपनी आफ़िस चेअर पर बैठता है। रूपचन्द अपने कमरे मे अपनी कुर्सी पर बैठता है। तीनों गुजराती अपनी-अपनी कुर्सियों पर बैठ जाते हैं।]**

**रूपचन्द** · (**रुखाई से**) आप लोग विजिटर्स रूम मे ठेरिए। थोडा देर मे चेक आप कूं पोच जायगा।

**वृद्ध** बोत अच्छा।

**[तीनों खड़े होते हैं और अभिवादन कर दाहिनी तरफ़ के दरवाजे से बाहर जाते हैं। इस बार रूपचन्द इनके अभिवादन का उत्तर देता है। रूपचन्द चैक बुक मे एक चैक और लिखकर दानमल के कमरे में जाता है और दानमल के सामने की एक कुर्सी पर बैठता है।]**

**दानमल** . क्या भाव, बन्द हुआ, पाट ?

**रूपचन्द** साढे बानवे।

**दानमल** · और हैसियन ?

**रूपचन्द** पौने अठारह।

**दानमल** · सवेरे कुछ सौदा किया ?

**रूपचन्द** . हाँ, दस हजार गाँठ पाट की ली और पाँच लाख हैसियन।

**दानमल** क्यो, कोई खबर मिली क्या ?

**रूपचन्द** पक्की खबर।

**दानमल** क्या खबर मिली ?

**रूपचन्द** नीचे के भाव इस सप्ताह मे अवश्य बँध जायँगे।

**दानमल** यह खबर तो बहुत दिन से उड रही है।

**रूपचन्द** आज नो मैं खुद उनसे मिलकर आया हूँ।

**दानमल** · खुद से ?

**रूपचन्द** हाँ, हाँ, खुद से।

**दानमल** क्या भाव बँधेगे ?

**रूपचन्द** पट का पच्चानवे और हैसियन का अठारह।

**दानमल** · पक्का ?

**रूपचन्द** . बिलकुल। आज उस पार्टी ने बहुत गाँठे पोते की है, हैसियन भी बहुत लिया है।

**दानमल** · अब अपने यहाँ कितनी गाँठे पाट और कितना हैसियन पोते है ?

**रूपचन्द** . **(विचारते हुए)** कोई पचास हजार गाँठ पाट और तीन करोड हैसियन होगा। लडाई मे तो तेज़ी का ही

रुजगार कहना चाहिए। लडाई—मतलब तेजी। पिछली लडाई मे एकदम से इतनी तेजी नही आयी थी जितनी इस लडाई मे आयी। आज जिससे मै मिलने गया था, वह कहता था कि पाट का भाव डेढ सौ हो जायगा और हैसियन का चालीस।

**दानमल** हाँ, सवा सौ पाट और पच्चीस हैसियन तो हो ही गया था। बात यह है कि जूट की हिन्दुस्थान को मनापली है। हवाई लडाई मे वार बैग के बिना काम नही चल सकता। जब तक लड़ाई चलेगी तब तक सरकार को वार बैग लेना ही पडेगा। बीच-बीच मे रीएक्शन बहुत से आयेगे, पर अन्त मे तेजी ही रहेगी।

[ **कुछ देर निस्तब्धता रहती है।** ]

**दानमल** चन्दे का चैक लिख लिया ?

**रूपचन्द** · हाँ, पर आपने चन्दा बहुत दिया। जो भी माँगने आता है हरेक को आप यो ही देते है।

**दानमल** भगवान् ने धन और किस लिए दिया है, रूपचन्द ?

**रूपचन्द** यह तो ठीक है, पर देखकर चलना चाहिए।

**दानमल** जो देखकर चलता है उसके पास यह धन क्या सदा रहता है ? रूपचन्द, मै तो लडाई के कारण इस धन्धे मे पडा। दो महीने मे ही इतना कमाया कि समझ मे नही आता कि कहाँ लगाऊँ, और इतनी कमाई क्यो हो रही है जानते हो ?

**रूपचन्द** क्यो ?

**दानमल** मैं स्वय के लिए नहीं कमाना चाहता, मैं चाहता हूँ कि इस कमाई से देश की सेवा करूँ। आपस वालों की, गरीबों की भलाई करूँ। इसलिए जो सस्था भी माँगती है, जी खोलकर उसी को देना हूँ। आपस वालों की भलाई करने की भी सोच रहा हूँ। रोज गरीबों को भी जो हो सकता है, बाँटता हूँ। (**कुछ रुककर**) रूपचन्द, मैं साध्य को प्रधान चीज मानता हूँ, साधन को गौण वस्तु। मेरा साध्य देश-सेवा और गरीबों का उपकार है। लडाई के कारण मैंने फाटके को साधन बनाया है। और फिर, रूपचन्द, आज कलकत्ता और बबई मे जो बड़े-बडे दानी है, दानवीर कहे जाते है, सब फाटके ही से तो बने है।

**रूपचन्द** : सब फाटके से, और गयी लडाई मे हो अधिकाश बने।

**दानमल** . रूपचन्द, आज तो तुम्हे तीन चैक और लिखने पडेगे।

**रूपचन्द** : किसके लिए ?

**दानमल** · लखमीदास, कमलाचरण और तुम्हारे लिए।

**रूपचन्द** . मेरे लिए भी ?

**दानमल** हाँ तुम्हारे लिए भी। तुम्हारे लिए दस हजार का। एक नयी मोटर खरीदो। लखमीदास और कमलाचरण मेरे स्कूल और कॉलेज के सहपाठी है। मै दो महीने मे इतना बडा आदमी हो गया पर वे बिचारे जैसे थे वैसे ही है। मैने लखमीदास को एक बाडी देने कहा था और कमलाचरण को एक बगीचा।

**रूपचन्द** सेठ जी !

**दानमल** बोलो मत। मित्रो के गरीब रहते मुझे धन से आनन्द ही नही आता। लखमीदास ने पचपन हजार मे बाड़ी का सौदा किया है और कमलाचरण ने पैतालीस हजार मे बगीचे का।

**रूपचन्द** . पर इतने रुपये अभी बैक मे नही है।

**दानमल** . दोनो जायदादो के सौदे मे पाँच-पाँच हजार बयाने के देना है। बयाने के चैक आज के दे दो और बाकी के रुपये के पोस्टडेटेड।

**रूपचन्द** . पर आज और भी कुछ चैक देने है।

**दानमल** : किनको ?

**रूपचन्द** · ताँबे की खानो का सौदा हो गया। राइस मिल का सौदा भी पट गया। और चीतपुर रोड का मकान भी ले लिया।

**दानमल** : किसी तरह से प्रबन्ध करो। (**मुस्कराकर**) मै जानता हूँ, तुम सब कर लोगे।

**रूपचन्द** · (**विचार करते हुए**) करना ही पड़ेगा।

**दानमल** · (**प्रसन्नता से**) हिअर स्पीक्स रूपचन्द एजेन्ट आफ दानमल कम्पनी !

[ **रूपचन्द खड़े होकर टेबिल पर चैक बुक रख चार चैक और लिखता है। और चैक बुक दानमल के सामने दस्तखत के लिये रखता है।** ]

**दानमल :** (**एक चैक पर दस्तख़त कर**) यह तांबे की खान का ?

**रूपचन्द** · जी। पन्द्रह दिनो का पोस्टडेटेड। इतने दिनो मे कैलाशचन्द्र खान ट्रान्सफर करने की सारी व्यवस्था कर लेगा।

**दानमल :** (**दूसरे चैक पर दस्तखत कर**) यह राइस मिल का ?

**रूपचन्द :** यह भी पन्द्रह दिनो का पोस्टडेटेड है। इतने दिनो मे लिखा-पढी इत्यादि सब हो जायगी।

**दानमल .** (**तीसरे चैक पर दस्तख़त कर**) यह चीनपुर रोड के मकान का ?

**रूपचन्द .** जी, मकान के बयाने का, दूसरा सत्तर हजार का चैक और है।

**दानमल .** (**चौथे चैक पर दस्तखत कर**) यह ?

**रूपचन्द :** जी, यह भी पन्द्रह दिनो का पोस्टडेटेड है। इस म्याद के भीतर नक्शा वगैरह बनकर बयनामा लिख जायगा। (**कुछ रुककर**) पोस्टडेटेड चैक इसलिए दिये जाते है कि बेचने वाले मानते नही और चीजे सब आधे दामो से भी कम मूल्य मे मिली है। ईश्वर की दया से पन्द्रह दिनो मे अपने यहाँ बहुत रुपया आ जायगा।

**दानमल .** ठीक, (**पाँचवें चैक पर दस्तख़त करते हुए**) यह चन्दे का ?

**रूपचन्द** · जी।

**दानमल** : (**चार चैकों पर और दस्तख़त करके**) ये लखमीदास और कमलाचरण के !

**रूपचन्द** जी।

**दानमल** और तुम्हारा ?

**रूपचन्द** उसकी अभी आवश्यकता नही। (**चैक बुक उठाता है।**)

**दानमल** लाओ, चैक बुक मुझे दो।

[**रूपचन्द चैक बुक नहीं देता। दानमल मुस्कराते हुए खड़ा होता है और चैक बुक रूपचन्द के हाथ से छीन फिर अपनी कुर्सी पर बैठ दस हज़ार का चैक रूपचन्द के नाम लिखता है। रूपचन्द के कमरे मे टेलीफ़ोन की घंटी बजती है।**]

**रूपचन्द** (**दानमल की टेबिल की घड़ी देखते हुए**) ग्यारह बजे। बाजार खुल गया। (**जल्दी से अपने कमरे मे जाता है।**)

**रूपचन्द** . (**अपनी कुर्सी पर बैठकर टेलीफ़ोन का रिसीवर दाहने हाथ मे उठा दाहने कान में लगाकर**) पाट खुल गयो ?· · ·के भाव खुल्यो ?·· · के· इक्कानवे। (**दूसरे फ़ोन की घंटी बजती है। उसका रिसीवर बाये हाथ से उठाकर बायें कान में लगाकर**) हैसियन खुल गयो ? ······के भाव······सत्तरा चौदा आना।· · ··(**तीसरे फ़ोन की घंटी बजती है। बायें कान में लगे हुए रिसीवर को गर्दन टेढ़ी कर चेहरे और कन्धे के बीच मे इस तरह रख**

**लेता है जिस से रिसीवर गिरता नहीं तथा रिसीवर में सुनने की जगह कान के नज़दीक और बोलने की जगह मुँह के नज़दीक आ जाती है पर हाथ खाली हो जाता है। उस हाथ मे तीसरा रिसीवर उठाकर बॉयें कान में लगा)** कौन ? · कौन ? · रुक्मणी रमण जी, हजार गॉठ बेच दूँ। · अच्छा। भाव इक्यानवे है। इक्यानवे मे ही बेच दूँ ··· बजार भाव बेच दूँ। ..**(दाहने कान में लगे हुए रिसीवर मे)** बेच · रुक्मणी रमण जी री हजार गॉठॉ बेच··· कसने बेच। **(बॉयें कान में लगे हुए रिसीवर मे)** कह दिया बेचने को। **(दाहने कान में लगे हुए रिसीवर मे)** बेची ? साढे नव्वे मे ? इतरी नीची! **(बॉये कान मे लगे हुए रिसीवर में)** साढे नव्वे मे हजार गॉठ बेची। **(उस रिसीवर को रख देता है। गर्दन मे दबे हुए रिसीवर को बॉये हाथ से बॉयें कान में लगाकर)** के भाव ·के भाव · · साढे सत्तरा। कुण बेचू चले है ? · खुदरा · ···। खुदरा ··· · **(उस रिसीवर को रख देता है। दाहने कान में लगे हुए रिसीवर मे)** के भाव··· 'नव्वे। के बात है ? कुण बेचे है ? पजाब पचानन ? सगमरमर सदन ? सगमूसा महल ? ·· · के भाव ? साढे नुवासी। **(रिसीवर रख देता है।)**

**[कुछ देर निस्तब्धता रहती है। फिर घंटी बजती है।]**

**रूपचन्द (दाहने हाथ से रिसीवर उठाकर दाहने कान में लगाकर)** के भाव · ·· के भाव ·· **(आश्चर्य से)**

अठासी··· · के हूयो ? वार बैग कैसिल हो गयो। (**दूसरे फ़ोन की घंटी बजती है। उसका रिसीवर बाँये हाथ से उठाकर बाँये कान मे लगाते हुए**) के भाव ·· · के भाव ·· · (**आश्चर्य से**) साढी सोला· ··

[**दानमल घबड़ाकर अपने कमरे से रूपचन्द के कमरे मे आता है।**]

**रूपचन्द** : के हुयो ? वार बैग कैसिल हो गयो ? ·· कैसे हो सके है ? · हुयो है ? · · कुण बेचू कुण बेचू ? · ···सगला बेचू ? (**दाहने कान के रिसीवर मे**) के भाव ? · छियासी ! · · कोई लेऊई नई चाले ?···· भूकप हो गयो। ·· हुयो के ? ·· वार बैग कैसिल हो गयो ?

**दानमल** · (**एकदम घबड़ाकर**) क्या हुआ, रूपचन्द ?

**रूपचन्द** . वार बैग कैसिल हो गया ! सब बाजार बेचू ! कोई लेऊ नही।

**दानमल** : (**बहुत ज्यादा घबराहट से**) मै पाट के बाड़े मे जाता हूँ। (**शीघ्रता से दाहनी ओर के दरवाज़े से प्रस्थान।**)

[**तीसरे फ़ोन की घंटी बजती है। रूपचन्द फिर तीनों रिसीवर उसी तरह ले लेता है जैसे पहले लिये थे।**]

**रूपचन्द** : कौन ·····कौन · ···माधोप्रसाद जी ·· पॉच हज़ार गाँठ बेचूँ ?······(**दाहने कान वाले रिसीवर में**) बेच, पॉच हजार गॉठॉ माधोपरसाद री · ·कस ने बेच। · · · (**चौथे फ़ोन की घंटी बजती है। तीसरे फ़ोन का रिसीवर**

**रखकर चौथे फ़ोन का रिसीवर उठा)** कौन ··· ·कौन · ·अबाप्रसाद जी, बीस लाख हैसियन बेचूं ? ··· **(बायें तरफ से रिसीवर में)** बेच अबापरसाद री बीस लाख हैसियन **(पाँचवें फ़ोन की घंटी बजती है। चौथे फ़ोन का रिसीवर रखकर पाँचवें फ़ोन का रिसीवर उठाकर)** कौन कौन · मोतीलाल जी · दो हजार गाँठ बेचूं ? **(दाहनी तरफ के रिसीवर में)** बेच, मोतीलाल री दो हजार गाँठाँ ? ·· **(दाहने रिसीवर मे)** · · के ? ·· के ? · · ·कोई लेऊ नई · · **(बाँयें रिसीवर मे)** के · ·कोई लेऊ नई ? ·· भाव · ·· के भाव ·साढे पन्द्रा ·· **(दाहने रिसीवर मे)** के भाव ?

पोनी चोरासी ·· ··

**लघ यवनिका**

## दूसरा दृश्य

स्थान : पाट का बाडा

समय दोपहर

[सारा स्थान गन्दा है। बड़ा-सा हॉल है। पीछे और दाहनी तरफ़ क़तार मे छोटी-छोटी कोठरियाँ दिखती है जिनमे से कुछ मे छोटे-छोटे तख़्त बिछे है और कुछ मे भद्दी-सी कुर्सियां और टेबिले रखी है। तख्तो पर मैली-सी बिछावन है। कई कोठरियों मे तख्तो और टेबिलों पर टेलीफ़ोन भी रखे है। कई कमरों के तख़्तो और कुर्सियों पर कुछ आदमी बैठे है। कोई-कोई फ़ोन का रिसीवर उठाकर कान मे लगाये है। कोई सुन रहा है। कोई बोल रहा है। इन दोनों क़तारों के सामने चौड़ा सा रास्ता छोड़कर लकड़ी का कटहरा लगा है। कटहरे के भीतर हॉल मे काफ़ी जगह है। कटहरे के भीतर बॉयी तरफ़ कई बेचे है। इन बेंचो पर बहुत से आदमी खड़े हुए है और बेचों के नीचे कटहरे के भीतर की ख़ाली जमीन पर भी बहुत भीड़ है। कोठरियों में बैठे हुए और हॉल मे खड़े हुए आदमियों मे ९९ फीसदी मारवाड़ी है। कोई मारवाड़ी पगड़ी लगाये है, कोई टोपीऔर कोई नंगे सिर भी है। शरीर पर अधिकांश व्यक्ति

कुरता और धोती पहने है, कोई-कोई कोट भी पहने है और कोई-कोई सिर्फ़ बनयान ही। किसी व्यक्ति की पगडी के पेच खुल गये है। किसी की टोपी अस्त व्यस्त है। जो नंगे सिर है उनमे से कई के बाल फैले हुए है। कोठरियों में बैठने वाले व्यक्तियो मे कई हॉल में आते है और हॉल मे खडे हुए लोगो में से कई कोठरियों में जाते है। यह आवागमन बराबर जारी है। बाड़े के भीतर का एक भी मनुष्य पूरे होश में नहीं जान पड़ता। सभी नशेलचियो के सदृश दीख पड़ते है। किसी भी व्यक्ति मे धैर्य का लवलेश नही है। सबके हर व्यवहार में चाहे वह बोलना हो, चिल्लाना हो, या आना-जाना हो, अत्यधिक शीघ्रता और महान उद्विग्नता दृष्टिगोचर होती है। सारे बाड़े मे ज़ोर का हो-हल्ला मचा हुआ है। बोलते और चिल्लाते सब है, पर सुनने वाले बहुत कम दिखते है। बेंचो पर खड़े हुए व्यक्ति, जो पाट के बाड़े मे 'रंगबाज़' के विशेष नाम से पुकारे जाते है, विचित्र जीव दीख पड़ते है। उनकी बोली, उनकी चिल्लाहट, उनकी हलचल, उनके सारे व्यवहार से वे मनुष्य तो नही कहे जा सकते। उनमे जो पगड़ी बाँधे है उनमें से अधिकांश की पगडियाँ अत्यधिक मैली है तथा खुल-सी गई है और उनके पेच उनके कन्धो पर इधर-उधर फैले हुए है। उनमे जो टोपी लगाये है, उनमे से अधिकांश की टोपियाँ दाँयें, बाँयें, आगे, पीछे इस तरह सरक गयी है कि उनके गिरने मे थोड़ी ही कसर है। जो नंगे सिर है उनमे से अधिकांश के बाल बेतरह फैले है। कई के बालों ने तो फैलकर उनकी आँखे ही ढक ली है।

चिल्लाने के सिवा देखने की शायद इन्हें जरूरत ही नहीं है। शरीर पर कपड़े सभी के मैले है और पूरे बटन तो किसी के कोट या कुरते मे नहीं है। किसी-किसी के कोट मे तो एक ही बटन बचा है, जिससे किसी तरह कोट शरीर पर अटका सा है। कुरतो मे तो किसी-किसी के एक भी बटन नहीं रहा है। रंगबाज बेचों पर लंगूरों के सदृश उछल-उछल कर उन्ही के सदृश किटकिटाकर चिल्ला रहे है। उनके दाहने हाथ हर उछाल मे सबसे अधिक उछलते है और अँगूठे को छोड़ चारों उँगलियो मे से कभी चार, कभी तीन, कभी दो और कभी एक के द्वारा पाट के भाव का विचित्र संकेत होता है। रंग-बाज पसीने से लतपत है और दाहने हाथ के फँसे रहने के कारण बॉये हाथ मे बिना रूमाल के ही बीच-बीच मे ही अपना पसीना इस बुरी तरह पोंछते है कि आसपास खड़े व्यक्तियों के मुख और आँखो पर उसके छींटे पड़े बिना नहीं रहते।]

**एक रंगबाज :** (दाहने हाथ की चारों उँगलियों को सामने अपनी तरफ हिलाते हुए चिल्लाकर) तिरासी, तिरासी, तिरासी, तिरासी, तिरासी !

**दूसरा रंगबाज** (दाहने हाथ की तीनों उँगलियों को स्वयं अपनी तरफ़ हिलाते हुए चिल्लाकर) पोनी तिरासी, पोनी पोनी तिरासी, पोनी तिरासी, पोनी तिरासी !

**नीचे खड़ा हुआ एक व्यक्ति** · बेची। ढाई सै। बेची ढाई सै।

**दूसरा व्यक्ति** . पॉच सै बेची। पॉच सै बेची।

**तीसरा व्यक्ति** · ली ढाई सै, ली पॉच सै, पोनी तिरासी मे।

**तीसरा**
**चौथा**
**पाँचवाँ**
**छठवाँ**
(**एक साथ चिल्लाकर**) हजार बेची। दो हजार बेची। साढी व्यासी मे।

**सातवाँ**
**आठवाँ**
(**एक साथ**) ली तीन हजार साढी व्यासी मे।

**एक रंगबाज़**
**दूसरा रंगबाज़**
**तीसरा रंगबाज़**
**चौथा रंगबाज़**
(**एक साथ दाहने हाथ की दो उँगलियों को सामने की तरफ़ हिलाते हुए चिल्लाकर**) साढी व्यासी, साढी व्यासी, साढी व्यासी, साढी व्यासी, साढी व्यासी।

**पाँचवाँ रंगबाज़** (**दाहिने हाथ की एक उँगली को सामने की तरफ हिलाते हुए चिल्लाकर**) सवा व्यासी, सवा व्यासी, सवा व्यासी, सवा व्यासी, सवा व्यासी।

**नीचे खड़ा हुआ एक व्यक्ति** (**चिल्लाकर**) बेची व्यासी में हजार गाँठाँ। (**और चिल्लाकर**) बेची इक्यासी मे दो हजा र गाँठाँ। (**और चिल्लाकर**) बेची अस्सी में चार हजार गाँठाँ।

**दूसरा व्यक्ति** . ली, ली, ली, बाजार भाव छै हजार गाँठाँ।

**अगणित आदमी** . (**एक साथ चिल्लाकर**) अस्सी का बेचू ! अस्सी का बेचू ! अस्सी का बेचू ! अस्सी का बेचू ! अस्सी का बेचू !

[ **दानमल का शीघ्रता से प्रवेश। वह दाहिनी तरफ की कोठरियों की क़तार में से सबसे पहली कोठरी में जाता है।**

अन्य कोठरियों की अपेक्षा यह कोठरी अधिक साफ़-सुथरी है। इसकी टेबिल कुर्सियाँ आदि भी दूसरी कोठरियों से अच्छी है। एक कुर्सी पर एक अधेड़ अवस्था का काला-सा व्यक्ति, जो टोपी लगाये और कुरता तथा धोती पहने है, बैठा हुआ फ़ोन मे बात कर रहा है। दानमल को देखकर वह खड़ा हो जाता है और फ़ोन मे "अस्सी का बेचू, अस्सी का बेचू !" कहकर फ़ोन का रिसीवर रख देता है। दानमल और वह दोनों बैठ जाते है और दोनों मे बातचीत होना शुरू होती है बाड़े मे वैसा ही हल्ला रहता है, परन्तु दानमल की कोठरी बहुत नजदीक होने के कारण इस हल्ले मे भी इन लोगों की बातचीत सुन पड़ती है। ]

**दानमल** (घबड़ाहट से) रामलाल यह क्या हुआ ?

**रामलाल** वार बैग जो अप्रेल, मई, जून मे डिलेवरी होने वाला था, उसकी डिलेवरी सितबर तक बढ गयी, सरकार !

**दानमल** इतनी सी बात पर भूकप ! वार बैग कैंसिल तो नही हुआ ?

**रामलाल** कैंसिल तो नही हुआ, सरकार, पर लोग तो नये वार बैग के आर्डर की उम्मीद मे थे और इसी का डिलेवरी लेना बढ गया।

**दानमल** फिर भी, रामलाल, इतनी सी बात पर ऐसा कुलैप्स तो नही होना चाहिए था ?

**रामलाल** यह तो फाटका है, सरकार। साइकलॉजी का बाजार है।

**दानमल** : और घटेगा ?

**रामलाल** . फाटका बिगडने के बाद भाव का सवाल ही नही रहता। तेजी में कितना भी बढ सकना है, मद्दी मे कितना भी घट ।

**दानमल** (**और भी घबड़ाकर**) फिर अपना माल ?

**रामलाल** मेरी समझ मे तो सब बेंच देना चाहिए। नुकसान में सौदा रखना ठीक नहो, काट देना चाहिए।

**ज़ोर की आवाज़ें :** इठत्तर का बेचू ! इठत्तर का बेचू ! इठत्तर का बेचू ! इठत्तर का बेचू !

**दानमल** (**एकदम घबड़ाकर**) रामलाल !

**रामलाल** (**ज़ोर से**) बेचिए, सरकार ! बेचिए।

**दानमल** इस भाव मे ?

**रामलाल** (**घबड़ाकर जल्दी से**) फाटका मे भाव नही देखा जाता, सरकार !

**ज़ोर की आवाज़े** छियत्तर का बेचू। छियत्तर का बेचू । छियत्तर का बेचू।

**दानमल** (**पागलों के सदृश**) रामलाल ! रामलाल !

**रामलाल** बेचिए, सरकार, बेचिए।

दानमल (**उसी प्रकार के स्वर में**) कर ! जो तुझे दिखे सो कर।

**[रामलाल दौड़ते हुए कटहरे के भीतर पहुँचता है। दानमल कुर्सी पर लेट सा जाता है।]**

**एक रंगबाज** (**दाहने हाथ की चारों उँगली सामने की तरफ हिलाते हुए**) छियत्तर, छियत्तर, छियत्तर !

**रामलाल** बेची छियत्तर मे पाँच हज़ार।

**एक व्यक्ति** ली पाँच हज़ार छियत्तर मे।

**दूसरा रंगबाज़**
**तीसरा रंगबाज़**
**चौथा रंगबाज़**
**पाँचवाँ रंगबाज़**
} **(दाहने हाथ की एक साथ चारो उँगली सामने की तरफ़ हिलाते हुए)** पिचत्तर, पिचत्तर, पिचत्तर, पिचत्तर, पिचत्तर!

**रामलाल** बेची दस हज़ार गाँठ पिचत्तर मे!

**एक व्यक्ति** : ली दस हज़ार पिचत्तर मे!

**बहुत से रंगबाज़** **(एक साथ दाहने हाथ की चारों उँगली सामने की तरफ हिलाते हुए)** चोत्तर, चोत्तर, चोत्तर, चोत्तर, चोत्तर!

**रामलाल** : बेची दस हज़ार चोत्तर मे!

**बहुत से रंगबाज़** **(एक साथ दाहने हाथ की चारों उँगली सामने की तरफ हिलाते हुए)** तेत्तर, तेत्तर! बात्तर, बात्तर!

**अगणित आदमी** **(एक साथ ज़ोर से)** बात्तर का बेचू! बात्तर का बेचू!

**कुछ आदमी** **(एक साथ)** दानमल बेचू! दानमल बेचू!

**[बड़ा कोलाहल होता है। कुछ समझ मे नहीं आता।]**

**लघु यवनिका**

## उपसंहार

स्थान : कलकत्ते की फौजदारी कोर्ट

समय : दोपहर

[कोर्ट के कमरे की तीन तरफ की दीवालें दिखती है, जिन में कई दरवाज़े और खिड़कियाँ है। पीछे की दीवाल पर बादशाह की एक बड़ी सी तस्वीर लगी है। तस्वीर के नीचे एक घड़ी है। पीछे की दीवाल से लगा हुआ एक ऊँचा प्लेटफार्म है, उस पर दरी और दरी पर क़ालीन। उस पर मजिस्ट्रेट की ऊँची कुर्सी है। कुर्सी के सामने राइटिंग टेबिल है, जिस पर लिखने-पढ़ने का सामान, स्टेशनरी और कई फ़ाइल रखे है। ऊँचे प्लेटफ़ार्म के नीचे एक और प्लेटफार्म है, उस पर मेज़ें लगी है। मेज़ों के एक तरफ सिरिश्तेदार और दूसरी ओर अदालत के और अहलकारों की कुर्सियाँ है। कुर्सियो के सामने टेबिले है और इन टेबिलों पर भी लिखने-पढ़ने का सामान, स्टेशनरी और कई फ़ाइल रखे है। सिरिश्तेदार के प्लेटफ़ार्म के सामने लकड़ी का कटहरा है। इस कटहरे के बाँयीं तरफ़ मुलज़िम के खड़े होने की जगह है। यह चारों ओर से लकड़ी के कटहरे से घिरी हुई है। इस कटहरे के सामने कुर्सियों की क़तारें और कुर्सियों के पीछे

**फिर कटहरा है। कटहरे के पीछे बेचो की कई क़तारे है। इन कुर्सियों और बेचों के मुँह मजिस्ट्रेट की बैठक की ओर है। परदा खुलते समय कुछ चपरासियो को छोड़कर कमरे मे और कोई नही है। ये चपरासी फ़ाइल इत्यादि ठीक कर रहे है। रूपचन्द, कैलाशचन्द, नीलरतन, मुमताजुद्दीन, लखमीदास और कमला-चरण का प्रवेश। लखमीदास और कमलाचरण दोनों की उम्र करीब ३० साल की है। लखमीदास सॉवले और कमलाचरण गेहुँए रंग का है। दोनों साधारण उँचाई और शरीर के मनुष्य है। छोटी-छोटी मूँछे है। दोनो काली टोपी, कोट और धोती पहने हुए है। सब लोग आपस मे बात करते हुए आ रहे है।]**

**रूपचन्द :** बिलकुल नियत बिगाड ली, बिलकुल।

[**सब लोग बेचों पर बैठ जाते है।**]

**रूपचन्द** दानमल इस तरह नियत न बिगाडता तो मै आप लोगो को फौजदारी मे नालिश करने की कभी सलाह न देता।

**लखमीदास :** दस-बारह लाख के लिए दानमल अपनी सात पीढियो का नाम इस प्रकार डुबो देगा, यह मै सोच ही नही सकता था।

**कमलाचरण** फिर जब यह रुपया आया था, उस समय कैसी जल्दी-जल्दी बैक मे रख लिया, जब गया तो उसी तरह निकालना भी था।

**कैलाशचन्द्र :** और यहाँ नही बचा था, तो देश से मँगाता।

**नीलरतन** हा, हॅमने सुना इन दो माम मे ऊशने बोन ठो रुपिया देश भेजा।

**मुमताजुद्दीन** मै गरीब नो बेमौत मर गया। रूपचन्द साहब के कहने से मैंने अपना मकान सत्तर हजार मे रहन कर पेमेन्ट के लिए उसे रुपया दिया। उसका पोस्टडेटेड चैक ! कभी कोई ख्वाब मे भी सोच सकता था कि दानमल कपनी का चैक डिसआनर होगा।

**लखमीदास** . अरे, भाई, आपही का क्या, सबका यही हाल है। मैंने कानपुर मे अपना मकान रहन कर उसे पैतालीस हजार रुप्या भुगतान के लिए दिया था। मैंने भी यही सोचा था कि उसका पोस्टडेटेड चैक न सिकरे यह असभव बात है।

**कमलाचरण** इसी पोस्टडेटेड चैक के भरोसे पर तो मैंने भी अपना बनारस का बगीचा रहन कर उसे चालीस हजार दिया था।

**कैलाशचन्द्र** . और, भाई, मैंने तो इस पोस्टडेटेड चैक के इत्मीनान पर एक लाख रुपये मे अपनी पत्नी के जेवर रहन रखे थे।

**नीलरतन** . (**रूमाल से अपनी आँखों के आँसू पोंछते हुए**) और हॅम ! हॅम तो मॅर गया हूँ, बीलकूल मॅर गॅया हूँ। मील, धान, चावल शॅब पर शाठ शहस्र टाका ऋन लेकर दानमॅल शेट को पोस्टडेटेड चैक पर दीया है।

**रूपचन्द** ठीक, भाई, आप क्या सब मेरे भरोसे पर मरे है।

सबने दानमल की इज्जत बचाने के लिए, ठीक टाइम पर उसका भुगतान हो जाय, इस उद्देश्य से, उसे एक सच्चा, ईमानदार, आदमी समझकर रुपया दिया। उसे तो मैं दो ही महीने से जानता हूँ पर उसका कुटुम्ब प्रसिद्ध कुटुम्ब था। वह भी अच्छा आदमी दिखता था। क्यो लखमीदास जी, कमलाचरण जी, आप लोग तो उसे बहुत दिनो से जानते है ?

**लखमीदास :** (**बेपरवाही से**) बहुत थोडा। जोधपुर के स्कूल मे कुछ दिन साथ रहा था।

**कमलाचरण :** और मेरा जयपुर के कॉलेज मे।

**रूपचन्द** यहाँ भी उसने आरभ मे अच्छा काम किया।

**कैलाशचन्द्र :** कमाया था, इसलिए।

**लखमीदास :** और क्या ?

**कमलाचरण** इसमे क्या सन्देह है ?

**रूपचन्द** भुगतान न करता तो न करता, दिवालिया हो जाता पर जिन गरीबो से उनकी जायदादे रहन कराकर कर्ज लिया उन्हे तो पटा देता।

[ **नीलरतन फूट-फूट कर रोने लगता है। मुमताजुद्दीन रूमाल से आँखे पोंछता है** ।]

**रूपचन्द :** ओ ! यह आप लोग क्या करते है ! मुझे देखिए, मेरी तरफ देखिए। मुझे देखकर तो हिम्मत रखिए। आप लोगों का तो रुपया ही गया है। मेरी तो इज्जत चली गयी। मैं बाजार मे किसी को मुँह दिखाने योग्य भी नही रहा। ज़िन्दगी मे मैंने बड़ी-बडी जगह काम किया है, बड़े-बड़े

कन्सर्न्स को कन्ट्रोल किया है, पर मेरी साख कभी नही गयी। 'जाय लाख रहे साख', पर इस दानमल ने तो मेरी साख भी खाक में मिला दी। क्या करूँ ? दो ही रास्ते थे—या तो आत्महत्या कर लेता, या आप लोगों की सहायता कर इस परोपकारी काम से कुछ शान्ति लाभ करना। आत्महत्या करना तो बुजदिली होती, इसलिए इस परोपकार पर कमर कसी। (**कुछ ठहरकर**) और देखिए, मुझे विश्वास है कि वह फौजदारी में कभी जेल जाना स्वीकार न करेगा। इन सब पोस्टडेटेड चैक्स के पेमेन्ट के लिए वह देश से रुपया मँगायेगा, अवश्य ...

**[एक नवयुवक बैरिस्टर का प्रवेश। उसकी उम्र क़रीब ३० वर्ष की है। वह साँवले रंग का ऊँचा पूरा इकहरे शरीर का बंगाली है। अंग्रेज़ी लिवास में है।]**

**रूपचन्द :** (**उसे देखकर**) ओ ! अपने बैरिस्टर साहब आ गये।

**[सब लोग उठकर उसके नज़दीक जाते हैं और फिर सब आकर उसी बेंच पर बैठते हैं।]**

**बैरिस्टर :** यू आर श्योर टु विन। यू आर श्योर टु विन।

**[सिरिश्तेदार और अहलकारों का प्रवेश। सिरिश्तेदार की उम्र क़रीब ५० वर्ष की है। वह साँवले वर्ण का ठिंगना और दुबला बंगाली मुसलमान है। खिचड़ी बाल और मूँछें-दाढ़ी हैं। काले रंग की शेरवानी और ढीला पाजामा पहने है। सिर पर तुर्की टोपी लगाये है।]**

**सिरिश्तेदार :** **(रूपचन्द की तरफ़ आते हुए)** ओ ! आप लोग आ गये ?

**[बैरिस्टर, रूपचन्द और उसके सब साथी खड़े हो जाते और सिरिश्तेदार को झुक-झुक कर सलामे करते है। सिरिश्तेदार सलामों का उत्तर देता है।]**

**रूपचन्द .** आज पहले नम्बर पर किसका मुकदमा है, सिरिश्तेदार साहब ?

**[धीरे-धीरे कोर्ट रूम मे आदमी आने लगते है। और एक पुलिस सार्जेन्ट भी तमंचा लगाये कभी कमरे के अन्दर आता है और कभी बाहर जाता है।]**

**सिरिश्तेदार :** आप ही लोगो का।

**मुमताजुद्दीन ·** आज क्या-क्या होगा, सिरिश्तेदार साहब ?

**सिरिश्तेदार .** अब तो बहुत थोडा काम बाकी है। प्रासीक्यूशन की तरफ का स्टेटमेन्ट हो ही गया। **(रूपचन्द की ओर इशारा कर)** इनकी गवाही भी हो गयी। आज पहले एक्यूज्ड का स्टेटमेन्ट होगा और उसने अगर अपने डिफेन्स मे कुछ कहा तो फिर बहस के लिए पेशी मुकर्रर होगी, क्यों बैरिस्टर साहब ?

**बैरिस्टर** ऑफ कोर्स।

**सिरिश्तेदार .** लेकिन वह तो कुछ कह ही नही रहा है। उसने कोई कौन्सिल भी एन्गेज नही किया।

**रूपचन्द** कहेगा वह क्या ? चैक्स पर उसके दस्तखत है, इससे क्या वह इकार कर सकता है ? फिर **(सबकी तरफ़**

इशारा कर) इन सब ने मेरे सामने उसे कैश रुपया दिया है।

**सिरिश्तेदार** हाँ, यह तो आपने अपनी गवाही में कहा ही है।

**रूपचन्द** मुझे तो यकीन है, सिरिश्तेदार साहब, कि वह फौज-दारी में कभी जेल जाना मंज़ूर न करेगा और इन सब चैक्स का पेमेन्ट अपने मुल्क से रुपया मँगाकर करेगा।

**सिरिश्तेदार** पर पेमेन्ट करने से क्या होना है, जनाब, चैक्स के पेमेन्ट करने पर भी उसे जेल तो जाना ही पड़ेगा।

**लखमीदास** यह क्यों ?

**सिरिश्तेदार** जनाब, मुकदमा है चीटिंग का; ताजीरात हिन्द की दफा ४२० के मुताबिक। उसने आप सबसे रुपया लेकर यह जानते हुए भी कि उसके चैक्स का पेमेन्ट न होगा, आप लोगों को धोखा देकर आपको झूठे पोस्टडेटेड चैक दिये हैं। क्यों बैरिस्टर साहब ?

**बैरिस्टर** : ऑफ कोर्स। ऑफ कोर्स।

**[नेपथ्य में 'शान्ति-शान्ति' आवाज़ आती है। सिरिश्तेदार और अहलकार जल्दी से अपनी-अपनी कुर्सी के निकट जाकर खड़े हो जाते हैं। बैरिस्टर, रूपचन्द और उसके साथी अपनी बेंच के सामने अदब से खड़े हो जाते हैं। कोर्ट में अब बहुत से आदमी आ चुके हैं, इनमें कई बैरिस्टर और वकील भी हैं। सर्वसाधारण अन्य बेंचों के सामने तथा बैरिस्टर वकील लोग कुर्सियों के सामने खड़े हो जाते हैं। पुलिस सार्जेन्ट कमरे के अन्दर आकर रोब से खड़ा हो जाता है। मजिस्ट्रेट का प्रवेश**

मजिस्ट्रेट की अवस्था क़रीब ४० वर्ष की है। वह गोरे रंग का ठिगना और मोटा बंगाली है। मूँछे नहीं है। सिर के बाल कुछ-कुछ सफ़ेद हो गये है। वह काले रंग का बाला बरदार अँगरखा, उस पर काला ही चोगा और पतलून पहने हुए है। सिर पर गोल बंगाली पगड़ी है। मजिस्ट्रेट अपनी कुर्सी पर बैठता है, सिरिश्तेदार और अहलकार भी अपनी-अपनी कुर्सियों पर। रूपचन्द और उसके साथी बेंचों पर बैठते है। रूपचन्द का बैरिस्टर आगे बढ़कर अन्य बैरिस्टरों और वकीलो के साथ की कुर्सियों पर बैठता है। बाक़ी के लोगों मे कुछ तो बेंचों पर बैठते है और कुछ खड़े रहते है। कोर्ट मे निस्तब्धता छा जाती है। सिरिश्तेदार एक फ़ाइल लेकर मजिस्ट्रेट के सामने रखता है।]

**मजिस्ट्रेट :** (फ़ाइल देखते हुए) दानमल मुलजिम को हाजिर करो !

[चपरासी बाहर जाता है।]

**नेपथ्य मे** (ज़ोर से) दानमल मुलजिम हाजिर है ?

[मजिस्ट्रेट फ़ाइल देखता रहता है। कुछ ही देर मे दो पुलिस कान्सटेबलों के साथ दानमल का प्रवेश। कान्सटेबलों की वर्दी बंगाल पुलिस के समान है। दानमल का सारा रूप एक दम बदल गया है। उसका सौन्दर्य, प्रसन्नता और प्रफुल्लता न जाने कहाँ चली गयी है। यह नंगे सिर है और रूखे बाल फैले हुए है। चेहरे पर हजामत बढ़ गयी है। खादी का कुर्ता और धोती काफ़ी मैले हो गये है। पैरों के जूतों मे बहुत कीचड़ लगा हुआ

है। उसके एक हाथ मे हथकड़ी है, जिसकी चेन एक कान्सटेबल के हाथ मे है। दानमल आकर मुलज़िम के कटहरे में खड़ा हो अपने अत्यधिक उदास और उतरे हुए मुख को नीचे की तरफ़ झुका लेता है। दोनो कान्सटेबल उसके इधर-उधर कटहरे के बाहर खड़े हो जाते है। जनसमुदाय एक टक उसकी ओर देखने लगता है।

मजिस्ट्रेट (दानमल की ओर देखकर) तुम जो कुछ केना चाता उसे इस आनरेबिल कोर्ट का सामने के सकना।

[दानमल कुछ देर उसी तरह सिर झुकाये खड़ा रहता है, कुछ नहीं कहता, धीरे-धीरे बोलना शुरू करता है।]

दानमल (उसी प्रकार सिर झुकाये हुए मानो अपने आपसे कह रहा है) मुझ पर मुकदमा चला है दफा ४२० के अनुसार। (कुछ रुककर) अर्थात् मैंने चीटिंग किया है, धोखा दिया है, मै चीट हूँ, मै धोखेबाज हूँ। (फिर कुछ ठहर कर एकाएक सिर उठाकर बड़े ऊँचे स्वर में) मैंने धोखा दिया है! मै धोखेबाज हूँ! किसे धोखा दिया? (सिर घुमाकर कैलाशचन्द्र इत्यादि की तरफ़ देखते हुए और ज़ोर से) कैलाशचन्द्र को? नीलरतन को? लखमीदास को? कमलाचरण को? (एकदम आवाज़ गिर जाती है जैसे थक गया हो) इसके गवाह है रूपचन्द जी! (रुककर लंबी साँस लेता है। लबी साँस लेते-लेते ही उसका सिर फिर झुक जाता है। धीरे-धीरे) मैंने धोखा देने का यह रास्ता क्यो पकडा? लडाई के कारण? हाँ, लडाई के कारण।

पिछली लडाई मे लोगो ने बहुत धन कमाया था। (**फिर एकाएक सिर उठाकर ज़ोर से**) इसी कलकत्ते मे न जाने कितने बने थे। (**फिर कुछ रुककर एकाएक सिर झुकाकर**) सट्टा ? फाटका ? हाँ, सट्टा फाटका। कितने बने इस सट्टे फाटके मे ? इस समय के सभी दानवीर तो। (**कुछ रुककर**) सट्टा, फाटका ? सट्टा, फाटका, याने जुआ। और ये सब जुआडी। पर ·· ·पर · (**एकाएक सिर उठाकर ज़ोर से**) सफल जुआड़ी ! (**ज़ोर से हँसकर**) धनी जुआडी ! (**कुछ रुककर**) कौन इन जुआड़ियो का मान नही करता ? कौन इन धनवानों की इज्जत नही करता ? बडे-बडे धर्माचार्य, बडे-बड़े समाज-सेवक, बड़े-बडे राजनैतिक नेता ·· अरे · · सभी तो, सभी तो, इनके चारो ओर घूमते है। इनकी पद-वन्दना करते है। (**फिर एकाएक सिर झुक जाता है। कुछ रुककर धीरे-धीरे**) कोई धनवान बनना चाहता है स्वयं सुख भोगने, कोई धन कमाने की इच्छा करता है नाम बढाने और कोई धन के सग्रह मे प्रयत्नशील होता है दूसरो की सेवा करने। (**फिर कुछ रुककर**) पहला निकृष्ट, दूसरा मध्यम और तीसरा उत्तम उद्देश्य है। (**फिर कुछ रुककर**) मेरा उद्देश्य तीसरा था। शायद दूसरा भी अन्त करण मे छिपा हो, पर पहला कदापि नही। साधन था जुआ। सफल होता तो · ·· तो ···पहले सफलता मिली भी ··· तब ·· ··तब मेरी पद-वन्दना करने वाले भी काफी काफ़ी से ज्यादा लोग हो गये थे। मेरा मस्तिष्क

भी सफलता के नशे से भर गया था। पर नही · · अन्त मे असफल हुआ। (**एकदम रुककर चेहरा एकदम नीचे झुका लेता है। कुछ देर बाद एकाएक सिर उठाकर ज़ोर से**) इन जुआडी—धनवानो ने, इन जुआडी श्रीमानो के पूजक धर्माचारियो, समाज-सेवको, राजनैनिक नेताओ ने मेरे मन मे भी, (**रुककर एकदम धीरे से**) इस छोटे से हृदय मे भी महत्त्वाकाक्षा को, महत्त्वाकाक्षा को उत्पन्न किया। 'महाजनो येनगत स पन्था' के अनुसार मै भी उसी पथ का पथिक होने चला, जिस पर इतने बडे-बडे जन चले थे। (**कुछ रुककर**) पर · पर शायद साध्य से साधन को कम महत्त्व नही है। और सफलना ? सफलता को तो सबसे अधिक। मै बुरे साधन द्वारा भी यदि सफल हो जाता ?· पर · · · पर· · · · मै असफल · असफल हुआ · वह बुरे साधन का उपयोग कर। (**एकदम ज़ोर से मजिस्ट्रेट की ओर देखकर**) मजिस्ट्रेट साहब, मजिस्ट्रेट साहब, आई प्लीड गिल्टी। मै दोष स्वीकार करता हूँ। मै गुनाह मजूर करता हूँ। मैने चीटिंग किया है! मैने धोखा दिया है! मै चीट हूँ! मै धोखेबाज़ हूँ! (**कैलाशचन्द्र वग़ैरह की ओर देखकर**) मैने कैलाशचन्द्र से एक लाख रुपया लिया है। मैने नीलरतन से साठ सहस्र टाका पाया है! मुमताजुद्दीन ने मुझे सत्तर हजार रुपया दिया है। लखमीदास का, मेरे स्कूल के सहपाठी लखमीदास का मुझ पर पैतालीस हजार रुपया पावना है। कमला-

चरण, मेरे कालेज के साथी कमलाचरण ने भी मुझे चालीस हजार रुपये देने की कृपा की है। और (**मजिस्ट्रेट की तरफ देख**) और मजिस्ट्रेट साहब, यह सब रुपया, जैसा मेरे मुनीम रूपचन्द ने अपनी गवाही मे कहा, उनके सामने · (**थकावट के कारण एक दम धीरे-धीरे**) उनके सामने, मुझे कैश मिला है, भुगतान मे देने के लिए। (**और धीरे**) इन सब को धोखा देने के लिए मैने इन्हे, यह जानते हुए भी कि ये चैक न सिकरेंगे, झूठे पोस्टडेटेड चैक दिये है। (**एकदम जोर से मजिस्ट्रेट की तरफ़ देखकर**) दीजिए, मजिस्ट्रेट साहब, दीजिए, मुझे ऐसी सख्त · ऐसी सख्त · सजा दीजिए कि चाहे सारा समाज, धर्माचार्य, समाज-सेवक, और दरिद्रनारायन के झूठे, पर लक्ष्मीनारायण के सच्चे पूजक ये राजनैतिक नेता, रुपये का पूजन करे, श्रीमानो का चरण चुवन करे, पर मेरे मन मे, मेरे छोटे-से हृदय मे, इसकी प्राप्ति की अभिलाषा के अवशेष का अवशेष भी शेष न रहे। मजिस्ट्रेट साहब···· मजिस्ट्रेट साह····

[**दानमल एकाएक कटहरे से गिर पड़ता है। कान्सटेबल दौड़कर दानमल को कटहरे से उठाते है। कोर्ट मे कुछ हल्ला मचता है।**]

**चपरासी :** शान्ति ! शान्ति !

**मजिस्ट्रेट :** (**जोर से**) कोई डाक्टर ?

[**जनसमुदाय में से एक बंगाली युवक डाक्टर, जो अंग्रेजी वस्त्रों मे है, दानमल की तरफ़ बढ़ता है। दानमल का शरीर**

दोनो कान्सटेबलों के हाथों मे है। डाक्टर पहले उसकी नब्ज देखता है। फिर तेठासकोप से उसका हार्ट।]

डाक्टर : (जोर से) ओ! मूर्छा नेई! हार्ट फेल हो गिया।

[रूपचन्द और उसके साथी एक दूसरे की तरफ देखते हैं। कोर्ट में एकदम हल्ला मचता है।]

जनसमुदाय में का एक वृद्ध—रुपये की चोट थी।

दूसरा वृद्ध . रुपये की चोट ऐसी ही होती है।

एक युवक : (दोनों वृद्धों की तरफ घृणा से देखते हुए) बेव-कूफ!

[वह युवक शीघ्रता से दानमल की लाश के पास पहुँचता है। मजिस्ट्रेट का प्रस्थान। कान्सटेबल दानमल की लाश को धीरे-धीरे कोर्ट के बाहर लेजाने लगते हैं। भीड उसके पीछे-पीछे जाने लगती है।]

यवनिका

समाप्त

# फाँसी

## मुख्य पात्र, स्थान

**पात्र**

कवि

पूँजीपति

मजदूर

**स्थान**

जेल का एक सैल

स्थान : सैल

समय : रात्रि का तीसरा पहर

[सैल के तीन तरफ की पत्थर की दीवालें दिखती हैं। बायीं ओर की दीवाल के ऊपर की तरफ़ एक वेन्टीलेटर है और दाहिनी तरफ़ की दीवाल में एक लोहे का दरवाजा। दरवाजा बन्द है। फर्श पर कब्रों के सदृश तीन लम्बे-लम्बे चौतरे हैं। इन पर जेल के बिछौने बिछे हैं। तीनों चौतरों पर कैदियों के कपड़े पहने हुए कवि, पूँजीपति और मजदूर बैठे हुए हैं। कवि गौर वर्ण, पूँजीपति गेहुँए रंग और मजदूर कुछ साँवले रंग का है। तीनो की अवस्था लगभग तीस वर्ष की है।]

**कवि** : हाँ, हाँ, पूँजीपति की और श्रमजीवी की, सृष्टि एक तत्त्व है।

**पूँजीपति** : एक ही तत्त्व है।

**कवि** : सर्वथा! और वह कैसा है, जानते हैं?

**मजदूर** : कैसा?

**कवि** : वह सत्य है, शिव है, सुन्दर है। अनेक रूप में परिणत होकर वह अपनी सुन्दरता बढाता है। विश्व के दो महान् आलय जो हमें दिखते हैं—आकाश और समुद्र—आकाश मे

सूर्य, चन्द्र, अगणित तारे फिर कभी-कभी उठने वाले बादल, उनके भिन्न-भिन्न रूप, अलग-अलग रग; उनमे बिजली इन्द्रधनुष, कभी-कभी धूप मे बरसती हुई फुहार और उसमे भी इन्द्रधनुष के से रग। सागर मे बडी-छोटी लहरे उसका फेन और चाँदनी मे उसकी चमक। पृथ्वी पर नित्य उषा और सन्ध्या। परिवर्तन होती ऋतुएँ—वशेषकर वर्षा और वसन्त। उसमे पर्वत, वन, नदियाँ, निर्झर, तडाग। कभी लहलहाते हरे-हरे खेत, कभी नवपल्लवो तथा कुसुमो के गुच्छो से युक्त डोलते हुए वृक्ष। फिर जीव-सृष्टि—चौकड़ी भरते मृग, जुगनू और वीरबहूटी। गगन मे नाना भाँति के गाते हुए विहग और पानी मे भाँति-भाँति की तैरती हुई मछलियाँ, और इन सबसे श्रेष्ठ मनुष्य—उसके श्रेष्ठतम कलात्मक कर्म विशाल मूर्तियाँ, ललित चित्र, सुन्दर संगीत और सर्वश्रेष्ठ काव्य, और ये हमारे कार्य यदि किसी इष्ट को सामने रखकर किये जायँ।

**मजदूर** : तब तो क्या पूछना है।

**कवि** . बशर्ते वह इष्ट सुन्दर हो। स्त्री के लिए पुरुष और पुरुष के लिए स्त्री ! मेरा वह इष्ट कितना सुन्दर था !

**मजदूर** : बहुत सुन्दर था, कवि जी ?

**कवि** : ओह ! क्या कहूँ। अरे इस एक तत्त्व ने उस शरीर मे अनेक रूप मे परिवर्तित हो सारी सृष्टि के सौन्दर्य का उसे प्रतीक बना दिया था। उसमे क्या नही था ? आकाश की विशालता थी, समुद्र की तरगे थी। तारों के स्थान पर

उसके चमकते हुए भूषण थे। बादलों के सदृश रग बदलते हुए वह कपडे पहनती थी। उदय और अस्त होते हुए सूर्य की ही नही चन्द्र की भी उमके मुख मे आभा थी। जैसी ऋतु आती, वैमी वह हो जाती। वर्षा मे वृक्ष पर झूलती हुई वह इन्द्र-धनुष-सी जान पडती और वसन्त मे कुसुम क्यारियो मे केलि करती हुई उन कुसुमो के सार के सदृश। चौकडी भरते मृगो और कलोल करती हुई मछलियो के समान उसके नेत्र थे। वीरबहूटी और जुगनू उसके ललाट पर लगी हुई ईगुर की टिकली तथा उसके चारो ओर की केशर पर बुरकाये हुए रुपहरी बादल मे दिख जाती थी। गाते हुए विहगो के सदृश उसकी बोली के भिन्न-भिन्न स्वर थे। मैने उसकी मूर्तियाँ बनायी थी, चित्र बनाये थे, उसी के गीत गाता था, उसी पर काव्य लिखता था।

**पूँजीपति** . ऐसी सुन्दर स्त्री के लिए किसी भी सहृदय कवि का यह करना स्वाभविक ही था।

**कवि** : सर्वथा, और इसके बाद एक बात और स्वाभाविक थी।

**पूँजीपति** . क्या ?

**कवि** . अन्त मे एकीकरण का प्रयत्न। विप्रलभ क्या सदा विप्रलभ रह सकता है ? विप्रलभ के बाद सयोग की इच्छा क्या अस्वाभाविक है ?

**पूँजीपति** कदापि नही, कदापि नही।

**कवि** : वही हुआ। सयोग के नाना प्रयत्न किये पर......

**मजदूर** . पर इसमे सफलता नही मिली, क्यो ?

कवि . हॉ, नही मिली और जब सफलता नही मिली तब जो कुछ किया वह भी स्वाभाविक था ।

**पूँजीपति** क्या ?

**कवि** · बलात्कार ! मेरे लिए तो प्रलय का अवसर आ रहा था, प्रलय का । यौवन का प्रलय ही यथार्थ मे जीवन का प्रलय है। प्रलय के समय समुद्र बलपूर्वक ही तो पृथ्वी को अपनी लहरो से दबोचता है । मैने वही किया और क्या ? उसे मार तो डाला डाक्टरो ने, अस्पताल मे, इस पर मुझे फॉसी ? (**लम्बी सॉस लेकर**) क्या · · क्या कहूँ ? कैसा · · कैसा यह कानून है ?

**पूँजीपति** : कवि जी, मुझे फॉसी हुई है पूँजी के कारण। पूँजी और फॉसी ! अरे जो विश्व की सारी हलचलो का साधन है, वह फॉसी का कारण ! जीवन से मरण !

**कवि** : हॉ हॉ, आश्चर्य, महान् आश्चर्य की बात है !

**मजदूर** . ऐसा ?

**कवि** : इसमे भी कोई सन्देह है ?

**पूँजीपति** . अजी पूँजी के बिना इस ससार मे क्या हो सकता है ? ससार के सभी बड़े-बडे आविष्कार और कलाओ का निर्माण पूँजी से हुआ है, होता है, और होगा । अपनी पूर्व-जन्म की सचित पूँजी से पूर्व-जन्म के पुण्यात्मा और तपस्वी इस जन्म मे पूँजीपति होते है, और फिर भी वे कैसे कल्याण-कारी कार्य करते है ?

**कवि** : हाँ, हॉ ! अनेक विश्व-हित के एक नही अगणित कार्य ।

**पूँजीपति** : अवश्य, कवि जी। शिक्षा के लिए दान देते है, जिससे नयी-नयी चीजो के निर्माणकर्त्ताओ का निर्माण होना है। फिर जहाँ ये निर्माणकर्त्ता निर्माण करते है, उन सस्थाओ को पूँजीपति ही तो स्थापित करते है। कला के उत्कर्ष के लिए भव्य भवन बनाते है, मूर्तियाँ बनवाते है, चित्र बनवाते है। सगीत और कवियो को प्रोत्साहन देते है।

**कवि** : अवश्य, अवश्य।

**पूँजीपति** अरे सरकार भी अगर कोई अच्छा काम करती है, तो उसका श्रेय भी इन्ही को तो है। यथार्थ मे सरकार इन्ही की तो प्रतिनिधि है। इनसे गाँवो की जमा न मिले, इनकी आमदनी पर इनकमटैक्स न प्राप्त हो, तो सरकार क्या कर सकती है ? फिर इनके मन्दिर, इनकी धर्मशालाएँ। (**कुछ रुककर**) इस पूँजी को सदा बढाते रहना ही ससार का सबसे महान् धर्म तथा इसमे जो बाधाएँ आवे उनका निराकरण सबसे बडा कर्त्तव्य कर्म है।

**मजदूर** ऐसा !

**कवि** · (**मजदूरो की ओर देखकर**) इसमें कोई सन्देह है ?

**पूँजीपति** कवि जी, मेरे कारखाने मे स्ट्राइक हुई। बोलिए, उस स्ट्राइक को कैसे चलता रहने दे सकता था ? मजदूरो को समझाया-बुझाया, सभी तो किया, पर जैसे-जैसे समझाया, उनका मिज़ाज बढता ही गया, आखिर जब वे मार-काट पर उतारू हो गये तब मेरी पिस्तौल मारने के लिए नही, उन्हे भय दिखाने को चली, जिससे निर्माण के कार्य मे

बाधा न पहुँचे। कुछ गोलियाँ चल गयी। मज़दूरो को हथियारो के लाईसेन्स न मिलकर जो पूँजीपतियो को मिलते है, वह आखिर काहे के लिए? पूँजी के बढाने के महान् धर्म और उसके मार्ग की बाधाओ के निराकरण के कर्त्तव्य कर्म मे यदि इन शस्त्रो का उपयोग नही हो सकता तो ये निरर्थक है। कीडो-मकोडो के सदृश एक मजदूर मर गया। (**मज़दूर की त्योरी चढ़ जाती है।**) अरे वह तो पुण्य था, मेरे जीवन का सबसे बडा पुण्य कार्य! उस पर मुझे फाँसी! वाह रे कानून! मेरी और उसकी एक ही औकात?

**मज़दूर**: पर, पूँजीपति जी, बिना काम किये दुनियाँ मे क्या हो सकता है? ससार के बडे-बडे आविष्कार और कलाओ का विकास यथार्थ मे पूँजी का नही, मेहनत का फल है। पूर्व-जन्म थोथी कल्पना है, और पूर्व-जन्म के कर्मो से अच्छे और बुरे जन्म होते है, यह पूँजीवाद को कायम रखने के लिए जनता को एक झूठे सिद्धान्त का पढाना तथा धोखा देना है।

**पूँजीपति**: धोखा! इतने ज्ञानी और विचारशीलो का मत धोखा?

**मज़दूर**: हाँ, हाँ, धोखा और बडे से बडा धोखा! दुखियो के दुख उनके पूर्व-जन्म के कर्मों के फल है, अतः उसके सुधार का यत्न फिजूल का काम है, यह सिद्ध करने को पूर्व-जन्म, और उस जन्म के कर्म के सिद्धान्त से सुन्दर अन्य कोई सिद्धान्त न निकाला जा सकता था। विश्व का सच्चा हित दान के धन से नही हो सकता। वह सरकारी अधिकार

से होता है। यह तब जब कि सरकार काम करने वालों की सरकार रहे और उत्पत्ति तथा उत्पन्न की हुई सम्पत्ति का बँटवारा काम करने वालो की प्रतिनिधि उस सरकार के हाथ मे हो। महान् आविष्कार और कलाएँ ही नही, ससार का सुख ही इस पर निर्भर है। एक मनुष्य सुखी और हजारो, लाखो, करोडो दुखी हो, यह सामाजिक सघटन तो अस्वाभाविक है। अस्वाभाविक चीज सदा थोडे ही चल सकती है। जो पूंजीवाद अगणितों के दुःख को कायम रख, कुछ के सुख का निर्माण करता है, उसका नाश ही सबसे बड़ा धर्म और इस काम मे जो बाधाएँ आवे उनका निराकरण ही सबसे बडा कर्म है।

**पूँजीपति** · हरि, हरि, हरि, शिव, शिव, शिव !

**मजदूर** . मैंने एक ऐसे आदमी का अन्त कर दिया। मुझे क्यों फाँसी हो ? होनी तो नही चाहिए थी, पर इस समय के कानून · ··

[दरवाजा खुलने की आवाज]

**कवि** : तो ···· तो······अब वक्त आ गया। हाय ! हाय ! अब वह आकाश, वह चाँदनी, वह जीव सृष्टि और ···· और ·····वह गयी तो गयी ···· उसी के सदृश किसी दूसरी को ढूँढता, सब······सब चले। अरे पतझड तो वसन्त के पहले होती है, जीवन के इस वसन्त के बीच यह पतझड कैसा ? प्रलय तो सृष्टि के पूर्ण विकास के बाद आता है। मेरा तो यौवन अभी विकसित हो रहा था। यह प्रलय

कैसा ? हाय ! हाय ! यह अन्याय, यह जुल्म !

**पूँजीपति** अभी तो न जाने मेरे कितने काम बाकी है ? मध्य-भारत का कॉटन मिल अभी अधूरा पडा है। बिहार का शुगर मिल इसी साल मे चलना शुरू हुआ है। यू० पी० के पेपर मिल की अभी तो नीव पडी है। न जाने कितनी ......कितनी फैक्टरियाँ और कितने......कारखाने बनाने थे। लेक रोड के मकान की नीव खुद रही है। हिन्दुस्थान के अच्छे से अच्छे शिल्पी को वह काम सौपा है। उसकी चित्रकारी की व्यवस्था बाकी है। नरनारायण के मन्दिर की प्रतिष्ठा शेष है। हरिद्वार की धर्मशाला का उद्यापन होना है।

**मजदूर :** कवि जी, आपको क्यो दु ख हो रहा है ? सृष्टि एक ही तत्त्व है। उसी मे तो आप मिलियेगा। यह तो बन्धन-मुक्ति है। और, पूँजीपति जी, आपको भी दु ख नही होना चाहिए। पूर्व-जन्म के अच्छे कर्मो के फलस्वरूप ही तो पूँजीपति के घर मे जन्म होता है। आपने मन्दिर बनवाये है, धर्मशाला बनवायी है, अपने जीवन का सबसे बडा पुण्य कार्य आपने एक मजदूर की हत्या करके किया है। आपका नया जन्म तो और अच्छा होगा। दु ख तो मुझे होना था। पर जानते है ? मुझे हर्ष है। एक खून चूसने वाले का खून कर मैने तो यह जन्म सफल कर लिया। फॉसी न होती तो अच्छा था। पृथ्वी का भार और घटाता, पर खैर, इतना .....इतना ही सही।

**[लोगों के आने की आहट होती है]**

**कवि :** अरे सारे भारतवर्ष के कलाकारों ने मुझे सबसे बड़ा उदीयमान कवि मान मुझे क्षमा करने के लिए दरख्वास्तें दी गयी थी। शायद    शायद मुझे छोड़ने के लिए ये लोग आ रहे हैं।

**पूंजीपति .** और ·· · और मेरे बचाने के लिए न जाने कितना धन खर्च किया जा रहा है। शायद·· ···शायद मुझे भी छोड़ने के लिये।

**[सैल का दरवाजा खुलता है। वर्दी पहने हुए जेलर का कुछ वार्डर्स के साथ प्रवेश।]**

**जेलर** तैयार ·· ·तैयार ··· हो जाओ, तुम लोग ईश्वर को याद करो।

**[कवि शून्य और कातर दृष्टि से सामने की ओर देखता है। पूँजीपति रोता है। और इन दोनों को देखकर मजदूर कहकहा लगाकर हँसता है।]**

**यवनिका**

**समाप्त**

व्यवहार

# मुख्य पात्र, स्थान

## मुख्य पात्र

| | | |
|---|---|---|
| रघुराजसिंह | : | एक जमींदार |
| नर्मदाशंकर | : | रघुराजसिंह के स्टेट का मैनेजर |
| चूरामन | : | एक किसान |
| क्रान्तिचन्द्र | : | चूरामन का पुत्र |

## स्थान

एक नगर

एक गाँव

## पहला दृश्य

स्थान : नगर मे रघुराजसिंह के महल की एक बालकनी

समय : प्रातःकाल

[एक विशाल बालकनी का जो हिस्सा दिखायी देता है वह सुन्दरता से बना और सजा है। उसके खंभे संगमरमर के हैं और रेलिंग बोड की रँगी हुई। फर्श मोज़ेक का बना है, जिसमें रंग-बिरंगे बेल-बूटे हैं। छत पर चूने की नक्काशी है और उससे बिजली की कई बत्तियाँ झूल रही हैं, जिनके शेड बेश-कीमती हैं। एक बिजली का पखा भी लटक रहा है। पीछे की रेलिंग के निकट ही वृक्षों के ऊपरी भाग दिख पड़ते हैं, जिससे जान पड़ता है कि बालकनी तीसरे या चौथे मज़िल पर है। बालकनी में लकड़ी का एक सुन्दर झूला, सोफ़ा-सेट, टेबिलें आदि सुन्दरता से सजी हैं। कुछ चीनी मिट्टी के गमले भी रखे हैं, जो भिन्न-भिन्न प्रकार के पौधो से भरे हैं। बालकनी की बनावट और सजावट के देखने से वह किसी अत्यन्त संपन्न व्यक्ति के महल का एक भाग जान पड़ती है। रघुराजसिंह बालकनी के एक कोने में खड़ा हुआ एक छोटी-सी सुन्दर दूर्बीन से पीछे के दरख्तों के परे की कोई वस्तु देख रहा है। रघुराजसिंह करीब

**२५ वर्ष की अवस्था का, गौर-वर्ण, ऊँचा-पूरा, किन्तु दुबला, सुन्दर मनुष्य है। वह ढीली बाँहो का पतला-सा कुरता और चूड़ीदार पाजामा पहने है। उसका सिर खुला है, जिस पर लंबे बाल लहरा रहे है। छोटी-छोटी मूँछे है और आँखों पर मोटे फ्रेम का चश्मा। उसके नज़दीक ही नर्मदाशंकर खड़ा है। नर्मदाशंकर की उम्र लगभग ६५ वर्ष की है। वह साँवले रंग, ठिगने क़द का मोटा आदमी है। सिर पर बड़ा-सा साफा बाँधे है और शरीर पर शेरवानी तथा पाजामा पहने है। उसके बड़े-से मुख पर उसकी छोटी-छोटी आँखे और बड़ी-बड़ी सफेद मूँछे एक खास स्थान रखती है।]**

**रघुराजसिंह** : (**दूर्बीन से देखते-देखते**) भोज की ठीक तैयारी हो रही है, मैनेजर साहब, बहन के विवाह मे किसानो की यह दावत मै विवाह का सबसे बडा काम मानता हूँ। (**कुछ रुककर**) कुल मिलाकर कितने किसान आवेगें ?

**नर्मदाशंकर** : पच्चीस हजार से कम नहीं, राजा साहब, आपने उन्हे मय बाल-बच्चो के आने का निमत्रण जो भेजा है।

**रघुराजसिंह** : (**दूर्बीन से देखते-देखते ही**) क्यो, पहले की शादियो मे किसानो को कुटम्ब-सहित निमत्रण नही दिया जाता था ?

**नर्मदाशंकर** : कभी नही, सिर्फ मर्द बुलाये जाते थे, वे भी चुने हुए घरों के, और घर पीछे एक आदमी।

**रघुराजसिंह** : (**दूर्बीन से देखते-देखते ही**) पर यह गलत बात

थी, मैनेजर साहब। सिर्फ मर्दों को, वह भी चुने हुए घरों के, तथा घर पीछे एक ही आदमी को बुलाने का क्या अर्थ था?

**नर्मदाशंकर** : अर्थ तो सभी पुरानी बातो का है, राजा साहब। **(कुछ रुककर)** हाँ, एक कठिनाई जरूर है।

**रघुराजसिंह** : **(दूर्बीन आँखों के सामने से हटा, नर्मदाशंकर की ओर देख)** कैसी कठिनाई, मैनेजर साहब?

**नर्मदाशंकर** : **(गला साफ़ कर कुछ भर्राये हुए स्वर में)** आप माफ करे तो कहूँ।

**रघुराजसिंह** : आप मेरे पिताजी के समय से काम कर रहे है, शायद चालीस वर्ष आपको काम करते-करते बीत गये। मै आपके सामने पैदा हुआ। पिताजी की मृत्यु के बाद मेरी नाबालिगी मे आपने ही कुल काम किया, आज भी आप ही मैनेजर है, आपको मै अपना बुजुर्ग मानता हूँ, आपको कोई बात कहने के पहले माफी माँगने की जरूरत है?

**नर्मदाशंकर** . मै आपकी कृपा का हाल जानता हूँ, राजा साहब, इसीलिए आज कुछ कहने की हिम्मत कर रहा हूँ। जो-जो बाते पहले होती थी उनके कारण ही **(बालकनी की ओर इशारा कर)** ये महल महलात, यह वैभव और ऐश्वर्य नज़र आता है। विवाह मे घर पीछे एक किसान और वह भी चुने हुए घरो के किसानो को, निमन्त्रण देने का सवाल नही है, प्रश्न है कार्य की सारी पद्धति का।

**रघुराजसिंह** अच्छा, तो जिस पद्धति से मै काम कर रहा हूँ वह आप मुनासिब नही समझते ?

**नर्मदाशंकर** (**सहमे हुए स्वर मे**) बात तो ऐसी ही है और समय-समय पर मै अपनी राय का सकेत भी करता आया हूँ।

**रघुराजसिंह** : (**कुछ याद करते हुए**) हाँ, मुझे याद आ रहा है। काम सँभालते ही जब मैंने किसानो पर का सारा कर्ज माफ किया तब वह भी आपको पसन्द नही आया था।

**नर्मदाशंकर** हाँ, राजा साहब, मुझे तो पसन्द नही आया था।

**रघुराजसिंह** (**विचारते हुए**) परन्तु आखिर उस कर्ज मे से कितना कर्ज वसूल होता ?

**नर्मदाशंकर** : सवाल कर्ज की वसूली का नही है।

**रघुराजसिंह** · तब ?

**नर्मदाशंकर** . किसानो पर उस कर्ज के कारण दबाव था, वह चला गया।

**रघुराजसिंह** . ओह ! तो अपना कोई फ़ायदा न होने पर भी किसानों को कुचलकर रखना ही पुरानी पद्धति का अर्थ है।

**नर्मदाशंकर** . नही, राजा साहब, ऐसी बात नही है।

**रघुराजसिंह** : तब ?

**नर्मदाशंकर** : बिना किसानो पर दबाव रखे हम जमीदारी से कोई लाभ उठा नही सकते।

[**कुछ देर निस्तब्धता।**]

**रघुराजसिंह** (**गंभीरता से विचारते हुए**) और जिन जमीनों पर ज्यादा लगान था, मेरा उनका लगान घटाना भी आपको पसन्द न आया होगा ?

**नर्मदाशंकर** किसी जमीन पर ज्यादा लगान था ही नही, राजा साहब।

**रघुराजसिंह** . किसी जमीन पर ज्यादा लगान नहीं था ?

**नर्मदाशंकर** किसी पर भी नही।

**रघुराजसिंह** तो जो किसान इतना रोते और बिलखते थे, वह सब उनका ढोंग था ?

**नर्मदाशंकर** बिलकुल ढोंग, राजा साहब।

**रघुराजसिंह** इतने मनुष्य झूठे आँसू बहाते थे ?

**नर्मदाशंकर** आप इन किसानो से अभी वाकिफ नही है, राजा साहब, ये क्या-क्या कर सकते है, आप जानते नही। आँखो मे दवा डालकर ये आँसू बहा सकते है।

[**कुछ देर फिर निस्तब्धता।**]

**रघुराजसिंह** . (**विचारते हुए**) और जिन गरीब किसानो को मैंने बिना कोई नजराना लिये जमीने दी, वह भी गल्ती की ?

**नर्मदाशंकर** वे इतने गरीब थे ही नही, राजा साहब, कि नज़राना न दे सके।

**रघुराजसिंह** पर कितने किसानो ने उनकी सिफारिश की थी ?

**नर्मदाशंकर** चोर-चोर मौसेरे भाई, राजा साहब।

[**फिर कुछ देर निस्तब्धता।**]

**रघुराजसिंह** और आज विवाह के उपलक्ष मे मैने कुटुम्ब-सहित किसानो को जो भोज दिया, इसमे क्या गलती है ?

**नर्मदाशंकर** किसानो का भोज खर्च का नही, आमदनी का कारण होता था, वह अब खर्च का कारण हो जायगा।

**रघुराजसिंह :** अर्थात् ?

**नर्मदाशंकर** राजा साहब, इस निमत्रण मे सिर्फ सपन्न किसानो को बुलाया जाता था। घर पीछे एक आदमी को निमत्रण दिया जाता था। एक मिठाई, एक नमकीन, एक साग, एक रायता और पूडी-कचौडी उन्हे खिला दी जाती थी। फी आदमी मुश्किल से चार आना खाता था। खानेवाले कोई एक रुपया, कोई दो, कोई चार, कोई पॉच, कोई सात, व्यवहार करते थे—कोई ग्यारह और कोई इक्कीस भी। आज के भोज मे न जाने कितनी तरह की मिठाइयॉ, नमकीन, तरकारियॉ, रायते, मुरब्बे, अचार, चटनियॉ और भी न जाने क्या-क्या, इन्हे खिलाया जायगा। सपन्न कम और दरिद्री अधिक आएँगे, फिर उनका पूरा का पूरा कुटुम्ब खायगा। व्यवहार देने वाले कितने होगे ?

**रघुराजसिंह** . (**आश्चर्य से**) व्यवहार ! आप इनसे व्यवहार लेगे ?

**नर्मदाशंकर** (**और भी आश्चर्य से**) क्यो व्यवहार नही लिया जायगा ?

**रघुराजसिंह** कभी नही।

[**नर्मदाशंकर आश्चर्य से स्तंभित-सा होकर रघुराजसिंह**

**की तरफ़ देखता है। कुछ देर निस्तब्धता।]**

**नर्मदाशंकर : (धीरे-धीरे अत्यन्त भर्राये हुए स्वर में)** लेकिन ···· लेकिन, राजा साहब, व्यवहार· व्यवहार न लेना तो उन किसानो ·· किसानो का भी अपमान ·· ·अपमान करना··· ··

**लघु-यवनिका**

## दूसरा दृश्य

स्थान : गाँव के एक मकान का कोठा

समय प्रात काल

[साधारण लंबाई-चौड़ाई का देहाती मकान का एक कोठा है। तीन ओर की दिखनेवाली दीवालों पर गारे की छपाई है, जो छुई मिट्टी से पुती है। कहीं-कहीं दीवारे मैली हो गयी हैं। पीछे की दीवाल मे ऊपर की तरफ़ दो छोटी-छोटी खिड़कियाँ है, जिसमे लकड़ी के भद्दे-से जंगले है। खिड़कियाँ ऊपर होने के कारण खिड़कियों के बाहर क्या है, वह दिखायी नहीं देता। दाहनी ओर की दीवाल मे एक छोटा-सा दरवाजा है, जिसकी चौखट और किवाड़ देहाती ढंग के बने है। दरवाजा बन्द है। छत पर बाँसों का पटाव है, जिस पर गारा छपा है और छुई पुती है। इधर-उधर से गारे की छपाई झड़ जाने के कारण बाँस दिखायी देते है। ज़मीन गोबर से लिपी है। तीन तरफ़ खाली ज़मीन छोड़कर, बीचों-बीच पीछे की दीवाल से सटी हुई एक लाल रंग की जाजम बिछी है। जाजम इधर-उधर मैली हो गयी है और यत्र-तत्र फट भी गयी है। जाजम पर कई किसान बैठे है। इन की अवस्थाएँ भिन्न-भिन्न है और स्वरूप भी अलग-अलग, लेकिन

कपड़े सबके प्राय एक-से है। इनके कपड़ों के कारण देखनेवालों को इनके किसान होने में कोई शक नही रह जाता। इस समुदाय मे एक ही व्यक्ति ऐसा है जो किसान नही जान पड़ता। इसका नाम है क्रान्तिचन्द्र। क्रान्तिचन्द्र की अवस्था २२, २३ वर्ष से ज्यादा नहीं है। वह साँवले रंग का, ऊँचा-पूरा बलिष्ठ व्यक्ति है। उसकी बहुत बड़ी-बड़ी आँखे और कुछ सिकुड़े-से ओठ उसके मुख मे एक ख़ास स्थान रखते है। वह खाकी रंग की कमीज और निकर पहने है। सिर खुला है, जिस पर लम्बे सँवारे हुए बाल है। क्रान्तिचन्द्र के पास ही उसका पिता चूरामन बैठा है। चूरामन की उम्र करीब ६० वर्ष की है। उसका रंग भी साँवला है सारा शरीर दुबला और मुख पिचका हुआ, जिसमे उसकी घुसी हुई आँखे उसके मुख को अत्यधिक करुण बना रही है। उसकी और अन्य किसानों की वेश-भूषा मे कोई फर्क नही है; इतना अन्तर है कि वह कानों मे सोने की मुरकियाँ पहने है। क्रान्तिचन्द्र अत्यन्त क्रोध भरी मुद्रा और अत्यधिक क्रूर दृष्टि से, जो उसकी बड़ी-बड़ी आँखों के कारण और ज्यादह क्रूर हो गयी है, चूरामन की तरफ़ देख रहा है और चूरामन ज़मीन की ओर। कभी-कभी वह क्रान्ति की तरफ़ दृष्टि उठाता है, पर ज्योही वह देखता है कि क्रान्तिचन्द्र उसकी ओर देख रहा है, त्योही अपनी दृष्टि फिर नीचे कर लेता है। बाकी किसान कभी पिता और कभी पुत्र की तरफ देखते है। कोठे में एक विचित्र प्रकार का सन्नाटा छाया हुआ है।]

क्रान्तिचन्द्र . (धीरे-धीरे) तो निमत्रण के ठीक समय तक हम लोग इसी प्रकार मौन बैठे रहेगे और बाहर बैठे हुए सब

लोग हमारे निर्णय की प्रतीक्षा करते रहेगे ?

[**कोई कुछ नहीं बोलता। फिर निस्तब्धता।**]

**क्रान्तिचन्द्र** (**कुछ देर बाद उठते हुए**) अच्छी बात है, आप लोग इसी प्रकार बैठे रहे, मुझे जो कुछ करना ठीक जान पडता है, मै जाकर करता हूँ। (**खड़ा होता है।**)

**चूरामन** : बैठ, बैठ, रेवापरसाद ! सुन तो।

**क्रान्तिचन्द्र** (**खड़े-खड़े ही, क्रोध से**) मेरा नाम रेवाप्रसाद नही है, पिताजी, मैंने कई बार आप से कह दिया, मै न किसी का प्रसाद हूँ न किसी का दास।

**चूरामन** (**डरते-डरते**) भूल गया, भूल गया, पर तू बैठ तो, किरान्तीचन्दर।

**क्रान्तिचन्द्र** (**कुछ शान्ति से**) पर बैठकर करूँ क्या ? यहाँ तो सभी ने मौन-व्रत धारण कर रखा है।

**चूरामन** : मउन बिरत की बात नही है, बेटा, तूने पिरसन ही ऐसा रखा है कि जवाब सरल काम थोड़ई है।

**क्रान्तिचन्द्र** : (**बैठते हुए**) मैने ऐसा प्रश्न रखा है ? पिताजी, पिजरे मे बन्दी पक्षी के उडने के लिए यदि पिजरे का द्वार खोल दिया जाय तो द्वार खोलनेवाला कोई समस्या खडी नही करता। अधकार मे रहनेवाले व्यक्ति को यदि प्रकाश मे ले आया जाय तो प्रकाश मे लाने वाला कोई भूल नही करता।

[**कोई कुछ नहीं बोलता। फिर निस्तब्धता।**]

**क्रान्तिचन्द्र** . (**फिर उठते हुए**) मै देखता हूँ, यहाँ इस प्रश्न का

निर्णय न हो सकेगा। **(खड़ा होता है।)**

**एक किसान** . तब कहाँ होगा, भैया ?

**दूसरा किसान** . हाँ, सब गावँन के पच तो हियाँ बइठे है। यहाँ निरनय न होई तो कहाँ होई।

**क्रान्तिचन्द्र : (खड़े-खड़े ही)** दासता की शृखलाओ मे, वर्षो, नही-नही युगो, नही-नही पीढियो तक, बँधे रहने के कारण पचो मे इस प्रश्न के निर्णय की सामर्थ्य नही रह गयी है।

**तीसरा किसान :** तब निरनय कौन करेगा ?

**क्रान्तिचन्द्र** बाहर खडी हुई किसान-जनता।

**चूरामन** बैठ, रेवा, बैठ तो · ·

**क्रान्तिचन्द्र (क्रोध से)** फिर · · फिर रेवा, पिताजी ··

**चूरामन** · अरे, भैया, बुढा गया हूँ, भूल जाता हूँ रे।

**क्रान्तिचन्द्र (कुछ शान्त होते हुए)** पर भूल पर भूल और उस पर भी भूल, भूलो की झडियो ने ही तो हमारी यह दशा कर दी है। मूल की बातो मे भूल होना सबसे बडी भूल है।

**चूरामन** अच्छा, तू बैठ तो।

**[क्रान्तिचन्द्र बैठ जाता है। फिर कोई कुछ नहीं बोलता। कुछ देर निस्तब्धता।]**

**क्रान्तिचन्द्र (कुछ देर बाद)** फिर सन्नाटा ! आप लोगो को हो क्या गया है ? एक छोटी-सी बात के निर्णय मे इस प्रकार का पशोपेश !

**चूरामन :** छोटी बात ! यह छोटी बात है ?

**क्रातिन्चन्द्र** · और क्या है ? जमीदार के निमत्रण मे जाकर गन्दे घी की मिठाई, चोकर की पूडियाँ और सडे साग खाना छोटी बात नही तो कोई बडी बात है ? फिर यह सब भी किस अपमान से किया जाता है। मुझे अपने छुटपन के एक ऐसे ही निमत्रण का स्मरण है। महल के फाटक से ही हमारा अपमान आरभ हुआ था। सदर फाटक मे तो हम लोग घुसने ही न पाये। एक पुराना टूटा-फूटा फाटक हमारे लिए खोला गया था। हरेक को प्रवेश के पहले अपने निमत्रण का टिकट दिखाना पडा। आपको निमत्रण था, पिताजी, मुझे नही, इसलिए आपके कितने गिडगिडाने और अनुनय-विनय करने पर मुझे घुसने दिया गया था। वह दृश्य आज भी दृष्टि के सामने घूम जाता है। हम लोगो को घुडसाल मे खिलाया गया था, घुडसाल मे। घोडो की लीद और मूत की दुर्गन्ध से नाक सडी जाती थी। उस दुर्गन्ध को इतने वर्षो के पश्चात् भी मेरी नाक तो नही भूली है। फटी पत्तलो और फूटे सकोरो मे हमे परसा गया था। परसगारी करनेवाले हमे इस प्रकार परसते थे, मानो हम कंगीर हो और वह भोजन करा हम पर महान उपकार किया जा रहा हो। भोजन की सामग्री का स्वाद अभी भी मेरी जीभ नही भूली है—कह नही सकता, घी मे मिठाई बनी थी या किसी गन्दे परनाले के पानी मे, दही का रायता था या छुई मिट्टी का, साग था कदाचित् सप्ताहो का सड़ा हुआ और पूरियाँ आटे की तो नही थी, लकडी के बुरादे

की हो सकती है। ऐसे भोजन के पश्चात् हमारे गरीब भाइयो को जो खनाखन व्यवहार का रुपया देना पडा था उसका शब्द अभी भी मेरे कानो मे गूँज उठता है। पिताजी, आप कहते है ऐसे निमत्रण मे न जाने का निर्णय छोटी बात नही है, बडी, बहुत बडी बात है।

**चूरामन** बेटा, पिरसन मान-अपमान और भोजन का नही है।

**क्रान्तिचन्द्र** तब ?

**चूरामन** जमीदार का न्योता है, बेटा, जमीदार का।

**क्रान्तिचन्द्र** ऐसा ! तो जो आपको लूट रहा है, जो आपका खून पी रहा है, उस लुटेरे उस डाकू के भय मे आप निमत्रण मे जा रहे है।

**चूरामन** · **(भयभीत स्वर मे)** बेटा बेटा · कैसी · कैसी बाते कर रहा है, क्या पागल हो गया है ? इसकूल और कालेज मे जाकर क्या लडके इस तरा से पगले हो जाते है ? भीतो के भी कान होते है, बेटा ··· थोडा ·

**क्रान्तिचन्द्र** **(आश्चर्य से)** सच्ची बात कहने मे काहे का डर, पिताजी ? दूसरो के श्रम पर बिना कोई श्रम किये जो तरह-तरह के गुलछर्रे उडाते है, वे लुटेरे नही तो क्या है ? श्रम करनेवाले भूखे और नगे रहते है और ये आरामतलब बिना कोई काम किये अलमस्त। ऐसे लोग खून चूसनेवाले नही तो और क्या कहे जा सकते है ? स्कूल और कॉलेज यदि सच्ची वस्तुस्थिति दिखा दे तो क्या वे कोई अपराध करते है ? दीवालो के कान होते है ! पिताजी, मै डरता नही

हूँ, भय से अधिक बुरी वस्तु मै ससार मे और कोई नही मानता। ईंट, चूने, मिट्टी-गारे की दीवालो के नही, मनुष्यो के समूहो के सामने मै ये सब बाते कहने, ऊँचे से ऊँचे स्वर मे कहने के लिए तैयार हूँ, तैयार ही नही, पिताजी, मैने कही है, स्वय जमीदार के सम्मुख कहने, उसे लिखकर भेजने के लिए प्रस्तुत हूँ।

**चूरामन** . शिव, शिव ! शिव, शिव !

**एक किसान** सब धान बाइस पसेरी नही होता। सब जमीदार एकसे नही होते।

**दूसरा किसान** . फिर हमारे इन जमीदार ने तो काम हाथ मे लेते ही हम पर न जाने कित्ते उपकार किये है।

**तीसरा किसान** . इस न्योते को ही देखो न ? पहले ब्याह-सादी मे छॉट-छॉट कर, छटे घरो के एक-एक आदमी को न्योता जाता था, अब पूरे के पूरे गॉवो को न्योता, हर किसान को, किसान के पूरे कुनबे को न्योता।

**क्रान्तिचन्द्र** . ठीक, जान पड़ता है, जमीदार आप सबकी ऑखो मे धूल डालने मे सफल हो गया। यद्यपि मै कॉलेज से हाल ही मे आया हूँ, पर विद्यार्थी की हैसियत से यहाँ आता-जाता तो रहता ही था। जमीदार के काम सॅभालने के पश्चात् उसके द्वारा जो उपकार हुए है उन सबका वृत्त मै भली भॉति जानता हूँ, और सिद्ध कर सकता हूँ कि उसकी जिन बातो को आप उपकार मानते है वे उपकार की न होकर यथार्थं मे आपके अपकार की बाते है।

**एक किसान** (**व्यंग से**) ऐसा !

**कान्तिचन्द्र** जी हाँ। और जो कुछ मैं कहता हूँ उसकी सत्यता सिद्ध करने की सामर्थ्य भी रखता हूँ। उसकी पहली बात जिसे आप उपकार समझते है, यही है न कि उसने, आप पर जो कर्ज था उसे छोड दिया ?

**एक किसान** हाँ। (**दूसरों की ओर देखकर**) क्यो, भइया ?

**कुछ किसान** (**एक साथ**) हाँ · हाँ।

**कान्तिचन्द्र** आप बता सकते है, उसमे से कितना कर्ज ऐसा था, जो वसूल हो सकता ?

[**कोई कुछ नहीं बोलता। कुछ देर निस्तब्धता।**]

**कान्तिचन्द्र** . जिस वर्ष कर्ज की यह छूट की गयी उस वर्ष गर्मियो की छुट्टी मे मैने अनेक गाँवो मे जा-जाकर उन किसानों की स्थिति की जाँच की थी, जिन पर कर्ज छोडा गया था। आप सच मानिए, इन किसानो मे से सौ मे से निन्यानवे ऐसे थे, जिनके पास जमीदार के कर्ज का ब्याज चुकाते-चुकाते भोजन बनाने के टूटे-फूटे बर्तन तक न बचे थे। खेती का जो इक्का-दुक्का सामान था, ककाल हुए बैल थे, सडा या कानून के अनुसार कर्ज मे पतला-सा बीज था, वह नीलाम कराया नही जा सकता था। फिर जमीदार कर्ज वसूल कहाँ से करता ?

**एक किसान** पर सौ मे एक से तो वसूल कर लेता।

**कान्तिचन्द्र** यही तो आप समझते नही। सौ मे से एक से पुराना कर्ज वसूल करने की अपेक्षा, पुराना कर्ज छोड, उन्हे नया

कर्ज दे उनसे ब्याज वसूल करना जमीदार के लिए कही अधिक लाभप्रद था।

**[सब किसान एक दूसरे का मुख देखते है। फिर सब चूरामन की ओर देखते है। वह कुछ नही बोलता। कुछ देर निस्तब्धता।]**

**क्रान्तिचन्द्र** : कहिए, मै ठीक कहता हूँ, या गलत ?

**[फिर कोई कुछ नहीं बोलता। फिर निस्तब्धता]**

**क्रान्तिचन्द्र** . **(कुछ देर बाद)** दूसरा उपकार, जो इस जमीदार का आप मानते होगे, वह कदाचित् उसका कुछ जमीनो का लगान कम करना है ?

**एक किसान** हॉ, हॉ, यह तो उनका बडा भारी काम है।

**कुछ किसान** **(एक साथ)** हॉ हॉ · · हॉ · हॉ ·

**क्रान्तिचन्द्र** यहॉ भी आप लोग भूल मे है।

**कुछ किसान** : **(एक साथ)** कैसे ·· कैसे · · ?

**क्रान्तिचन्द्र** : इस सम्बन्ध मे भी मैने जॉच कर ली है। जिनकी जमीनो पर लगान कम किया गया, उनमे से सौ मे से निन्यानवे किसानो पर बकाया लगान की नालिशे की गयी थी। जमीनो के अतिरिक्त उनके पास कुछ भी नही था। बेदखलियॉ हो सकती थी, परन्तु वे जमीने इतनी बुरी दशा मे थी कि बेदखली के पश्चात् कोई उन्हे लेता ही नही। ज़मीदार घर मे कितनी जमीन जोतता, अत लगान कम कर उन्ही किसानो के पास जमीन रहने देना जमीदार के लिए ज्यादा फायदेमन्द था।

**[फिर सब किसान एक दूसरे का मुख देखने लगते है और फिर सब चूरामन की ओर देखते है। कोई कुछ नहीं बोलता। कुछ देर निस्तब्धता। ]**

**क्रान्तिचन्द्र** · आप थोडा सा ध्यान देकर जमीदार की कार्रवाइयो को देखे तो उनका सच्चा रहस्य आपकी समझ मे आ जाय।

**[फिर कुछ देर निस्तब्धता।]**

**क्रान्तिचन्द्र** तीसरा काम जो इस जमीदार ने किया, वह है कुछ किसानो को बिना नजराने के मुफ्त मे जमीने देना। (**कुछ रुककर**) क्यो ?

**कुछ किसान** (**एक साथ**) हॉ · हॉ ··हॉ · ·· हॉ···· ·

**क्रान्तिचन्द्र** मै आपसे पूछता हूँ, यदि जमीदार यह न करता तो करता क्या ? क्या आप नही जानते कि उसकी हजारो एकड जमीन पडती पडी है। बिना नजराने के जमीने उठा देने से भी उसकी आमदनी बढी है या घटी ? मैंने इस सम्बन्ध मे भी सारी बातो का पता लगाया है और इस काम मे जमीदार की वार्षिक आय मे कोई पच्चीस हजार रुपये की वृद्धि हुई है।

**[सब लोग फिर एक दूसरे की ओर देखकर चूरामन की तरफ़ देखने लगते है। वह फिर कुछ नहीं बोलता। कुछ देर निस्तब्धता।]**

**क्रान्तिचन्द्र** अब विवाह के इस निमत्रण को ले लीजिए। आप समझते है कि छटे हुए किसानो को ही निमत्रण न देकर, हर

गाँव के हर किसान को निमन्त्रण दे, जमीदार ने आप सब पर बड़ा प्रेम दर्शाया है। मै कहता हूँ कि इस दुर्भिक्ष के समय आप पर और विशेषकर गरीब किसानो पर, इससे बड़ा जुल्म सम्भव नही था। इसके पिता केवल सम्पन्न किसानो को बुलाते थे। उनसे व्यवहार वसूल होता था। अब सभी बुलाये गये है, कुटुम्ब सहित। सबसे व्यवहार की वसूली होगी, एक-एक घर से नही, घर के प्रत्येक व्यक्ति से। चार आना खिलाकर चार रुपया वसूल किये जायँगे।

**एक किसान** . भाई, यह तो सच है।

**कुछ किसान** (**एक साथ**) हाँ · हाँ · ·· हाँ हाँ

[**कुछ देर निस्तब्धता।**]

**कान्तिचन्द्र** जमीदार और किसान के हित एक दूसरे के ठीक विरुद्ध है। दोनो एक दूसरे का हित-साधन कर ही नही सकते। जो ज़मीदार इसकी डीग मारता है वह लुटेरा और डाकू ही नही, धोखेबाज भी है तथा धोखा देकर अधिक लूटने और खून चूसने का इच्छुक। हम किसान अधिक सख्या मे है। जिधर अधिक सख्या होती है वही बल। हमने न सच्ची वस्तुस्थिति समझी है और न अपना बल पहचाना है। शत्रु को मित्र मान, उससे मित्र का-सा व्यवहार, सच्ची वस्तु-स्थिति को न पहचानना नही तो और क्या है ? बल रहते हुए भी अपने को निर्बल समझने से अधिक कौनसी भूल हो सकती है ? जमीदार हमारा शत्रु है, सबसे बड़ा शत्रु। भक्षक और भक्ष का कैसा व्यवहार ? उनके आपस मे कैसा

प्रेम ? और अपना सच्चा स्वरूप पहचानकर, अपना बल जानकर, यदि हम सब एक हो इस भोज मे सम्मिलित न हो तो जमीदार हमारा क्या कर सकता है ! (**कुछ रुककर सबकी ओर एक बार दृष्टि घुमा**) मै कहता हूँ इससे अच्छा अवसर मिल नही सकता, जब हम जमीदार को बतादे कि तुम और हम यथार्थ मे मित्र नही, शत्रु है, तुम्हारा हमारा कोई व्यवहार नही, तुम्हारे हित और हमारे हित एक दूसरे के ठीक विपरीत है। अब हमने उन्हे पहचान लिया है। अपने आपको भी हमने जान लिया है। हम अपने रास्ते चलेगे, तुम अपने रास्ते चलो। तुम एक हो, हम करोडो। एक का सातो सुख भोगना, और करोडो का अन्न के लिए 'त्राहि-त्राहि' और 'पाहि-पाहि' करना, वस्त्रो के बिना नगे घूमना, घरो के बिना वृक्षो के नीचे पडे रहना, यह सदा सम्भव नही। तुमने वर्षो नही, युगो से हमे लूटा है, हमारा खून पीकर स्वय लाल हुए हो, हम अब धोखा नही खा सकते। तुम्हारा नाश करके ही हम सुखी हो सकते है। यह सब स्वय समझ लेने ही नही, पर उसे बता देने के पश्चात् ही हमारा कार्य ठीक दिशा में हो सकेगा, क्योकि उस कार्य के मार्ग का प्रधान रोडा भय फिर हमारे सामने न रह जायगा।

[**क्रान्तिचन्द्र चुप होकर सब की तरफ़ देखता है। कोई कुछ नहीं बोलता। सब लोग चूरामन की ओर देखते है। चूरामन ज़मीन की तरफ। कुछ देर निस्तब्धता।**]

क्रान्तिचन्द्र. (**फिर क्रोध से खड़े होकर**) जान पड़ता है आप पचो के लिए सच्ची वस्तुस्थिति समझ सकना, अपने बल को पहचानकर ठीक दिशा मे चलना सम्भव नही रह गया है; परन्तु मै जानता हूँ कि किसान जनता की यह दशा नही है। आप थोडे बहुत सम्पन्न है न, इस नाम मात्र की सम्पन्नता के कारण जीवन मे पड़े हुए सुख के छोटे-छोटे छीटे भी नही छोड पाते। इन सुखो के छीटो के सूख जाने का भय आपसे अपने भाइयो के गले पर भी छुरी चलवा रहा है। अपने भाइयो के खून से तर खाने की सामग्री भी आप पच खाने को तैयार है, परन्तु याद रखिए, इस खाने मे अब आपके गरीब किसान भाई आपका साथ देनेवाले नही है। किसानो की नब्ज जितनी दूर तक मै देख सकता हूँ, आप पच कहे जाने पर भी नही। आपकी ज्ञान-शक्ति स्वार्थ के कारण कुठित जो हो गयी है। आप सच्चे पच रहे ही कहाँ है ? (**पीछे की दीवाल की दोनो खिड़कियों के निकट जा उनमे से बाहर की ओर देखते हुए**) बाहर की इस अपार किसान-जनता के, पिताजी, आप सच्चे चूडामणि हो सकते थे, (**लौटकर**) पर इतना प्रयत्न करने के पश्चात् मुझे आज मालूम हो गया कि यह आपके लिए सभव नही। जाने दीजिए, आपके पाप का प्रायश्चित् आपका पुत्र करेगा। पच कहे जाने वाले, इक्के-दुक्के कुल्हाडी के बेट, चाहे ज़मीदार के भोज मे सम्मिलित हो जायँ, पर सच्चे किसान कभी भी उस भोज मे न जायँगे। वे उन मिठाइयो,

उन पूरी-कचौडियो, उन साग-रायतो को हाथ भी न लगायँगे, जो उसके खून को चूसकर बनाये गये है । वह सामग्री चाहे आप पचो के गले उतर जाय, पर सच्चे किसानो के ओठो का स्पर्श भी न कर सकेगी। (**दाहिनी ओर की दीवाल के दरवाजे के निकट जाते हुए**) और······और······ स्मरण रखिएगा कि चाहे आप अपने भाइयो के इच्छा के विरुद्ध उसे खा आवे (**रुककर बड़े ही क्रूर स्वर में आँखों से आग-सी बरसाते हुए**) पर वह अब आपको हजम न हो सकेगी। उसका एक-एक कण आपके उदरो को चीर-चीरकर निकलेगा और·· ·और ···· (**शीघ्रता से बाहर जाता है ।**)

**चूरामन :** (**मानो किसी नीद से जगा हो**) बेटा!······ बेटा ! ····· ठैर······ठैर····· सुन······सुन तो······ (**क्रान्तिचन्द्र को न लौटते देख जल्दी से बाहर जाता है ।**)

**[भीतर बैठे हुए किसानों में खलबली-सी मच जाती है, सभी उठकर दरवाजे की ओर बढ़ते है । नेपथ्य में 'क्रान्तिचन्द्र की जय', 'क्रान्ति अमर हो', 'किसानो की जय', 'जमींदार-प्रथा का नाश हो' इत्यादि के बुलन्द नारे सुनायी देते है ।]**

**लघु-यवनिका**

## तीसरा दृश्य

स्थान : रघुराजसिंह के महल की बालकनी

समय . मध्याह्न

[वही बालकनी है जो पहले दृश्य में थी। सूर्य तो नहीं दिखता, पर यत्र-तत्र उसमें धूप पड़ती हुई दिखायी देती है, जिस से जान पड़ता है कि दिन चढ़ गया है। रघुराजसिंह अकेला बेचैनी से इधर-उधर टहल रहा है। उसके मुख पर उद्विग्नता के भाव झलक रहे है। हाथ मे उसके वही दूर्बीन है, जो पहले दृश्य मे थी। अनेक बार ठहरकर दूर्बीन से वह पीछे के दरख्तों के परे कुछ देख लेता है। बदहवास-सी अवस्था मे नर्मदाशंकर का हाथ मे एक खुली चिट्ठी लिये हुए जल्दी से प्रवेश।]

**नर्मदाशंकर :** राजा साहब ! राजा साहब !

**रघुराजसिंह :** (टहलना बन्द कर, नर्मदाशंकर की ओर बढ़कर) कहिए·· कहिए, मैनेजर साहेब, किसानों का कोई पता......

**नर्मदाशंकर :** जी हॉ। (चिट्ठी रघुराजसिंह को देकर) यह पता है।

[रघुराजसिंह चिट्ठी लेकर उसे पढ़ने क्या, आँखों से पीने-सा लगता है। एक पंक्ति के एक सिरे से दूसरे सिरे तक और एक

**पंक्ति के बाद दूसरी पक्ति पर नाचती हुई उसकी आँखों की पुतलियों से उसके हृदय के उद्वेग का पता चलता है। बड़ी-सी चिट्ठी को वह सेकिण्डो में पढ़ डालता है। उसे पूरा करते-करते उससे खड़ा नहीं रहा जाता; वह पहले कुर्सी पकड़ता और फिर एकाएक कुर्सी पर बैठ जाता है। कुर्सी पर बैठकर वह फिर से चिट्ठी पढ़ता है। अब उसका सिर झुक जाता है। नर्मदाशकर एकटक रघुराजसिंह की सारी मुद्रा को देखता रहता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]**

**नर्मदाशंकर** · देखा, राजा साहब, देखा, आपने इन किसानों की बदमाशी को देखा ? आप इन पर प्राण देते है। इनके थोडे से लाभ के लिए अपनी ज्यादा से ज्यादा हानि करने के लिए तैयार रहते है। काम सँभालने के बाद आपने इन बदज़ातो के लिए क्या नही किया ? पर······पर, राजा साहब, लातो के देव बातो से थोडे ही सीधे रहते हैं। जमीदार की बहन के विवाह-भोज का किसानो द्वारा बहिष्कार ! एक भी किसान का न आना ! और ऐसी····· आह ! ऐसी चिट्ठी, बेहूदगी, ज्यादा से ज्यादा बेहूदगी भरी हुई चिट्ठी भेजना ! इन दो कौडी के किसानों की यह मजाल ! इनकी यह हिम्मत ! इनका यह साहस ! इनकी यह हिमाकत ! ओह ! जमीदारो के सिरमौर इस घराने की आज क्या इज्ज़त रह गयी ? दूसरे ज़मीदार हम पर किस प्रकार हँसेगे ? हमारी कैसी खिल्ली उड़ेगी ? हमारा कैसा मजाक उड़ाया जायगा ? ओह ! ओ······

**रघुराजसिंह** · (**एकाएक खड़े होकर पत्र को देखते हुए**) पर······ पर·· ···मैनेजर साहब, 'किसानो के प्रतिनिधि क्रान्तिचन्द्र' ने ठीक तो लिखा है—'भक्षक और भक्ष्य का कैसा व्यवहार ?' मेरी ग़लती थी जो मैं यह समझता था कि किसानो का मैं हित कर सकता हूँ। जमीदार रहते हुए कोई जमीदार किसानों का हित नही कर सकता। मुझे ·····मुझे तो अब दूसरी ही बात सोचनी है।

**नर्मदाशंकर** : (**आश्चर्य से**) कैसी ?

**रघुराजसिंह** : (**टहलते हुए**) मै जमीदार रहना चाहता हूँ तो सच्चा जमीदार रहकर अपना, अपने साढे तीन हाथ के शरीर का, अपने छोटे से कुटुब का हित करूँ, या·· ···या ······(**चुप हो जाता है।**)

**नर्मदाशंकर** . या ?

**रघुराजसिंह** : या······या इस जमीदारी के तौक को गले से निकाल, जिनके हित की मै डीग मारता हूँ उन्ही का-सा हो, उन्ही के सच्चे हित मे अपना जीवन····· अपना जीवन व्यतीत कर दूं।

**नर्मदाशंकर** : (**अत्यधिक आश्चर्य से चिल्लाकर**) राजा साहब ! राजा साहब·····

[**रघुराजसिंह गम्भीर मुद्रा से सिर नीचा कर इधर-उधर टहलने लगता है। नर्मदाशंकर आश्चर्य से स्तंभित-सा रघुराजसिंह की ओर देखता रहता है।**]

**यवनिका**

**समाप्त**

# अधिकार-लिप्सा

## पात्र, स्थान

### मुख्य पात्र

| | |
|---|---|
| राजा अयोध्यासिंह | : एक जमीदार |
| कुमार काशीसिंह | : अयोध्यासिंह का लडका |
| दीवान प्रयागसिंह | : अयोध्यासिंह का दीवान |
| डाक्टर घोष | : अयोध्यासिंह का कौटुबिक डाक्टर |
| राजवैद्य गगाधर राव आयुर्वेदाचार्य | : अयोध्यासिंह का वैद्य |
| हकीम इब्राहीम हकीमुलमुल्क | : अयोध्यासिंह का हकीम |
| पंडित करुणाशकर ज्योतिषाचार्य | : अयोध्यासिंह का ज्योतिषी |
| पंडित कामरूप भट्टाचार्य | : अयोध्यासिंह का तान्त्रिक |
| सरदार निहालसिंह | : म्युनिस्पैलिटी का प्रेसीडेन्ट |
| सेठ गिरधारीलाल | : नगर का व्यापारी |

### स्थान

एक नगर

## उपक्रम

स्थान : राजा अयोध्यासिंह के मकान का कमरा

समय : सन्ध्या

[कमरे के तीन तरफ की दीवालें नीलेथूथे के रंग से हल्की नीली रंगी हुई है। दीवालो मे कई दरवाज़े और खिड़कियाँ है, जिनके चौखट और पल्ले पुराने ढंग के लकड़ी के बने हुए हैं। इनमें से कुछ बन्द है और कुछ खुले। खुले दरवाज़े और खिड-कियों से बाहर के फल के दरख्तों के बगीचे का कुछ हिस्सा दिखायी देता है। कई दरख्तों में आम फले हुए है। बगीचे को डूबते हुए सूर्य की किरणें रंग रही है। दीवालों पर शेर, चीते, बारहसिंहे, हिरण, रणभैंसे आदि जंगली जानवरों के चमड़े सजाकर लगाये गये है। कई चमड़ों में जानवरो के सिर भी है। इन चमड़ों के बीच-बीच में बन्दूकें, तलवारें, भाले इत्यादि हथि-यार सजाकर टाँगे गये है। कमरे की छत से पुराने ढंग के मोम-बत्ती के झाड़ और हंडियाँ झूल रहे है। बीचोबीच एक हाथ-पंखा टँगा हुआ है जो बाहर से धीरे-धीरे खींचा जा रहा है। कमरे की ज़मीन पर मिरज़ापुरी क़ालीन बिछा है। क़ालीन पर पुराने ढंग की कुर्सियाँ, टेबिलें इत्यादि सजी है। एक कुर्सी पर

**अयोध्यासिह :** उम्र ! उम्र से आपका क्या मतलब है, दीवान जी ? डाक्टर घोष कहते थे कि अंग्रेज़ी मे कहावत है कि आदमी उतनी ही उम्र का माना जाना चाहिए जितना वह अपने को समझता हो और औरत उतनी ही उम्र की समझी जानी चाहिए जितनी की वह दिखती हो। (**ज़ोर से हुक्क़ा गुड़गुड़ाकर**) मुझे इस पैसठवे साल मे भी वैसा ही लगता है जैसा जब मै तीस-पैंतीस साल का था उस वक्त लगता था। अगस्त मुनि का-सा मेरा हाजमा है और कुंभकर्ण की-सी नीद। आज भी मै शेर का शिकार कर सकता हूँ। देहात के दौरो मे बीस मील पैदल चल सकता हूँ। लेकिन घर से बाहर निकलने पाऊँ तब तो। (**हुक्के का धूआँ छोड़ते हुए**) दीवानजी, सारा मामला अख्त्यारात का है, अख्त्यारात का। कुमार साहब खुद मुखत्यार होना चाहते थे। उन्होने मेरी उम्र, और इस उम्र मे मुझे आराम मिलना चाहिए, यह बहाना ढूँढ लिया। मै क़ैद मे रखा गया हूँ, कैद मे। अब कौन मुझे पूछता है ? हफ्तो कुमार साहब तक मेरे पास नही आते। कौन काम मुझ से पूछकर होता है ? आप तक को पैन्शन दे दी गयी।

**प्रयागसिंह :** सरकार, इन बातो की तरफ देखे ही नही। अपनी तबियत सँभाले। आराम से रहे। भजन करे।

**अयोध्यासिह :** देखूँ ही नही ! आँखे रहते देखूँ कैसे नही, दीवान साहब ? देखना तो तब बन्द हो सकता है जब या तो आँखे फूट जायँ या जान निकल जाय। तबियत सँभालूँ ! तबि-

यत को क्या हुआ है ? आराम मुझे पडे-पड़े पत्ते गिनने मे नही मिलता और भजन करते है निकम्मे लोग।

**प्रयागसिंह :** फिर क्या किया जाय, हुजूर ?

**अयोध्यासिंह :** (**धूआँ छोड़ते हुए, कुछ ठहरकर**) दीवान जी, डाक्टर घोष कहते थे कि मेरा दिमाग, दिल, फेफड़े सब जवानो से अच्छे है। राजवैद्य गगाधर राव कहते थे कि मेरी नब्ज ऐसी चलती है, जैसी घोड़े की। हकीम इब्राहीम कहते थे कि अस्सी साल की उम्र तक मुझे किसी कुश्ते की जरूरत नही। (**हुक्का जोर से गुड़गुड़ाकर**) ज्योतिषाचार्य करुणाशकर जी कहते थे कि मेरे ग्रह ऐसे है कि कलयुग मे जो एक सौ बीस साल की उम्र कही है, वह मै पूरी पाऊँगा। और तात्रिक कामरूप भट्टाचार्य कहते थे कि वे अपने तत्रशास्त्र से मुझे उससे भी आगे बीस साल तक और जिन्दा रख सकते है।

**प्रयागसिंह :** इन सब बातो से ज़्यादा और ख़ुशी की क्या बात हो सकती है।

**अयोध्यासिंह** . दो-चार साल जीना होता तो दूसरी बात थी, जब जितने साल बीते है उससे ज्यादा बिताना है तो इस तरह निकम्मी जिन्दगी कैसे बिताऊँ ? दीवान जी, घर वालो और बाहर वालो, सबसे, मुझे इस तरह निकम्मे बनाने का बदला लेने की तरकीब मैने सोच ली है। ऐसा नुस्खा है कि सारा घर हिल जायगा और तमाम शहर मे तहलका मच जायगा। (**हुक्का गुड़गुड़ाते हुए**) कुमार साहब के सब

गुलछर्रे खत्म हो ही जायँगे और कुमार साहब को घूमना पडेगा मेरे चारो तरफ। शहर के जो लोग कुमार की वाह-वाह करने के लिए उसके बैठकखाने मे उसके दरबारी बने बैठे रहते है, उन्हें मेरी कदमबोसी के लिए इस कमरे में हाज़िर रहना पड़ेगा। **(धूम्रॉ छोड़ते हुए)** आपकी भी फिर वही पूछताछ शुरू होगी जो मेरे जमाने में थी।

**प्रयागसिंह : (प्रसन्न होकर)** इसकी कोई तरकीब है, हुजूर ?

**अयोध्यासिह** . हॉ हॉ, देखिए, मै कल ही तो आपको बताता हूँ।

**प्रयागसिंह** ऐसा ?

**अयोध्यासिह** कल सवेरे ही उस नुस्खे की करामात देखना।

**[खड़े होकर इधर-उधर टहलता है। प्रयागसिंह उसके पीछे-पीछे घूमता है।]**

**यवनिका**

## मुख्य दृश्य

स्थान : राजा अयोध्यासिंह के मकान का कमरा

समय : प्रातःकाल

**[दृश्य वैसा ही है जैसा उपक्रम मे था। फ़र्क़ इतना ही है कि कमरे के दाहिनी तरफ़ एक पलँग बिछा है जिस पर गले तक एक सफ़ेद चादर ओढ़े अयोध्यासिंह लेटा है। स्वच्छ वस्त्रों मे एक नौकर अयोध्यासिंह के पैर दाब रहा है। दो कुर्सियो पर काशी-सिंह और प्रयागसिंह बैठे है। काशीसिंह की उम्र करीब ४० साल की है। वह ऊँचा-पूरा, सुडौल शरीर का व्यक्ति है। रंग गेहुँआ है, छोटी-छोटी मूँछे है। कपड़े अंग्रेजी ढंग के शिकारी के है। सिर खुला हुआ है।]**

**काशीसिंह :** मै तो इधर एक हफ्ते से उनको देख न सका था, पर कल शाम तक तबियत बिलकुल ठीक थी ?

**प्रयागसिंह :** जी हाँ, बिलकुल ठीक। मै ठीक तबियत छोड़कर घर गया था।

**काशीसिंह :** और आज इतनी ख़राब हो गयी ?

**प्रयागसिंह :** क्या कहा जाय ?

**अयोध्यासिंह :** (कराहते हुए) बेटा, डाक्टर साहब आये ?

**काशीसिंह :** (**उठकर पलँग के नजदीक जाकर**) आते ही होंगे, पिता जी, मोटर भेजे काफी देर हो गयी।

**अयोध्यासिंह :** (**कराहते हुए**) जल्दी ·····जल्दी बुला, बेटा। कही ऐसा न हो कि जान निकलने पर डाक्टर आवे।

**काशीसिंह ·** (**घबड़ाकर**) आप क्या कहते है, पिता जी, पर खैर दूसरी मोटर भेजता हूँ। (**जाने लगता है।**)

**अयोध्यासिह :** वैद्य जी, हकीम जी, ज्योतिषी जी और तान्त्रिक जी को बुलाया है न ?

**काशीसिंह .** (**जाते-जाते रुककर**) हाँ, पिता जी, सबके यहाँ सवारियाँ गयी है। (**जाता है।**)

**अयोध्यासिह :** (**प्रयागसिह से**) देखा कुमार साहब को, सब गुलछर्रे खत्म हो गये न ? सवेरे शिकार को जा रहे थे। एक साल, पूरे एक साल, इस कमरे से बाहर न निकलने दूँगा।

[**काशीसिह का डाक्टर घोष के साथ प्रवेश। डाक्टर घोष क़रीब पैतीस साल का ठिगना, मोटा और साँवला मनुष्य है। अग्रेजी पोशाक पहने है। जल्दी-जल्दी पलँग के नजदीक जाता है। काशीसिह और प्रयागसिह भी उसके पीछे-पीछे जाते है।**]

**घोष :** (**पलँग के नजदीक जाकर**) गुड मॉरनिग, राजा साहब, आप बीमार हो गिया ?

[**तीनों कुर्सियो पर बैठते है।**]

**अयोध्यासिह :** (**कराहते हुए**) ओह ! ओह !

**घोष :** (**तेठासकोप निकालते हुए**) कोई खास ठो तकलीफ है, राजा साहब ?

**अयोध्यासिंह** · कुछ पूछिए मत, डाक्टर साहब। सिर फटा जाता है। कलेजा खिचा जाता है। पेट मे भाले चल रहे है। बदन का हर जोड टूटा जाता है। (**करवट बदलकर बड़ी जोर से कराहता है।**)

**घोष :** (**तेठासकोप कान मे लगाते हुए**) आप थोडा सीधा ठो हो जाइगा ?

[**अयोध्यासिंह सीधा हो जाता है। नौकर पैर दाबना छोड़ कर एक तरफ़ खड़ा हो जाता है। डाक्टर चादर उठाकर कुरता ऊँचा करके तेठासकोप से छाती देखता है। राजवैद्य गंगाधर राव का प्रवेश। गंगाधर राव की उम्र क़रीब ४५ वर्ष की है। वह साधारण क़द और शरीर का मनुष्य है। और सफ़ेद अँगरखा धोती पहने है। सिर पर मराठी पगड़ी लगाये है। उसे देखकर काशीसिंह उसके नजदीक आता है। दोनों एक दूसरे को हाथ जोड़ते है।**]

**काशीसिंह :** पिता जी की तबियत एकदम बहुत बिगड गयी, महाराज।

**गंगाधर राव :** (**हाथ हिलाते हुए**) यह अस्वस्थता अवश्यमेव विलक्षण संवाद आहे। द्वय दिवस पूर्व हमारी भेट हुई रही, उस काल के बीच स्वस्थ रहे, सर्वथा स्वस्थ।

**काशीसिंह :** कल रात तक तबियत ठीक थी, वैद्यराज जी, आज सवेरे से ही बिगडी है, लेकिन बहुत बिगड गयी, महाराज।

**[दोनों पलँग के नजदीक की कुर्सियों पर बैठ जाते है ।]**

**घोष** : अब आप बैंक ठो हमारा तरफ करिए ।

**[अयोध्यासिंह कराहते हुए करवट लेता है। घोष तेठासकोप से पीठ देखता हैं । हकीम इब्राहीम का प्रवेश। वह क़रीब ५५ वर्ष का लंबा पूरा, मोटा मनुष्य है। रंग साँवला है। छोटी मूँछें और लंबी दाढ़ी है। बाल काले है, पर उनकी जड़ें सफ़ेद; जिस से मालूम होता है कि दाढ़ी और मूँछों पर खिज़ाब किया गया है। रेशमी छींट की शेरवानी और सफेद पाजामा पहने है। सिर पर तुर्की टोपी है। हकीम इब्राहीम को देखकर काशीसिंह उसके नजदीक आता है। दोनों एक दूसरे को एक हाथ से बन्दगी करते है।]**

**इब्राहीम** . राजा साहब की तबियत नासाज़ हो गयी, कुमार साहब ?

**काशीसिंह** : हाँ, हकीम साहब, और बहुत ज्यादा ।

**इब्राहीम** · उनकी तो इतनी अच्छी तन्दुरुस्ती है कि उनकी अलालत एक अजीबो गरीब खबर है।

**काशीसिंह** : कल रात तक वे बिलकुल अच्छे थे ।

**[तीनों पलँग के नजदीक की कुर्सियों पर बैठते है।]**

**घोष** : **(तेठासकोप को कान से निकालते हुए)** कोई खास ठो बात तो नेई है। **(गंगाधर राव और इब्राहीम की तरफ़ घूमकर)** गुड मॉर्निंग, कविराज, गुड मॉर्निंग, हकीम।

**[गंगाधर राव हाथ जोड़ता है और इब्राहीम एक हाथ से बन्दगी करता है।]**

**गंगाधर** हृद्गति चचल आहे, डाक्टर ?

**घोष** कुच-कुच पर ज्यादा ठो नेई।

**[घोष कुर्सी पर बैठकर थरमामीटर निकालता है। अयोध्यासिह गंगाधर राव और इब्राहीम का अभिवादन करता है।]**

**अयोध्यासिह :** (कराहते हुए) ओह ! ओह ! मै तो मर रहा हूँ, वैद्यराज जी, हकीम साहब।

**[घोष थरमामीटर अयोध्यासिह के बग़ल मे लगाता है।]**

**गंगाधर राव :** अशुभभं न ब्रूयात्। राजा साहब, आप अत्यन्त द्रुत गति से पुन. स्वास्थ्य लाभ करहिगे।

**इब्राहीम :** शब तक तन्दुरुस्त हो जायँगे, आज ही शब तक, राजा साहब।

**[घोष थरमामीटर निकालकर देखता है। गंगाधर राव उठकर तीनों उँगलियों से दोनों हाथ की नब्ज़ देखता है। फिर इब्राहीम सिर्फ़ एक तर्जनी उँगली को भुजा की तरफ़ सीधी लबी रखकर दोनो हाथ की नब्ज़ देखता है। अयोध्यासिह कराहता है।]**

**घोष :** नो टेम्प्रेचर, राजा साहब।

**अयोध्यासिह** ' टेम्प्रेचर न होगा, पर मरा तो जाता हूँ।

**घोष :** ओ ! सब ठो ठीक हो जाइगा, सब ठो ठीक।

**गंगाधर राव :** अवश्यमेव।

**इब्राहीम :** बिला शक।

**अयोध्यासिह :** ओह ! पेट मे तो भाले चल रहे है, भाले।

[तीनो पेट दाबकर देखते है। अयोध्यासिह कराह-कराह कर पलँग पर हिलता है। घोष, गंगाधर राव और इब्राहीम पलँग के नज़दीक की कुर्सियों पर से उठकर उससे दूर की बायीं तरफ़ की कुर्सियों पर बैठते हैं। काशीसिह और प्रयागसिह उनके निकट की दूसरी दो कुर्सियो पर बैठते है। अयोध्यासिह बार-बार करवटें बदलते हुए कराहता है। नौकर फिर से उसके पैरों को दबाना शुरू करता है।]

**घोष :** (गंभीरता से) इट्स ए सीरियस केस !

**काशीसिह ·** (घबड़ाहट से) सीरियस केस !

**गंगाधर राव :** (सिर हिलाकर) अवश्यमेव।

**प्रतापसिह :** (चिन्ताकुल) कोई डर है ?

**इब्राहीम .** बिला शक, खौफ है।

**काशीसिह ·** क्या बीमारी है, डक्टर साहब ?

**घोष .** ये केना ठो अबी डिफीकल्ट है, इसका लिए तो खून, पखाना, पेशाब का जॉच कराना होगा, लेकिन पेशेन्ट का कन्डीशन ठो खराब है।

**गंगाधर राव .** नाडी वेगवती चौष्णा !

**इब्राहीम .** हॉ, नब्ज की हालत बिलाशक नाजुक है।

**काशीसिह .** फिर क्या किया जाय ?

**घोष :** ट्रीटमेट ठो शुरू करना होगा, एकदम। आपको ते करना है, ऐलोपैथिक, कविराजी, हकीमी, कौन सा ठो ट्रीटमेट कराना है ?

**काशीसिह .** (कुछ सोचते हुए) जब कन्डीशन इतना सीरियस

है, तब तीनो ही दवा एकदम शुरू करना ठीक होगा। (**कुछ ठहरकर**) मेरी राय तो यह है कि डाक्टर साहब इन्जकशन लगाये, वैद्यराज जी पेट मे खाने की दवा दे और हकीम जी मालिश वगैरह का इन्तजाम करे।

**घोष** : हो सकता।

**गंगाधर राव** . अवश्यमेव।

**इब्राहीम** बिलाशक।

**काशीसिंह** (**घोष से**) खून, पैखाना और पेशाब की जॉच आप कब करायेगे ?

**घोष** इसका लिए हम तीनो का एक्सपर्ट डाक्टर्स को अबी भेज देगा।

**काशीसिंह** इलाज को छोडकर बाकी इन्तजाम क्या-क्या किये जायँ ?

**घोष** . बाकी इन्तजाम ?

**काशीसिंह** जी हॉ, जैसे कमरे मे कोई खास बात की जाय क्या ? खाने को दिया जाय या नही, और दिया जाय तो क्या दिया जाय, वगैरह-वगैरह ?

**घोष** : (**कमरे को चारों तरफ़ देखकर**) कमरा ठो ठीक हे, लेकिन गरमी का मोसिम है। खग की टट्टी से फायदा होगा। क्यों कविराज, क्यों हकीम ?

**गंगाधर** · अवश्यमेव। खस अत्यन्त लाभप्रद आहे।

**इब्राहीम** बिलाशक फायदेमन्द, बहुत फायदेमन्द।

**काशीसिंह** टट्टी अच्छी होगी या परदे ?

**घोष** परदा वुड बी बैटर।

**काशीसिंह** उनकी बुनावट घनी हो या बिरली।

**घोष** · वह केसा बी हो सकता।

**काशीसिंह** फिर भी इतना सीरियस केस है, जैसा आप कहेंगे बन जायगा।

**घोष** : थोडा बिरला होने से डेपनेस कम होगा।

**काशीसिंह** एक खस की लाइन से दूसरी लाइन के बीच मे कितनी जगह छोड़नी ठीक होगी ?

**घोष** · (**कुछ सोचते हुए**) थ्री-फोर्थ इंच। क्यो कविराज, क्यो हकीम ?

**गंगाधर राव** ठीक आहे, ठीक आहे।

**इब्राहीम** : बिलकुल ठीक।

**काशीसिंह** और परदो को कितनी-कितनी देर मे सीचना चाहिए ?

**घोष** . (**कुछ सोचते हुए**) चार-चार मिनिट मे। ये ठो बोत जरूरी है। कोई टट्टी भी सूख गिया तो कमरा का टेम्प्रेचर ठो बिगड जावेगा।

**काशीसिंह** सीचने के पानी मे बरफ मिलाना ठीक होगा ?

**घोष** : बोत अच्छा, बोत अच्छा। क्यो कविराज, क्यो हकीम ?

**गंगाधर राव** · अवश्यमेव। अवश्यमेव।

**इब्राहीम** : बिला शक।

**काशीसिंह** पलँग परदों से कितने फुट और इंच दूर रहना चाहिए ?

**घोष** . (**गंभीरता से सोचते हुए**) पॉच फुट चार इच ठो ठीक होगा। क्यो कविराज, क्यो हकीम ?

**गंगाधर राव** ठीक आहे, ठीक आहे।

**इब्राहीम** . बिलकुल ठीक।

**काशीसिंह** . (**कुछ सोचते हुए**) और फिर पखा जोर से खीचा जाना चाहिए, या धीरे-धीरे ?

**घोष** : न बोत ठो जोर से न बोत ठो धीरे।

**काशीसिंह** . (**कुछ सोचते हुए**) एक मिनट मे कितने रिवोल्यूशन होना चाहिए ?

**घोष** : (**कुछ सोचकर**) कोई डेढ डजन ठो। क्यों कविराज, क्यो हकीम ?

**गगाधर राव** : ठीक आहे।

**इब्राहीम** . और क्या ?

**काशीसिंह** . (**कुछ सोचते हुए**) कमरे मे और कोई इन्तजाम ?

**घोष** : (**विचारते हुए**) यहॉ पर परफेक्ट पीस ठो रेना चाहिये। कोई गुल-गपाडा नेई।

**गंगाधर राव** : हो, ओम शान्ति शान्ति· शान्तिः।

**इब्राहीम** : एकदम अमन।

**काशीसिंह** (**कुछ सोचते हुए**) अच्छा, खाने को दिया जाय या नही ?

**घोष** : क्यो कविराज, क्यो हकीम, हम तो समझता दे सकता।

**गंगाधर राव** : अवश्यमेव।

**इब्राहीम** बिला शक।

**काशीसिंह** क्या दिया जाय ?

**घोष** (**कुछ सोचते हुए**) आप भात दे सकता, दाल दे सकता, रोटी बी दे सकता, परबल का वेजीटेबिल दे सकता। क्यो कविराज, क्यो हकीम ?

**गंगाधर राव** . अवश्यमेव।

**इब्राहीम** : बिला शक।

**काशीसिंह** . कितने तोला भात, कितने माशे दाल, कितने वजन के आटे की रोटी और कितने परवल ?

**घोष** ये हकीम जी बतायगा।

**इब्राहीम** · (**सोचते हुए**) कोई दो तोले भात, नौ माशे दाल और डेढ़ तोले आटे की रोटी। परवल दो। क्यो डाक्टर क्यो वैद्य जी ?

**घोष** ठीक।

**गंगाधर राव** : ठीक आहे।

**काशीसिंह** : परवल मे बीजे रहने चाहिएँ या निकाल दिये जायँ ?

**इब्राहीम** रह सकते है।

**काशीसिह** : कितने बीजे तक दिये जा सकते है ?

**इब्राहीम** (**गंभीरता से सोचकर**) एक दर्जन। क्यो डाक्टर, क्यो वैद्य जी ?

**घोष** . ठीक।

**गंगाधर राव** · ठीक आहे।

**काशीसिंह** और रोटी पर घी लगाया जाय या नही ?

**इब्राहीम** (**विचारपूर्वक**) मक्खन लगाइए।

**काशीसिंह** . उसके सामने की तरफ या पुश्त पर ?

**इब्राहीम** (**अत्यन्त गंभीरता से सोचते हुए**) पुश्त पर ठीक होगा। क्यो डाक्टर, क्यो वैद्य जी ?

**घोष** ठीक।

**गंगाधर राव** ठीक आहे।

**काशीसिंह** और पीने के लिए पानी ?

**इब्राहीम** : यह वैद्य जी बतायेगे।

**गंगाधर राव** ग्रीष्मे सचीयते वायु अत क्षीर नीर दीजिए।

**काशीसिंह** : याने ?

**गंगाधर राव** : विशुद्ध कूपजल एक मृत्तिका के पात्र मध्य अग्नि पर धरिए। जब अर्द्ध भस्म हो जाय तब शेष अर्द्ध को रजत पात्र मे शनै शनै. शीतल कर सुवर्ण के चम्मच से तृषा के काल बीच दीजिए। क्यो डाक्टर, क्यो हकीम जी ?

**घोष** ठीक।

**इब्राहीम** . बिला शक ठीक।

**काशीसिंह** और दूध दिया जा सकता है या नही ?

**गंगाधर राव** अवश्यमेव। नूतन जनित गौ के धारोष्ण पय को पारद पात्र मे पिलाइए। अत्यन्त लाभजनित आहे। क्यो डाक्टर, क्यों हकीम जी ?

**घोष** : ठीक।

**इब्राहीम** : बिला शक ठीक।

[सब लोग कुछ देर चुप रहते है। अयोध्यासिंह कराहता है।]

**घोष** : अच्छा, तो हम जाकर अपना असिस्टैन्ट भेजता। उसके साथ इजक्शन का दवा ठो। आधा-आधा घटे मे इजक्शन देना होगा।

**काशीसिंह** हर आधे घटे मे इजकशन ?

**घोष** . सर्टिनली, आप देखता नेई कन्डीशन कितना सीरियस !

**काशीसिंह** और खून, पैखाना, पेशाब की जॉच करने वाले एक्सपर्ट्स को आप कब भेजेगे ?

**घोष** अबी, अबी।

**गंगाधर राव** हम औषधि प्रेपित करते है। प्रत्येक पन्द्रह क्षण पश्चात् एक मात्रा मधु के सग सुवर्ण पात्र बीच मिश्रित कर जिव्हा पर चटा दीजिए।

**काशीसिह** हर पन्द्रह मिनिट पर ?

**गंगाधर राव** अवश्यमेव, अवश्यमेव। रोग भीषण आहे।

**इब्राहीम** : और मै मालिश के लिए दो रोगन भेजता हूँ। एक की मालिश दिमाग पर होगी और दूसरे की दिल पर। कुमार साहब, मालिश होनी चाहिए लगातार शाम तक, इसलिए बहुत मुलायम हाथो से होनी चाहिए, जिसमे कोई कल्लाहट वगैरह न हो।

**काशीसिंह** . आप मालिश करने के लिए किसी को भेज सकेगे ?

**इब्राहीम** : हॉ, मेरे पास मालिश करने वाली नर्स है। एक साथ दो को मालिश करनी होगी। एक को दिमाग पर और

दूसरी को दिल पर। फिर एक-एक तो शाम तक कर न सकेगी। एक-एक घटे मे उन्हे बदलना होगा।

**काशीसिह** अच्छी बात है, आप भेजदे।

[**तीनों खड़े होते है। काशीसिह और प्रयागसिह भी खड़े होते है।**]

**प्रयागसिह :** फिर आप लोग कब तशरीफ लायेगे ?

**घोष :** शाम को।

**गंगाधर राव ·** अवश्यमेव।

**इब्राहीम :** बिला शक।

**काशीसिह** पर पहले जरूरत हुई तो पहले भी आना होगा।

**घोष :** जब आप चाहेगा फौरन आ जायगा।

**गंगाधर राव .** अवश्वमेव, अवश्यमेव।

**इब्राहीम** बिला शक, बिला शक।

[**तीनों का प्रस्थान। काशीसिह और प्रयागसिह अयोध्या-सिह के पलँग के पास आते है, जो अब तक उसी तरह करवट बदलता हुआ काँख रहा है।**]

**काशीसिह :** अब कैसी तबियत है, पिता जी ?

**अयोध्यासिह :** (**कराहते हुए**) ओ ! मर रहा हूँ, बेटा, मर रहा हूँ ! (**कुछ रुककर**) डाक्टर, वैद्य और हकीम ने क्या कहा ?

**काशीसिह :** कुछ नही, सबने कहा आप बहुत जल्दी अच्छे हो जायँगे।

**अयोध्यासिंह :** (**कराहते हुए**) और ज्योतिषी जी तथा तान्त्रिक

जी अब तक नही आये ?

**काशीसिंह** . आते ही होगे। मैंने उनसे कहला दिया था कि आपकी तबियत ठीक नही है, इसलिए आपके ग्रह देखकर, और अगर कुछ शान्ति कराना हो तो उस पर विचार करके, आवे, इसीलिए शायद देर हो गयी हो, मै अभी देखता हूँ। (**प्रस्थान।**)

**अयोध्यासिंह** . देखा, दीवान जी, एक ही नुस्खे मे कुमार साहब कैसे ठीक हो गये ?

**प्रयागसिह** . लेकिन, हुजूर, इलाज, बडा सख्त शुरू होने वाला है। बिना बीमारी के इतना सख्त इलाज कैसे बर्दाश्त होगा ?

**अयोध्यासिह** इसकी तुम फ़िक्र न करो, रोज इलाज बदलाऊँगा, इतना ही नही, आबहवा बदलने जाऊँगा और मेरी दुम बनकर जायँगे कुमार साहब। मेरे जीते जी मुझ से अख़्त्यारात लेकर मुझे कैदी बनाकर शाहशाही करना चाहते थे, उसी का नतीजा भोगेंगे।

**[काशीसिह का करुणाशंकर और कामरूप भट्टाचार्य के साथ प्रवेश। करुणाशंकर क़रीब ६० साल का साधारण उँचाई का दुबला-पतला, गौर वर्ण का व्यक्ति है। धोती पहने है और उपरना ओढ़े है। सिर खुला है। दाढ़ी-मूँछें और सिर पर बाल नहीं है, पर बहुत बड़ी श्वेत रंग की चोटी है, जो बँधी हुई है। मस्तक पर त्रिपुण्ड है। कामरूप लगभग ४० वर्ष का ठिंगना, मोटा और काला व्यक्ति है। आँखें लाल है। वस्त्र करुणाशंकर के सदृश है सिर, मूँछे, दाढ़ी के बाल काले है। प्रयागसिह खड़े होकर उन्हें**

**प्रणाम कर उनका स्वागत करता है। नजदीक आने पर अयो-ध्यासिंह दोनों को हाथ जोड़कर प्रणाम करता है। वे दोनो हाथ उठाकर आशीर्वाद देते हैं।]**

**करुणाशंकर** आयुष्मान। आयुष्मान।

**कामरूप** जुग जुग जिइए।

**अयोध्यासिंह** . **(कराहते हुए)** आप लोगो को शायद मालूम नही है कि मै मर रहा हूँ, नही तो इस तरह का आशीर्वाद नही देते।

**करुणाशंकर** सूँ कहो छो, राजा साब? दो चार दिवशमा ही आरोग्यता थसे।

**अयोध्यासिंह** आपने ग्रह देखे?

**करुणाशंकर** हाँ, देख ने आयो छूँ, श्रीमान, या माटे ही तो थोडो विलब थयो।

**अयोध्यासिंह** . **(जोर से कराहते हुए)** कैसे है?

**करुणाशंकर** : भलाछे, भलाछे। कोई चिन्ता नी बात नई, थोडो उपाय अवश्य करावो पडशे। अभी कुमार साब सूँ सारी हकीकत कहूँ छूँ।

**अयोध्यासिंह** और आप भी कुछ कराइए, तान्त्रिक जी।

**कामरूप** हाँ, मै भी विचार करके आया हूँ। कुमार साहब से सब कह देता हूँ। आप कोई चिन्ता न करे।

[**करुणाशंकर, कामरूप, काशीसिंह और प्रयागसिंह पलँग से दूर पर बॉयीं तरफ़ की कुर्सियो पर बैठते है।]**

**काशीसिंह** कैसे ग्रह है, महाराज?

**करुणाशकर** अत्यन्त निकृष्ट, कुमार माव। राजा साब ने शनि मारकेश छे। शनि नी दशा छे। शनि मे शनि नो ही अन्तर छे। प्रत्यन्तर मे चन्द्र छे, वो भी बुरो। वर्ष ना ग्रह भी बुरा, मास ना भी बुरा, और गोचर ना भी बुरा।

**काशीसिंह** (**घबड़ाकर**) तब ?

**करुणाशंकर** · सूँ चिन्ता छे। उपाय करनो पडशे। उपाय सूं मव निकल जाशे।

**काशीसिह** : उपाय पर आपने विचार किया ?

**करुणाशकर** : हाँ, श्रीमन्, रुद्राभिशेष ने साथे सवा लक्ष महा-मृत्युजय नो जाप, शतचण्डी, लोह और चाँदी नो तुलादान सग एक सौ आठ गोदान।

**काशीसिह** तो अभी से सब इन्तजाम किया जाय, जिससे कल ही सब हो जाय, पडित जी।

**करुणाशकर** . कल ही सब।

**काशीसिह** : (**कामरूप से**) और आप क्या करेगे ?

**कामरूप** : मैने भी सब सोच लिया है। एक उलूक का वध कर उसकी आँख को अश्वत्थ वृक्ष की शाखा मे बाँधकर उसका पैशाची पूजा करना होगा। फिर उसी वृक्ष के नीचे रण-गिद्ध के मास से हवन करना होगा। तब व्याधि मिटेगी।

**काशीसिह** उसका इन्तजाम भी कल हो जाना चाहिए।

**कामरूप** : अवश्य हो जायगा।

**काशीसिह** . चलिए, मै सब बातो के लिए अलग-अलग आदमियो को मुकर्रर कर दूँ, जिससे कल तक सारा इन्तजाम होने मे

आप लोगो को कोई दिक्कत न हो ।

[**तीनों का प्रस्थान। स्वच्छ वरदी मे एक चपरासी का प्रवेश ।**]

**चपरासी** . हुजूर की तबियत पूछने के लिए म्युनिस्पैलिटी के प्रेसी-डेन्ट और नगर-सेठ साहब तशरीफ लाये है ।

**अयोध्यासिह** (**मुस्कराकर**) देखा, दीवान जी, देखा, घर मे और बाहर, दोनो ही जगह नुस्खा कैसा काम कर रहा है ? जाइए, दोनो को ले आइए ।

[**प्रयागसिंह का प्रस्थान। अयोध्यासिह शान्ति से लेटा रहता है। प्रयागसिह का सरदार निहालसिह और सेठ गिरधारी-लाल के साथ प्रवेश। निहालसिह की अवस्था क़रीब ५० वर्ष की है। वह ऊँचा, पूरा, मोटा ताज़ा सिख है। रग गोरा है। दाढ़ी मूँछों के बाल आधे सफ़ेद हो गये है। कपड़े अँगेज़ी ढंग के है। सिर पर सफ़ेद साफ़ा है। गिरधारीलाल की उम्र लगभग ४५ वर्ष की है। वह ठिगना और मोटा आदमी है। वर्ण मे साँवला है। सिर व मूँछों के बाल कुछ-कुछ सफ़ेद हो चले है। मस्तक पर मोटा रामानन्दी तिलक लगाये है। सिर पर मारवाड़ी पगड़ी है तथा शरीर पर सफ़ेद अँगरखा और धोती। गले में ज़री का दुपट्टा डाले है। इन्हे देखते ही अयोध्या-सिह फिर कराहकर करवट बदलने लगता है।**]

**निहालसिह** (**अयोध्यासिह के पलँग के निकट जाकर**) अरे, राजा साहब, बीमारी तो आप दे नेडे नइ आय थी। बहादरॉ दे नेडे बीमारी इस तरा बीमारी तो नामर्दा···

**गिरधारीलाल** (अयोध्यासिंह के पलँग के निकट जाकर बीच ही मे) यो कॉई हुयो, राजा शाब, आपरी तो बेमारी कदेई शुणी कोनी। कठेगूँ आ बीमारी हो गयी ! अवार तव्यन किशीक छै ?

**अयोध्यासिंह** . (कराहते हुए) आह ! सरदार साहब आह ! सेठ साहब !

[निहालसिंह, गिरधारीलाल और प्रयागसिंह अयोध्यासिंह के पलँग के पास की कुर्सियो पर बैठते हैं।]

**यवनिका**

## उपसंहार

स्थान : राजा अयोध्यासिह के मकान का कमरा

समय : दोपहर

**[दृश्य वैसा ही है जैसा उपक्रम और मुख्य दृश्य मे था। फ़र्क इतना ही है कि पलँग उठा दिया गया है । कुर्सियों पर काशीसिह और प्रयागसिह बैठे है। दोनों सिर्फ़ कुरता और धोती पहने हुए है। सिर पर दोनों के सफ़ेद साफा बँधा हुआ है। काशीसिंह की मूँछे मुँड़ी हुई है।]**

**काशीसिंह** : दीवान जी, इतनी जल्दी यह पहाड़ मेरे सिर पर टूटेगा इसका मुझे सपने मे भी खयाल न था।

**प्रयागसिंह** · क्या कहूँ, सरकार।

**काशीसिंह** मै तो इधर कुछ दिनो से मिल न सका था, पर आपने कहा न कि परसो शाम तक वे बिलकुल अच्छे थे।

**प्रयागसिंह** परसो शाम तक क्या, हुजूर, कल सुबह इलाज शुरू होने तक वे बिलकुल अच्छे थे।

**काशीसिंह** **(आश्चर्य से)** इलाज शुरू होने तक बिलकुल अच्छे!

**प्रयागसिंह** जी हॉ, और उन्हे मारा इस इलाज ने।

**काशीसिंह** इलाज ने मारा! तुम भी क्या उन्ही के मानिद

पागल हो गये हो। इलाज शुरू होने के थोड़ी ही देर बाद उन्होंने चिल्लाना शुरू किया था कि मैं बिलकुल अच्छा हूँ, बिलकुल अच्छा हूँ, यह इलाज बन्द करो, नहीं तो मैं मर जाऊँगा और उनके मरने के बाद तुमने वही कहना शुरू किया।

**प्रयागसिंह** सरकार, वे ठीक कहते थे और मै भी ठीक कहता हूँ। इलाज ने उन्हे मार डाला।

**काशीसिंह** इतने अच्छे डाक्टर, वैद्य और हकीम के इलाज ने उन्हे मार डाला! वे तो बीमारी के सबब इलाज होते होते पागल हो गये थे, उनकी बात मानकर उनका इलाज कैसे बन्द किया जाता, पर तुम तो बिना बीमारी के ही पागल हो रहे हो।

**प्रयागसिंह** (**आश्चर्य से**) मै पागल हो रहा हूँ?

**काशीसिंह**· बेशक पागल हो रहे हो, नहीं तो तुम कभी ऐसी बात मुँह से निकाल सकते थे कि इलाज ने उन्हे मार डाला।

**प्रयागसिंह** हुजूर, मै फिर कहता हूँ, इलाज ने उन्हे मारा, इलाज ने उन्हे मारा।

**काशीसिंह :** (**क्रोध से**) तब तुम्हे पागलखाने जाने की तैयारी करनी चाहिए। मै अभी डाक्टर घोष को बुलाकर तुम्हारी जाँच करा तुम्हे पागलखाने भेजने की तैयारी करता हूँ। (**प्रस्थान।**)

**प्रयागसिंह :** (**पीछे पीछे जाते हुए चिल्लाकर**) हुजूर...हुजूर डाक्टर घोष।...डाक्टर घोष... तो......

**यवनिका**

**समाप्त**

# आधुनिक यात्रा

# पात्र और स्थान

## मुख्य पात्र

रामखिलावन : एक यात्री
बिन्द्राबन : एक यात्री

## स्थान

पहला दृश्य एक कस्बे की सडक
दूसरा दृश्य : एक रेलवे स्टेशन का बाहरी भाग
तीसरा दृश्य एक स्टेशन का प्लेटफार्म
चौथा दृश्य : रेलगाडी का डब्बा

## पहला दृश्य

### बेकरारी

स्थान एक कस्बे की सडक

समय मध्यान्ह

[पीछे की ओर दूर पर बस्ती का कुछ हिस्सा दिखायी पड़ता है। मकानों की बनावट से जान पड़ता है कि कोई कस्बा है। बस्ती के सामने खेत है, जिनमे पौधों के ठूँठ दिखायी पड़ते है, जिससे ज्ञात होता है कि हाल ही मे उन खेतों की फ़सल काटी गयी है। सड़क दाहिनी से बायीं ओर गयी है। यद्यपि सूर्य नहीं दिखता तथापि सारे दृश्य पर जो प्रकाश फैला हुआ है तथा वस्तुओं की जैसी छाया पड़ रही है, उससे भास हो जाता है कि मध्याह्न का समय है। रामखिलावन और बिन्द्राबन का दाहिनी ओर से जल्दी-जल्दी प्रवेश। दोनों ऊँचे पूरे गठे हुए शरीर के व्यक्ति है। रँग गेहुँआ है। अवस्था अधेड़। चढ़ी हुई मूँछें। वेष-भूषा शहर से सम्बन्ध रखने वाले पढ़े-लिखे देहातियों की-सी, सिर पर कुछ मैले-से साफ़े, शरीर पर उजले कुर्ते और मैली-सी धोतियाँ, पैरों में देहाती जूते। बायें कन्धे पर कुछ सामान

**जो दाहिने हाथ से सँभाला हुआ और बाये हाथ मे ऊँची-ऊँची लाठियाँ।]**

**रामखिलावन** इस दुपहरी मे दौडते-दौडते जान निकल गयी।

**बिन्द्राबन** और अभी हुआ क्या है ? गाडी मिल जाय, उस में बैठ जायँ, ठिकाने पहुँच जायँ, तब की बात है।

**रामखिलावन :** जब-जब कही जाओ, यही आफत। दिनो पहले मुसाफिरी की बात सोचो, सफर के दिन बेकरारी से दौडे-दौडे टेसन पहुँचो।

**बिन्द्राबन** और जितनी बेकरारी टेसन पहुँचने मे उतनी ही गाडी लेट। करो घटो इन्तजारी टेसन पर।

**रामखिलावन .** और फिर गाडी आते ही फौजदारी।

**बिन्द्राबन** और गाड़ी मे बैठ भर पाये। बस जहाँ बैठे हो गयी **(हँसते हुए)** पक्की जमीदारी।

**रामखिलालन ·** **(उठाकर हँसते हुए)** खूब, भाई, खूब—बेकरारी, इन्तजारी, फौजदारी, जमीदारी। हम लोगो ने तो कबता कर डाली कबता।

[**कुछ देर निस्तबधता।**]

**बिन्द्रावन .** अच्छा, अब सुस्ता लिये। चलो अब कदम बढाये चले चलें। कही गाडी चली न जाय।

**रामखिलावन :** हाँ, सायद गाडी जल्दी ही आ जाय।

[**दोनों का जल्दी-जल्दी बाँयी ओर प्रस्थान।**]

**लघु यवनिका**

## दूसरा दृश्य

### इन्तजारी

स्थान  एक रेलवे स्टेशन का बाहरी भाग

ममय : अपराह्न

**[पीछे की ओर रेलवे स्टेशन का कुछ भाग दिखायी देता है। उसके सामने मैदान है। मैदान मे एक ओर रामखिलावन और बिन्द्राबन अपना-अपना सामान जमीन पर रखे उस पर बैठे हुए है।]**

**रामखिलावन** . वही हुआ न जो हमेसा होता है । बेकरारी मे दुपहरी भर दौडते-दौडते टेशन पहुँचे और गाडी साढे तीन घन्टे लेट । अब करो इन्तजारी ।

**बिन्द्राबन** : पर, भाई, करे क्या ? ठीक बखत टेशन पहुंचे और गाडी भी ठीक बखत आजाय तो टिकस ही न मिले ।

**रामखिलावन** . क्यों, भाई, तीस बरस का तो हम दोनो को होस है। साथ-साथ ही रहे है। घूमे-घामे भी है, पर मुसाफरी मे ऐसी मुसीबत तो कभी नही देखी ।

**बिन्द्राबन** . कभी नही, कभी नही। (कुछ रुककर) कहते है आबादी बहुत बढ गयी है और रेले घट गयी है।

**रामखिलावन** . क्यो जी, इतने आदमी बढ कैसे गये ?

**बिन्द्राबन** · **(सोचते हुए)** देखो न मेरे परदादा अकेले थे उनके हुए दो। उन दो मे से एक के तीन और दूसरे के चार। उन तीनो मे से एक के तीन, दूसरे के पॉच, तीसरे ·

**रामखिलावन** : **(ठठाकर हँसकर, बीच ही मे)** अरे इस तरह तो मेरे बस मे भी हुआ। चार पीढी का हिसाब लगाया जाय तो कई के नाम ही भूल जायँ।

**बिन्द्राबन** . तो बस, इसी तरह बढे है। पुरानो मे लिखा है न बिस्नू के ब्रह्मा भये और ब्रह्मा के फलॉ-फलॉ और ब्रह्मा ने कहा अपने लडको बच्चो से कि सृस्टी बढाओ।

**रामखिलावन** पर कहॉ तक बढे, भाई।

**बिन्द्राबन** : अब महेस का काम सुरू हो गया है। इस लडाई के पूरे होते-होते एक भी बचने वाला नही।

**रामखिलावन** · हॉ, अब तक फौज लडती थी, अब परजा पर बम पडते है।

**बिन्द्राबन** . देखना परजा का एक भी आदमी बच जाय तो। बस फिर वही ब्रह्मा, विस्नू, महेस तीन रह जायँगे और इनमे से भी अखीर मे एक।

[**कुछ देर निस्तबधता।**]

**रामखिलावन** और गाडी कितनी घटी ?

**बिन्द्राबन** : अपने टेसन की गाडियो का ही हिसाब लगा लो। **(सोचते हुए)** सबेरे एक पसीजर जाती और एक आती थी। उसके बाद जाने वाली और आने वाली फास पसीजर,

फिर दो एसपिरिस, फिर दो पसीजर

**रामखिलावन** (**बीच ही मे**) हाँ, हाँ, बहुत थी बहुत···

**बिन्द्राबन :** और अब रह गयी दो पसीजर और दो डाक ।

**रामखिलावन** · पर, भाई, इतनी आबादी कोई बरस, दो बरस मे थोडे ही बढी है ।

**बिन्द्राबन** पर गाड़ियाँ तो इन्ही बरसो मे घटी है न ।

**रामखिलावन** (**सोचते हुए**) और इसी लिए बेकरारी यह इन्तजारी । यह फौजदारी यह जमीदारी ।

**लघु यवनिका**

## तीसरा दृश्य

### फौजदारी

स्थान : स्टेशन का प्लेटफार्म

समय . सन्ध्या

[प्लेटफार्म का थोड़ा-सा भाग दिखायी देता है। प्लेटफार्म पर एक गाड़ी खड़ी है। हो-हल्ला मचा हुआ है। डिब्बो की खिड़कियो मे से यात्री उतरने का प्रयत्न कर रहे हैं, क्योंकि डब्बों के दरवाज़े बन्द है। उतरने वाले यात्री इन्हीं खिड़कियो मे से चढ़ने वाले यात्रियों की शीघ्रता के कारण उतर नहीं पाते। चढ़ने वाले यात्रियों को डब्बे मे बैठे हुए आदमी चढ़ने नहीं देते। ऐसी कशमकश मची हुई है जिसका वर्णन कठिन है। पूरी फौजदारी का दृश्य है। कौन क्या कहता है यह न तो पूरा सुन पड़ता और न पूरा समझ मे ही आता। हाँ, बीच-बीच मे पान, बीड़ी, माचिस, सिगरेट, पूड़ी, मिठाई, दही बड़ा, ठण्डा पानी इत्यादि शब्द सुन पड़ते है। और कभी-कभी 'देखता हूँ न चढ़ने देने वाले को। देखूँ कैसे घुसता है।' 'साले' 'सूअर' इत्यादि शब्द। रामखिलावन और बिन्द्राबन थर्ड क्लास के एक डिब्बे की खिड़कियों मे से डिब्बे में घुसने का प्रयत्न कर रहे है। जिस

खिड़की से रामखिलावन घुसने का प्रयत्न कर रहा है उससे एक यात्री उतरने का प्रयत्न कर रहा है; और जिस खिड़की से बिन्द्राबन घुसने का प्रयत्न कर रहा है उस खिड़की में भीतर एक यात्री खड़ा हुआ बिन्द्राबन न घुस पाय इस प्रयत्न मे तल्लीन है। स्टेशन के अफसर तटस्थ-से खड़े हुएइस दृश्य को देख रहे हैं। जैसे यात्रियों के उतरने-चढने मे सहायता करना उनका काम नहीं।]

लघु यवनिका

## चौथा दृश्य

### जमींदारी

स्थान : रेलवे का डिब्बा

समय : रात्रि

[**थर्ड क्लास के डिब्बे का कुछ भाग दिखायी देता है। कुछ यात्री आराम से बैठे हुए है, कुछ आधे लेटे भी। रामखिलावन और बिन्द्राबन खड़े हुए अपना सामान लपेट-लपाट रहे है।**]

**रामखिलावन** . (**बिन्द्राबन से**) कहो कैसी जमीदारी रही ?

**बिन्द्राबन** . हाॅ, खूब रही, भाई, खूब। हमारे डिब्बे मे यो तो हम हमेसा ही किसी को घुसने नही देते, पर अब की बार तो · ···

**एक अन्य यात्री** : (**बीच ही मे**) हाॅ, हाॅ, आप लोगो के आने के बाद तो आपने किसी को नही घुसने दिया।

**दूसरा यात्री** किसी को नही··· किसी को नही। माफ कीजिए आपके घुसते समय मैने ही सबसे ज्यादा आपका रास्ता रोका था, पर आपके आने से तो इतना आराम मिला कि क्या कहूँ।

**तीसरा यात्री : (राम खिलावन और बिन्द्राबन की लाठियों की ओर संकेत कर)** यह प्रताप इन गोभियो का है।

**रामखिलावन** नही, नही, यह परताप है जिमीदारी का।

**तीसरा यात्री (कुछ आश्यचर्य से)** जिमीदारी जिमीदारी कैसी!

**रामखिलावन :** देखो, भाइयो, आज **(बिन्द्राबन की ओर सकेत कर)** हम दोनो ने आजकल की मुसाफरी के लिए एक कबता बनायी है।

**कुछ यात्री (एक साथ)** कबता ' कबता क्या कैसी कबता ?

**रामखिलावन . (जिसने अपना सामान लपेट कर कन्धे पर रख लिया था, खिड़की से बाहर देखते हुए)** अभी गाडी तो खडी रहेगी न ?

**कुछ यात्री : (फिर एक साथ)** हॉ, हॉ, अभी गाडी छूटने मे बहुत'' ' बहुत देर है।

**तीसरा यात्री** वह कबता '' क्या कहा आपने '' हॉ, इसे और कहकर उतरिए।

**रामखिलाबन .** कबता यह है :

बेकरारी, इन्तजारी, फौजदारी, जमीदारी।

**[यात्री एक-दूसरे का मुँह देखते है।]**

**एक अन्य यात्री** कुछ समझे नही हम लोग।

**बिन्द्राबन** मै समझाये देता हूँ। देखिए, गाडियॉ हो गयी है कम,

टिकस मिलने मे होती है मुसकल, इसलिए कैसी बेकरारी से हम लोग दौडे-दौडे टेसन आते है ।

**कुछ यात्री** (**एक साथ**) ठीक ठीक बिलकुल ठीक।

**बिन्द्राबन** और टेसन पर फिर होती है इन्तजारी, क्योकि गाड़ी आती है लेट ।

**कुछ यात्री** (**ठठाकर हँसते हुए**) ठीक ·· बिलकुल ठीक।

**बिन्दाबन** और फिर गाडी आते ही गाडी मे घुसने के लिए सुरू होती है फौजदारी।

**कुछ यात्री** . (**और जोर से हँसते हुए**) वाह ! वाह ! वाह ! वाह !

**बिन्द्राबन** : (**हँसते हुए**) और जहाँ घुसने को मिला, दूसरे घुसने वालो के लिए बस हो जाती है जमीदारी कायम !

**कुछ यात्री** (**और जोर से हँसते हुए**) खूब ! · बहुत खूब !

**रामखिलावन** और जब हम दोनों ने यह कबता बना डाली तब फौजदारी भी जरा बहादुरी से की और जमीदारी के हक की भी पूरी-पूरी रच्छा की, जो आप लोगो ने भी आज देख ही ली।

**कुछ यात्री** . (**एक साथ**) ठीक बिल्कुल ठीक।

[**नेपथ्य में रेल की घंटी की आवाज़ सुनायी देती है ।**]

**बिन्द्राबन** : अच्छा, भाई, अब चले।

[**दुआ सलामे होती है और रामखिलावन तथा बिन्द्राबन डब्बे की खिड़कियों से ही बाहर को उतरते है ।**]

**कुछ यात्री** (एक साथ) बेकरारी इन्तजारी फौज-दारी जमीदारी ।

[**कई यात्रियो के जोर से कहकहे। नेपथ्य से गाड़ी की सीटी की आवाज़ ।**]

**यवनिका**

**समाप्त**

# ईद और होली

## पहला दृश्य

स्थान : एक गली

समय : सन्ध्या

[सकरी-सी गली का एक हिस्सा दिखायी देता है, जिसके दोनों तरफ़ एक मंज़ले और दो मंज़ले छोटे-छोटे मकानों के बाहरी भाग दृष्टिगोचर होते है। गली के एक ओर सबसे नज़दीक खुदाबख़्श के एक मंज़ले मकान के सामने का कुछ हिस्सा दीख पड़ता है। मकान मे जाने-आने का एक छोटा-सा दरवाज़ा है। गली के दूसरी तरफ सबसे नज़दीक रतना के दो मंज़ले मकान के सामने का कुछ भाग दिखायी देता है। इस मकान में जाने-आने का एक बड़ा-सा दरवाज़ा है। खुदाबख़्श और रतना के मकान एक दूसरे के ठीक सामने है और बीच मे गली है। हमीदा खुदाबख़्श के मकान के भीतर से निकलकर गली मे आती है। हमीदा क़रीब चार वर्ष की छोटी-सी बालिका है। रंग गेहुँआँ है और देखने मे साधारणतया सुन्दर है। छोटे-छोटे फैले हुए बाल है। एक गुलाबी रंग का रेशमी पाजामा और हरे रंग का रेशमी कुरता पहने है। कानों मे चाँदी की बालियाँ है। हमीदा के हाथों मे पत्ते का दोना है और उसमे मैदे की

**बनी हुई सिंवइयाँ है ।]**

हमीदा  **(रतना के मकान के नजदीक जाकर जोर से)** आम ! ओ
आम !

**[रतना के मकान से राम निकलता है । उसकी उम्र भी हमीदा के बराबर ही है, पर कद मे वह हमीदा से कुछ ऊँचा और शरीर मे भी कुछ मोटा है । रंग गेहुँआँ है और देखने मे बुरा नहीं है । एक सफ़ेद जाँघिया पहने है और उसके ऊपर वैसा ही कुरता ।]**

**राम** · **(हमीदा को देखकर)** ओ हम्मू ।

**हमीदा** : हाँ आम । आद ईद, ईद । **(सिंवइयाँ दिखाते हुए)** जे।

**राम**  जे त्या हे, हम्मू ?

**हमीदा**  ईद ती छिमइयाँ ।

**राम**  ईद तो छिमइयाँ ?

**हमीदा** . हाँ, आम, ईद ती छिमइयाँ । मीथी, मीथी ।

**[दोनों रतना के मकान के नजदीक गली के एक किनारे पर बैठ जाते है ।]**

**हमीदा** . हम तुम दोनो थाँय ।

**राम** · दोनो थाँय ?

**हमीदा** . **(सिंवइयाँ राम के मुँह की तरफ ले जाते हुए)** हाँ,
आम, दोनो थाँय।

**[हमीदा राम को अपने हाथ से सिंवइयाँ खिलाती है, फिर ख़ुद खाती है। रतना अपने मकान के बाहर निकलती है। वह करीब ४० साल की गेहुँएँ रंग की साधारण उँचाई और शरीर की स्त्री**

है। वेश-भूषा से विधवा जान पड़ती है।]

**रतना** (ज़ोर से) राम! ओ राम!

**राम** (उसी तरह बैठे हुए सिवइयाँ खाते-खाते) हाँ, माँ।

**रतना** . (राम के नज़दीक आते और राम तथा हमीदा को क्रोध से देखते हुए) फिर उस मलेच्छा के साथ खा रहा है। भिष्ट कही का।

**राम** · अले, माँ, छिमइयाँ हैं, छिमइयाँ, मीथी, मीथी। ईद ती है, ईद ती, माँ।

[रतना नज़दीक पहुँचकर राम का हाथ पकड़ती है। हमीदा बैठी-बैठी खाती रहती है। खुदाबख्श अपने मकान के बाहर निकलता है। उसकी उम्र करीब ४५ वर्ष की है। रंग साँवला है। वह ऊँचा पूरा, मोटा-ताजा व्यक्ति है। ईद के कारण धुला हुआ सफ़ेद पाजामा और चिकन का कुरता तथा उस पर हरे रंग की रेशमी सदरी पहने है। सिर पर हरे रंग का ही बड़ा-सा रेशमी साफ़ा बाँधे है।]

**रतना** (खुदाबख़्श को न देख हमीदा की तरफ़ क्रोध से घूरते हुए गरजकर) हरामजादी, सौ बार कहा मेरे लडके के साथ न खेला कर। अपना छुआ, अपना जूठा, खिलाती है, मलेच्छा कही की।

[हमीदा पर रतना की घुड़की का कोई असर नहीं पड़ता और उसका खाना जारी रहता है।]

**खुदाबख़्श** (उसी तरफ़ नज़दीक आते हुए) बस बहुत हुआ, बहुत हुआ, खबरदार, अगर जबान चूकी तो।

**रतना** (**खुदाबख्श की तरफ़ देखते हुए**) ब्राह्मन का धरम भिष्ट कराता है और कहता है खबरदार, जबान चूकी तो। उल्टा चोर कोतवाल को डॉटे।

**खुदाबख्श** · (**हमीदा को गोद मे उठाते हुए**) मै औरत के मुँह नही लगना चाहता। काफिर कही की।

**रतना** · औरत भी तेरे मुँह नही लगना चाहती। (**राम को गोद मे उठाते हुए**) अपनी शाहजादी को अपने बस मे रख।

**खुदाबख्श** . क्यो तेरा लडका भरष्ट होता है ?

**रतना** मेरा लडका तेरे घर नही गया था। तेरी लड़की आयी थी।

**खुदाबख्श** . (**हमीदा को गोद मे उठाये अपने घर की तरफ जाते हुए**) अब कभी पेशाब करने भी न आयेगी।

**रतना** . (**राम को गोद मे उठाये अपने घर के अन्दर जाते हुए**) वही अच्छा है, धरम तो बचा रहेगा।

**खुदाबख्श** · (**घर मे जाते-जाते घृणा से**) काफिर और मजहब।

**रतना** (**भीतर से**) मलेच्छ। मलेच्छ।

[**दोनों अपने-अपने बच्चों के साथ अपने-अपने घरों के अन्दर चले जाते है। नेपथ्य मे 'मारो मारो' कोलाहल होता है। खुदाबख़्श बाहर आता है। गली मे कुछ मुसलमान लाठियाँ लिये दौड़ते हुए आते है।**]

**खुदाबख्श** : क्या हुआ, बिरादरान ?

**एक आगन्तुक** : झगडा।

खुदाबख़्श  हिन्दू मुसलमानो मे ?

दूसरा आगन्तुक : हाँ, हाँ, और किसमे होगा ?

[आगन्तुक दौड़ते हुए दूसरी तरफ़ चले जाते है। खुदाबख़्श जल्दी से घर के अन्दर जाता है और एक लाठी लेकर आता है तथा उसी तरफ चला जाता है जिस तरफ दूसरे मुसलमान गये थे। नेपथ्य मे कोलाहल बढ़ता है। हमीदा अपने घर से निकलती है और रतना के मकान के भीतर जाती है। नेपथ्य मे कोलाहल होता रहता है। खुदाबख़्श एक हाथ मे तेल से भीगे हुए चिथडे और दूसरे हाथ मे एक मशाल लिये हुए आता है। रतना के मकान के इधर-उधर वे चिथड़े रख मकान मे आग लगाने का प्रयत्न करता है।]

खुदाबख़्श . (क्रोध से दाँत पीसते हुए) मलेच्छ ! मलेच्छ ! हम मलेच्छ ! ले गालियो का नतीजा, ले। तेरा राम, तेरा मकान, तेरा सब कुछ खाक मे मिला दूँ तब तो मेरा नाम खुदाबख्श। जा, दोजख मे जा, मय खानदान और दौलत के जा, काफिर कही की।

[नेपथ्य का कोलाहल और बढ़ता है।]

लघु यवनिका

## दूसरा दृश्य

स्थान : रतना के मकान की छत

समय : रात्रि

**[लबी छत है। पीछे की तरफ़ मकान की दीवाल है और सामने की ओर ईंट चूने की रेलिंग। रेलिंग के नीचे भी दीवाल है। दाहिनी ओर बाँयीं तरफ़ से आग की लपटे और धुँआँ उठ रहा है। बीच-बीच मे दाहिनी और बाँयीं तरफ से आग के कुछ कण छत पर आते है। छत पर राम और हमीदा खड़े हुए बात कर रहे है। नेपथ्य मे बीच-बीच मे कोलाहल सुनायी देता है।]**

**हमीदा** . ईद ते बादे बदते है, आम।

**राम** : **(आग की लपटों की ओर इशारा कर)** औल ईद ते छात होली बी दल रही है, हम्मू।

**हमीदा** हॉ, औल होली ता दाना बी हो लहा है, आम।

**राम** : ईद ते बादे बद लहे है, होली ता दाना हो लहा है।

**हमीदा** . मैंने तो तुधे ईद ती छिमइयाँ थिलाई थी, आम। तू मुधे होली ती मिथाई नई थिलायदा ?

**राम** . होली दल दाने पर मेरे धल मे मिथाई बनेदी, हम्मू।

[**आग की लपटे धीरे-धीरे नज़दीक आने लगती है।**]

**राम :** अले होली तो पाछ-पाछ आती जाती है।

**हमीदा** · कैसी अच्छी, लाल-लाल, पीली-पीली।

[**आग के कण और नजदीक़ आने लगते है।**]

**हमीदा . (कणो को पकड़ने का प्रयत्न करते हुए)** जुदनू, आम, जुदनू।

**राम** नही, छोना, हम्मू, छोना।

[**नेपथ्य मे जोर से 'हम्मू ! हम्मू !' शब्द होता है।**]

**हमीदा .** अब्बा पुताल लहे है, आम, अब्बा।

[**नेपथ्य मे जोर से 'राम ! राम !' शब्द होता है।**]

**राम** माँ बुला लही है, हम्मू, माँ।

[**नेपथ्य मे फिर जोर से 'हम्मू ! हम्मू !' शब्द होता है।**]

**हमीदा . (जोर से)** हाँ, अब्बा!

**नेपथ्य से** अरी कहाँ है, हम्मू! कहाँ ?

**हमीदा (मुस्कराकर राम से)** आम, अब्बा मुधे धूंध लहे है।

**नेपथ्य से . (जोर से)** राम! राम!

**राम : (जोर से)** हाँ, माँ!

**नेपथ्य से . (जोर से)** अरे कहाँ है, राम कहा ?

**राम : (मुस्कराकर हमीदा से)** हम्मू, माँ मुधे धूंध लही है।

**नेपथ्य से : (जोर से घबराहट के स्वर से)** हम्मू! हम्मू! कहाँ है, बोल तो ?

**हमीदा (ताली बजाकर नाचते हुए जोर से)** आम की छत पल अब्बा, आम की छत पल।

**नेपथ्य से** . राम ! राम ! कहाँ है, छत पर है ?

**राम** . (**हमीदा के साथ ताली बजाकर नाचते हुए**) हाँ, माँ, छत पल ही तो हूँ।

**नेपथ्य से** या ख़ुदा !

**नेपथ्य से** . हे भगवान् !

[**राम और हमीदा उसी तरह ताली बजाकर नाचते रहते है। आग की लपटे और नजदीक आती है। सामने की दीवाल पर दीवाल की कारनिस पकड़कर कठिनाई से खुदाबख्श चढ़ता हुआ दीख पड़ता है। धीरे-धीरे खुदाबख्श छत पर पहुँचता है।**]

**हमीदा** (**खुदाबख्श को देखकर हर्ष से चिल्लाकर उसकी तरफ आते हुए**) ओ ! अब्बा ! अब्बा !

**खुदाबख्श** (**क्रोध से**) कम्बख्त, तू यहाँ क्यो आयी ?

**हमीदा** (**मुस्कराते हुए**) थेलने तो, अब्बा, आम ते छात थेलने तो।

**ख़ुदाबख़्श** : (**अपने साफ़े को उतार रेलिग से बाँधते हुए घृणा से**) मरने को बे शऊर।

[**ख़ुदाबख़्श साफ़े को रेलिग से बाँध हमीदा को गोद मे उठाता है।**]

**हमीदा** : औल आम तो इछती अम्मा ले दायगी ?

**राम** : मै अपने पैलों छे छीदी से उतर आता हूँ।

[**राम छत की दाहनी तरफ़ जाने लगता है, जिधर से आग की लपटे आ रही है।**]

**ख़ुदाबख़्श** . हाँ, जा, अपने पैरो से सीढी से उतरकर आ जा।

[राम उसी तरफ बढ़ता है।]

खुदाबख़्श . (उसी तरफ देखते हुए ज़ोर से) ठहर ! राम ! ठहर !

[राम जो आग की लपटो के बहुत नज़दीक पहुँच गया है, रुक जाता है। खुदाबख्श दौड़कर उसी तरफ जाता और उसे दूसरी गोद मे उठा रेलिंग मे बँधे हुए अपने साफे के नज़दीक आकर हमीदा और राम को अपनी दोनो भुजाओ से अपने दोनों तरफ़ के पसवाड़ो मे दाब हाथों से साफे को पकड़ नीचे उतरने का प्रयत्न करता है। दोनो तरफ से आग की लपटे खुदाबख़्श के नज़दीक पहुँच जाती है।]

लघु यवनिका

## तीसरा दृश्य

स्थान : गली

समय : प्रातःकाल

[दृश्य वैसा ही है जैसा पहले दृश्य मे था। अन्तर इतना ही है कि रतना के मकान का बहुत सा हिस्सा जल गया है। आग अब बुझ गयी है। रतना के मकान के नजदीक ही गली के एक किनारे पर राम और हमीदा बैठे हुए है। दोनों के बीच मे मिठाई का एक दोना रखा है और दोनों उस दोने मे मिठाई खा रहे हैं। खुदाबख्श और रतना का प्रवेश।]

खुदाबख्श : (दोनों बच्चों को मिठाई खाते देख मुस्कराकर रतना से) बहन, राम फिर भरष्ट हो रहा है।

रतना (मुस्कराते हुए) नही, भाई, सच्चा धरम सीख रहा है।

खुदाबख्श शर्त यही है कि बडे होने पर भी इसी मजहब को को माने।

[दोनों कुछ देर चुप रहकर एकटक बच्चों की तरफ़ देखते है। बच्चों की पीठ उनकी तरफ रहने के कारण बच्चे उन्हे नहीं देख पाते। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

रतना भाई, तुमने राम की जान बचाकर जो जस मुझ पर

किया है उसे मै

**खुदाबख्श** (**बीच ही मे**) मैंने ? नही, बहन, मैंने तो राम की जान लेने के लिए ऐसी कोई बात नही जो उठा रखी हो। उस परवरदिगार ने उसकी जान बचायी। (**रतना की तरफ़ देखते हुए**) बहन, जब मैं छत पर उसे छोड, और हमीदा को लेकर, आने का इरादा कर रहा था, बल्कि राम को आग से खाक होते हुए जीने से उतरकर आने की सलाह देकर हमीदा को ले उतरने का इरादा कर रहा था, उस वक्त ·····उस वक्त · ··बहन ··· (**चुप हो जाता है।**)

**रतना** · (**खुदाबख्श की तरफ़ देखते हुए**) हाँ, उस वखत, भाई ?

**खुदाबख्श** . उस वक्त · · उस वक्त मै ऐसा · · मै ऐसा कर ही न सका। जैसे किसी ने मुझे ऐसा न करने के लिए मजबूर कर दिया। · ·· बहन बहन· ·· यह खुदा का पैग़ाम था, खुदा का पैगाम।

[**खुदाबख्श चुप हो जाता है। रतना उसकी तरफ़ देखती रहती है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।**]

**खुदाबख्श** . (**कुछ ठहरकर**) खुदा ने राम को मेरे हाथ से बचवाकर तुम्हारे मकान जलाने के मेरे गुनाह को मुआफ कर दिया।

**रतना :** मलेच्छ ने काफिर का मकान जलाया था, भाई खुदा-बख्श ने बहन रतना का नही।

**खुदाबख्श** इन बच्चो ने, बहन, इन बच्चो ने हमे मलेच्छ और काफिर से भाई और बहन बना दिया ।

**रतना** बच्चे कदाचित् मैली आतमाओ को पवित्तर करने की भगवान की देन है ।

**[राम और हमीदा, जो अब मिठाई खा चुके है, उठते और खुदाबख्श और रतना की तरफ़ घूमते है ।]**

**राम . (रतना को देखकर उसी तरफ़ दौड़ते हुए)** माँ ! माँ !

**हमीदा (खुदाबख़्श को देखकर उसी ओर दौड़ते हुए)** अब्बा ! अब्बा !

**[राम को खुदाबख्श और हमीदा को रतना गोद मे उठाते है ।]**

**रतना .** क्यो, बेटा, हम्मू को मिठाई खिलायी ?

**राम** हाँ, माँ, इछने तल मुधे ईद ती छिमइयाँ थिलाई थी, आद मैंने इछे होली ती मिथाई थिलाई है ।

**[खुदाबख़्श और रतना हँस पड़ते है ।]**

**यवनिका**

**समाप्त**

# उठाओ खाओ खाना

अथवा

बफे-डिनर

## मुख्य पात्र, स्थान

### मुख्य पात्र

| | | |
|---|---|---|
| रंगलाल | : | खाना देने वाला मेजमान |
| प्रभावती | : | मेजमान की पत्नी |
| विशुद्धानन्द | : | एक ब्राह्मण मेहमान |
| जोगेन्द्रसिंह | : | एक सिक्ख मेहमान |
| हरीराम | : | एक हरिजन मेहमान |
| रशीदखाँ | : | एक मुसलमान मेहमान |

### स्थान

नयी दिल्ली

### समय

वर्त्तमान

स्थान  नयी दिल्ली मे न० १ के मकान का एक विशाल कमरा

समय  रात्रि

[आधुनिक ढंग का एक विशाल कमरा है। कमरे के बीचों-बीच एक लम्बी टेबिल पर विविध प्रकार की खाद्य-सामग्री सजी है। इसी टेबिल के निकट एक अन्य टेबिल पर चीनी के (फुल साइज के) प्लेट एक दूसरे पर रखे हुए है। इन्ही प्लेटो के निकट एक ओर बड़े छोटे चम्मच और कॉटे रखे है। दूसरी ओर कुछ नेपकिन तह किये हुए रखे है। कुछ खानसामे वर्दी लगाये हुए इधर-उधर खड़े है। कमरे मे बिजली का तेज प्रकाश है। न० १ से ६ तक व्यक्तियों का अनेक स्त्री-पुरुष मेहमानों के साथ प्रवेश। इनमे सभी वर्गो के व्यक्ति है। कोई किसी आयु का है और कोई किसी आयु का। कोई गौर वर्ण है, कोई गेहुँएँ रँग का, कोई सॉवला। कोई शेरवानी और चूड़ीदार पाजामा पहने है, कोई शेरवानी और ढीला पाजामा और कोई पश्चिमी ढंग के वस्त्र। कुछ व्यक्ति खादी का कुरता-धोती पहने है और गांधी टोपी लगाये है। स्त्रियाँ साड़ी और सलूके पहने है तथा आभूषण भी धारण किये हैं।]

जोगेन्द्रसिंह · अच्छा, बफे-डिनर का इन्तजाम है ?

**रंगलाल** जी, हाँ। आजकल सब से नये ढग का यही प्रबन्ध माना जाता है।

**रशीदखाँ :** इस इन्तजाम मे सब से बडी खूबी तो यह है कि आदमी अपनी मशा के मुताबिक जो चीज उसे पसन्द होती है वह ले लेता है। और कोई चीज फिजूल जाया नही होती।

**हरीराम** और टेबिल-कुर्सियो आदि के प्रबन्ध मे जो कठिनाइयाँ आती है और खर्च होता है, वह भी नही होता।

**प्रभावती :** अच्छा, चलिए शुरू किया जाय।

**[सब लोग टेबिल के निकट जा एक-एक प्लेट, एक-एक बड़ा चम्मच, एक-एक काँटा और एक-एक नेपकिन उठा उस प्लेट मे खाने की सामग्री रखते है। और कोई खड़े-खड़े तथा कोई इधर-उधर घूमते हुए खाना आरम्भ करते है। विशुद्धानन्द कोई प्लेट या खाद्य-सामग्री नहीं उठाता और एक मेहमान बालूशाही और एक कचौड़ी उठाकर अपने रूमाल मे बाँध अपने जेब मे रखता है।]**

**प्रभावती ·** **(इस मेहमान के पास जाकर)** कहिए, आप कुछ नही लेगे ?

**मेहमान :** **(जेब का रूमाल निकालकर दिखाते हुए)** नही, मैंने एक बालूसाही और एक कचौडी ले ली है।

**[यकायक एक मेहमान का प्लेट घूम-घूमकर खाने के कारण उलट जाता है। उसके कपड़े बिगड़ते है, फर्श बिगड़ता है**

**ग्रौर उसी के निकट खड़े हुए एक मुसलमान मेहमान के कपड़े बिगड़ते है।]**

**मुसलमान मेहमान** **(चिल्लाकर)** लाहोल बलाकूवत्। यह आपने क्या किया ?

**प्रभावती .** **(दोनों के निकट आकर)** कोई हर्ज नही, कोई हर्ज नही। **(एक खानसामा से)** आप लोगो को बाथ-रूम मे ले जाम्रो। **(दूसरे खानसामा से)** फर्श साफ करो।

**[इन दोनों मेहमानों को एक खानसामा लेकर जाता है और दूसरा फर्श साफ करता है। इसी बीच एक मेहमान अपना अधखाया प्लेट टेबिल पर रख देता है।]**

**प्रभावती :** **(उसके पास जाकर)** क्यो आपने इतनी जल्दी कैसे समाप्त कर दिया ?

**मेहमान :** श्रीमती जी, उठाम्रो खाम्रो खाने का यह मेरा पहला अनुभव है। आपने इतने तो पदार्थ तैयार किये है और छोटा-सा प्लेट। मीठा-नमकीन सब साथ मिल-मिलाकर ऐसा चूं-चूं का मुरब्बा हो गया है कि खाया जाना कठिन है।

**प्रभावती** **(मुस्कराकर)** तो दो प्लेटे ले लीजिए। चलिए मैं ठीक किये देती हूँ। **(टेबिल के निकट जा एक खानसामे से)** साहब के लिए मीठी चीजे एक प्लेट मे और नमकीन दूसरे प्लेट मे इस तरह सजा दो कि अलग-अलग रहे।

**मेहमान :** लेकिन दोनों हाथ मे दो प्लेट ले लूँगा तो खाऊँगा कैसे ?

**प्रभावती :** **(मुस्कराकर खानसामे से)** साहब के दोनों प्लेट दूसरे

कमरे मे ले जाकर एक टेबिल पर रख दो और कुर्सी रख दो। आप बैठकर खायँगे।

[**खानसामा इस मेहमान के लिए दो प्लेट सजाने लगता है।**]

**प्रभावती :** (**विशुद्धानन्द के पास जाकर**) पडित जी, आप कुछ नही खाइयेगा ?

**विशुद्धानन्द :** मै ? मै श्रीमती जी ? (**ज़ोर से**) सुनिए, आप और सुने सब लोग !

[**विशुद्धानन्द के इतनी ज़ोर से बोलने पर सब लोगों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित होता है।**]

**विशुद्धानन्द :** आप पूछती है, श्रीमती जी, मै कुछ नही खाऊँगा ? मै पूछता हूँ खाऊँ क्या ? मेरी तो सारी ज्ञानेन्द्रियाँ, उठाओ खाओ खाने का यह दृश्य देखकर ऐसी तृप्त हुई है कि कर्मेन्द्रियाँ किसी भी कृति के लिए असमर्थ हो गयी है और जो मन प्राणी के सारे कार्यो का संचालन करता है उसमे क्षुधा जैसी वस्तु बाकी नही रही है कि वह खाने की तनिक भी प्रेरणा दे। रंगलाल जी ! प्रभावती जी ! इस उठाओ खाओ खाने का दृश्य जीवन मे मैने पहली बार देखा है।

**जोगेन्द्रसिह :** ऐसा, पडित जी ?

**विशुद्धानन्द :** जी, हाँ, सरदार साहब ! और एक बार देखने के पश्चात् दूसरी बार इसे भगवान् न दिखावे। मै भारतीय संस्कृति का एक छोटा-सा उपासक हूँ। भारतीय सस्कृति मे भोजन का सबसे बड़ा महत्त्व है। यहाँ पवित्र प्रणाली से बना

हुआ पवित्र भोजन, पवित्रता से परोसा हुआ, पवित्र ढग से खाया जाता था।

**हरीराम :** तो आप, पुरानी दलित-गलित छुआछूत का प्रतिपादन कर रहे है ?

**दूसरा मेहमान :** ब्राह्मण ठहरे न।

**तीसरा मेहमान :** फिर नाम है पडित विशुद्धानन्द ।

[**अट्टहास**]

**विशुद्धानन्द :** जी हॉ, मै ब्राह्मण हूँ और अपने नाम के अनुरूप सर्वथा विशुद्ध, जिसे आप मे से कोई ऐसा नही है जो न जानता हो। मुझे ब्राह्मण होने का गर्व है। अपने नाम के अनुसार आचरण पर भी अभिमान है। पर इसी के साथ आप सब यह भी जानते है कि मै दकियानूसी ब्राह्मण नही हूँ और छुआछूत भी नही मानता। मुसलमानो के घर मे मुस्लिम बहनो द्वारा बनाया हुआ निरामिष भोजन मैने अनेक बार किया है। हरिजन भाइयो के घर मे दाल-भात खाया है। दिल्ली के ही नही इस देश के जो कॉग्रेसी भाई मुझे जानते है वे इस बात को भी जानते है।

**एक कॉग्रेसी :** मै पडित जी के सबंध मे इस बात की तो कठ-पर्यन्त गगाजल में खडे होकर गवाही दे सकता हूँ।

[**अट्टहास**]

**विशुद्धानन्द :** परन्तु, छुआछूत न मानना किसी भी जाति के हाथ का बनाया अथवा लाया हुआ भोजन यदि शुद्ध हो तो उसे खा लेना एक बात है और इस उठाओ खाओ खाने मे

खाना एक दूसरी बात।

**रशीदखाँ** . यह कैसे, पडत जी ?

**विशुद्धानन्द** : वही बताता हूँ, मौलाना साहब। इस उठाओ खाओ खाने मे खाना एक दूसरे की जूठन खाना है और मै अपनी पुत्री तथा पुत्रादि का भी जूठा खाने के लिये तैयार नही। जरा देखिये तो ! इस उठाओ खाओ खाने का दृश्य ! जरा-जरा से चीनी के प्लेट, उसमे अनेक प्रकार का थोडा-थोडा-सा खाना, ज्यादा रखने की गुजाइश नही। किसी को किसी वस्तु की फिर आवश्यकता हो तो अपने पूरे प्लेट को टेबिल पर रख जूठे हाथ से अनेक वस्तुओ को चम्मच से और पूरी आदि वस्तुओ को जूठे हाथ से ही उठा-उठाकर अपने प्लेट मे रखते जाना यह धार्मिक दृष्टि से ही नही, पर आरोग्यता जिसे हम हाईजीन कहते है, उस दृष्टि से भी सर्वथा अनुचित है।

**एक डाक्टर मेहमान : (सिर हिलाते हुए)** यह तो पडित जी कुछ दूर तक ठीक कह रहे है।

**विशुद्धानन्द** फिर जरा भोजन को स्वाद की दृष्टि से भी देखिए।

**हरीराम** : जो ब्राह्मणो के लिए सबसे प्रधान वस्तु है।

**विशुद्धानन्द** : जी हाँ। भारतीयो मे इस प्रकार के भोजो के अवसर पर बड़े-बडे थालों मे सामग्री आती है। पृथक्-पृथक् वस्तु के पृथक्-पृथक् स्वाद का आनन्द मिलता है। पश्चिमी भोजों मे यदि प्लेट छोटे रहते है तो एक बार मे एक वस्तु ही परोसी जाती है। यहाँ छोटे से छोटे प्लेट मे जैसा अभी

मेरे एक भाई ने कहा, मीठे नमकीन सब का चूँ-चूँ का मुरब्बा।

**कुछ व्यक्ति : (एक साथ)** हाँ, यह तो ठीक है।

**विशुद्धानन्द :** यदि कोई भारतीय ढग से जमीन पर अथवा पश्चिमी ढग से टेबिल पर बिठाकर भोजन और खाने का प्रबन्ध नही कर सकता तो भोज आदि देवे ही क्यों? इस देश मे सैकड़ो नही सहस्रो की पगत होती है। खड़े-खड़े घूमते हुए खाना। कैसा वीभत्स दृश्य देखा अभी हम सब ने जब एक भाई का प्लेट ही उलट गया। एक पुरानी कथा आपको बताऊँ।

**एक मेहमान :** हाँ, कथावाचक भी तो रहे है पडत जी।

**विशुद्धानन्द :** जी हाँ, और उसका भी मुझे कम गर्व नही है। यह सारी सृष्टि अनादि काल से मानवो के जीवन की कथा ही तो रही है और अनतकाल तक रहने वाली है। उस कथावाचन से श्रेष्ठ और कौनसा कर्म हो सकता है? मै कथावाचक रहा हूँ, अभी भी हूँ, और जीवनपर्यन्त रहने वाला हूँ। जो कथा मै आपको बता रहा था वह है भोज के समय की। एक दिन की सभा मे राजा भोज ने सभा मे आने वाले हर सभ्य को मूर्ख कहना आरम्भ किया। आने वालो मे एक आशुकवि भी थे। उन्होंने मूर्खों के चार प्रधान लक्षणो का उसी समय एक श्लोक बना दिया और कहा कि इन चार लक्षणों मे कोई भी मुझ पर लागू नही होता। अतः हे राजन्, मै मूर्ख क्यो? उन चार लक्षणों मे एक था

"खादन न च्छामि" अर्थात् मै चलते हुए नही खाता।

**एक मेहमान** : तो आपकी दृष्टि से हम सब मूर्ख है।

[**अट्टहास**]

**विशुद्धानन्द** . यह तो छोटे मुँह बड़ी बात कहना होगा। पर इस उठाओ खाओ खाने के आयोजन को मै मूर्ख-आयोजन अवश्य कहूँगा, इतना ही नही, आरोग्यता के सिद्धान्तो के विपरीत अपवित्र और वीभत्स आयोजन। इस उठाओ खाओ खाने के दृश्य को पहली बार ही देखने के पश्चात् मेरे मन मे ऐसी ग्लानि की उत्पत्ति हुई है कि मै इसके विरोध मे एक आन्दोलन आरम्भ करूँगा।

**जोगेन्द्रसिह** : इक्क दो तीन।

[**अट्टहास**]

**विशुद्धानन्द** : मै बैठक खाने मे बैठता हूँ। आप लोग भोजन कर पधारिए।

**प्रभावती** : आपके लिए, पंडत जी मै अलग थाल लगवा देती हूँ, आप बैठकर भोजन करिए।

**विशुद्धानन्द** : नही, आज नही, श्रीमती जी। मैने आरम्भ में ही कही थी अपनी ज्ञानेन्द्रियो, कमेन्द्रियों और मन की अवस्था, फिर कभी आकर खा जाऊँगा। मेरा तो यह घर ही है। (**प्रस्थान**)

[**सब का खाना बंद सा हो जाता है। एक विचित्र प्रकार की निस्तब्धता।**]

**रंगलाल** : पंडित जी के सदृश आदमी भी सठिया जाता है।

**[कुछ देर निस्तब्धता।]**

**रगलाल :** हम लोगो ने भी खाना क्यों बद कर दिया ? हम लोग तो भोजन समाप्त करे।

**[फिर कुछ देर निस्तब्धता।]**

**एक महिला : (अपने प्लेट को टेबिल पर रखते हुए)** मुझसे तो अब न खाया जायगा।

**[प्राय. सभी महिलाएँ और अनेक व्यक्ति अपने-अपने प्लेट टेबिल पर रख देते है।]**

**यवनिका**

**समाप्त**

# बूढ़े की जीभ

## मुख्य पात्र

| | | |
|---|---|---|
| हुकुमचन्द | : | एक वृद्ध रईस |
| सरदारमल | : | हुकुमचन्द का पुत्र |
| अनोखेलाल | : | हुकुमचन्द का वैद्य |
| अन्य पात्र | : | हुकुमचन्द का रसोइया और नौकर |

स्थान : हुकुमचन्द के मकान का एक कमरा

समय · सन्ध्या

[कमरे की तीन तरफ़ की दीवालें दिखती है, दीवालो में ज़मीन से पाँच फुट ऊपर तक रंगीन बेल-बूटेदार ईंटों का 'डेडो' है। उसके ऊपर दीवालें आसमानी रंग से रँगी हुई है। रंग में किनारबन्दी और किनारो के कोनो पर रंगीन फूल-पत्तियाँ बने है। तीनों दीवालों मे कई दरवाज़े और खिड़कियाँ है, जिनसे बाहर के उद्यान का कुछ भाग दिखायी देता है। कमरे की छत पर चूने की नक़्क़ाशी है और उस नक़्क़ाशी की बेलो और फूलों पर भिन्न-भिन्न रंग। छत से बिजली की बत्तियाँ और पंखे झूल रहे है, बत्तियों पर सुन्दर 'शेड' है। कमरे की ज़मीन पर रंगीन संगमरमर लगा है। ज़मीन से पीछे की दीवाल के नज़दीक ऊपर की मंज़िल पर जाने के लिए लकड़ी का ज़ीना है। कमरे के बीच में एक बड़ा-सा रेशमी क़ालीन बिछा है। इस क़ालीन पर गद्दीदार सुन्दर सोफ़ा-सेट सजा है। सोफ़ा-सेट के बीच में एक बड़ी-सी टेबिल है, जिस पर रेशमी फूलदार मेज़पोश है। टेबिल पर रंग-बिरंगे पुष्पों से भरा हुआ गुलदस्ता है। और भी कुछ छोटी-छोटी टेबिलें यत्र-तत्र रखी है। बाँयीं ओर की दीवाल

के नज़दीक ही एक छोटा-सा रेशमी ग़लीचा बिछा है, जिस पर पलँग रखा है। पलँग के पाये चाँदी के हैं और उस पर स्वच्छ शैया है। बाँयीं ओर की दीवाल के नज़दीक भोजन करने के लिए दो पटे रखे हैं—एक बैठने और दूसरा थाल रखने के लिए। पटे पर हुकुमचन्द बैठा हुआ भोजन कर रहा है। हुकुमचन्द की अवस्था लगभग ६५ वर्ष की है। उसका रंग गेहुँआँ है और शरीर साधारण ऊँचा, पर बहुत ही दुबला। वह केवल धोती पहने है। ऊपर का शरीर खुला है। शरीर की एक-एक हड्डी दिखती है। सिर, मूँछों और भवों के छोटे-छोटे बाल तथा शरीर की रोमावली सब सफेद हो गये हैं। उसके सामने भोजन की बहुत प्रकार की सामग्री रखी हुई है। हुकुमचन्द बहुत झुक-झुक ध्यान-पूर्वक देख-देखकर खाता है, जिससे जान पड़ता है उसे बहुत कम दिखायी देता है। वह बोलता ज़ोर से है और कठिनाई से सुनता है, जिससे मालूम होता है कि उसकी सुनने की शक्ति भी बहुत कम हो गयी है। सारे संभाषण मे हुकुमचन्द बराबर खाता रहता है। उसके पास ही उसका नौकर खड़ा है। नौकर की उम्र करीब चालीस वर्ष की है। वह काले रंग का कुछ ठिंगना और दुबला मनुष्य है। घुटनों तक चढ़ी हुई धोती को छोड़कर और कोई वस्त्र शरीर पर नहीं है।]

**हुकुमचन्द :** (ज़ोर से) इतनी देर! बघार लगाने मे इतनी देर लग गयी! यदि चूल्हे मे आग है तो करछुली को तपने मे कितनी देर लग सकती है? अगर चौके मे घी, हीग और जीरा है तो दाल के छौकने मे इतनी देर का काम क्या?

जा, हल्कू, जा, देख तो।

[**हल्कू का जीने से ऊपर की मंजिल को प्रस्थान।**]

**हुकुमचन्द :** (**अपने आप**) यह रसोइया बिलकुल बेकाम हो गया है। एक घंटे के काम में दस घंटे लगाता है। दाल में बघार ही तो देना था। दाल कुछ सिजाना थोड़े ही थी। करछुली तपाकर उसमें घी डालने भर का काम था। ठीक तरह करछुली तप गयी होती तो घी कड़कड़ाने लगता। कड़कड़ाते हुए घी में हींग और जीरा ही तो डालना था और फिर उस करछुली को दाल में। इसमें इतनी देर!

[**हल्कू के साथ रसोइये का ऊपर से प्रवेश। रसोइये की अवस्था लगभग पचास वर्ष की है। वह गौरवर्ण का ठिंगना पर बहुत मोटा मनुष्य है। बाल सफेद हो चले हैं। कमर में एक मैला-सा गमछा बाँधे है और कन्धे पर अत्यन्त मैला यज्ञोपवीत दिखता है। वह एक रकाबी में चावल और दाल की कटोरी लिये है। इन्हें वह पटे पर रखता है।**]

**हुकुमचन्द :** (**ध्यानपूर्वक चावल की रकाबी और दाल की कटोरी को देखकर, ग़ौर से रसोइया को देखते हुए**) महाराज, इतनी देर का क्या काम था? दाल में बघार देने में घंटों! इतने से काम में तो इतनी देर लग नहीं सकती थी। चूल्हे में आग तो होगी ही। करछुली आग में रखने का ही तो काम था। तेज आग में करछुली को तपते क्या देर लगती है? उसके तपने के बाद उसमें थोड़ा-सा घी ही तो डालना था। जाड़े का मौसम भी नहीं कि घी जम गया

हो। पिघले हुए घी को गरम करछुली मे कडकडाते क्या देर लग सकती थी ?,और घी कडकडाने के बाद उसमे हीग और जीरा ही तो डालना था।

**रसोइया :** सरकार .....

**हुकुमचन्द :** महाराज, आपका मन अब काम मे नही लगता। किसी दिन भी तो रोटी ठीक नही बनती। कभी दाल मे बघार नही तो कभी आलू के रसे मे दही नदारत। कभी अरबी मे पूरा घी नही तो कभी परवल मे बीजे ही बीजे। कभी करेला कडुआ तो कभी भिडी छिली नही। कभी लौकी कडुई तो कभी ककडी कानी। कभी रायते मे पूरी राई नही तो कभी श्रीखड मे जायफल लापता। कभी कचौरी मे गरम मसाला नही तो कभी समोसे ठडे। कभी पूरनपूडी का पूरन गायब तो कभी मिस्सी रोटी मे बेसन ही बेसन। कभी भजिये चीठे तो कभी पकोड़े कड़े। कभी कलाकन्द मे रवा नही तो कभी पेडे मे शक्कर ही शक्कर। कभी मलाई मे ठीक तरह से गुलाब नही तो कभी बिना लच्छे की रबड़ी, मानो दूध ही दूध।

**रसोइया :** हुजूर......

**हुकुमचन्द :** रसोइयाजी, काम मे मन न लगता हो तो इस्तीफ़ा दे दो। ऐसी रद्दी रोटी तो मैंने जनम करम मे नही खायी। तनखाय देने को पैसे होगें तो एक नही, दस रसोइये आ जायँगे। घी, शक्कर, सीधा-सामान, साग, भाजी, दूध, दही के लिए पास मे टके होंगे तो जो चाहे सो

बनवा लूंगा। आप यह न सोचिए कि आपको ही रसोई बनानी आती है। पिरथी निर्बीज नहीं हो गयी है। पचासो और सैकडो रसोइये जूतियाँ चटकाते हुए घूमते फिरते है। मै तो यह सोचता था कि पुराने आदमी है। जाने दो, भाई, जाने दो, पर बरदास की हद होती है, महाराज, कहाँ तक सहूँ ? एक दिन की बात हो तो हो। जब तक जीना है तब तक खाना तो पडेगा ही। जाइए, पापड लाइए।

[**रसोइये का प्रस्थान।**]

**हुकुमचन्द : (अपने आप)** तनखाय लगती है, सामान खरच होता है, और रसोई का यह हाल! घी आग जलाने को झौकते होगे। शक्कर चोरी जाती होगी। साग-भाजी के पैसों मे से खा जाते होंगे। तब रसोई ठीक बने तो कैसे बने ? रोज रसोई की पचायत! सुबह के कलेऊ मे गड-बड़। दोपहर का भोजन ठीक नही। तीसरे पहर के तिप-हरे मे गड़बड़। शाम की ब्यालू बुरी। रात का दूध तक खराब। हर बखत कोई न कोई चकल्लस लगी ही रहती है।

[**रसोइये का प्रवेश। वह पापड़ परसता है।**]

**हुकुमचन्द :** देखो, महाराज, आज अखीरी बखत कहे देता हूँ। रोज-रोज मुझसे यह हाय-हत्या न होगी। इसी हाय-हत्या के मारे जो थोड़ा-बहुत खाता हूँ, वह भी अंग नही लगता। लगे कहाँ से ? खून तो खौलने लगता है। ठडा खून रहे, उसमे खाना पहुँचे तो हजम हो। हजम हो तो खून बने। इसी परेशानी के मारे शरीर की हड्डी-हड्डी निकल आयी

है। अब अगर कलेऊ, भोजन, तिपहरे, ब्यालू रात के दूध किसी मे भी गड़बड़ हुई तो मुझसे बुरा कोई न होगा। एक मिनिट मे मैं टीनपाट कसवा दूँगा। दोनो कान खोलकर सुन लो, दोनो कान !

[हुकुमचन्द उठता है। कमर झुक जाने के कारण झुककर चलता है। हल्कू हाथ पकड़कर धीरे-धीरे बाँयीं ओर के एक दरवाज़े से उसे बाहर ले जाता है। रसोइये का प्रस्थान। दाहनी ओर के एक दरवाज़े से सरदारमल और अनोखेलाल का प्रवेश। सरदारमल की अवस्था लगभग ३५ वर्ष की है। उसका रंग गोरा है। वह ऊँचा-पूरा, मोटा-ताज़ा साधारणतया सुन्दर मनुष्य है। लंबे बाल और छोटी-छोटी मूँछें हैं। वह सफ़ेद कुरता और धोती पहने है, किन्तु नगे सिर है। अनोखेलाल की अवस्था लगभग ४५ वर्ष की है। वह गेहुँएँ रंग का ऊँचा, किन्तु दुबला मनुष्य है। सिर और मूँछों के बाल कुछ-कुछ सफ़ेद हो चले है। वह टसर की शेरवानी और सफ़ेद पाजामा पहने है। सिर पर कश्मीरी कामदार टोपी है।]

**अनोखेलाल :** तो अब तक कोई लाभ नही है, कुमर साहब ?

**सरदारमल :** कोई नही, वैद्य जी, दस्त होते ही जाते है।

**अनोखेलाल :** जब तक उनका अन्न न बद किया जायगा, तब तक दस्त बद होना कठिन है।

[दोनों दो कुर्सियों पर बैठ जाते है। हुकुमचन्द को हाथ पकड़े हुए हल्कू लाता है और सावधानी से एक कुरसी पर बैठाता है। हल्कू का प्रस्थान।]

**सरदारमल : (ज़ोर से)** बाबूजी, वैद्यजी आये है।

**हुकुमचन्द : (ज़ोर से)** कौन ? कौन ? कौन आया है, बेटा ?

**सरदारमल : (और ज़ोर से)** वैद्यजी, बाबूजी।

**हुकुमचन्द · (ज़ोर से)** बैदजी, अच्छा, अच्छा। कहाँ है, बेटा ?

**सरदारमल (ज़ोर से)** यही आपके सामने बैठे है, बाबूजी।

**हुकुमचन्द . (ज़ोर से)** कहाँ ? कहाँ, बैठे है ?

**सरदारमल (और ज़ोर से)** आपके सामने ही तो, बाबूजी।

**अनोखेलाल : (ज़ोर से)** आपके सामने ही तो हूँ, लाला साहब।

**हुकुमचन्द** अच्छा, अच्छा, मुझे कुछ कम दिखने लगा है, बैदजी। क्या कहूँ ? भोजन कम हो गया है तब आँख की जोत कैसे ठीक रहे। आँख की जोत तो घी से रहती है। घी पेट मे पहुँचता ही नही। और जो पहुँचना है सो हजम नही होता।

[**हल्कू का रकाबी लेकर प्रवेश। रकाबी मे पान, किमाम, मसाले की सुपारी, इलायची, लौंग, जायपत्री बहुत सी चीज़ें है। वह एक छोटी टेबिल उठा, उसे हुकुमचन्द के बहुत नज़दीक रख, उस पर रकाबी रखता है।**]

**हल्कू · (ज़ोर से)** पानदान रखा है, हुजूर। **(प्रस्थान)**

**हुकुमचन्द · (पान उठाकर खाते हुए)** हाजमा तो इतना बिगड़ गया है, बैदजी, कि ठिकाना ही नही। कुछ भी खाता हूँ तो पेट मे घुडदौड-सी मच जाती है। फिर गरड-गरड गाड़ी-सी चलती रहती है। कभी-कभी पेट फूलकर नगाडा हो

जाता है। बुरी-बुरी डकार। और जब देखो तब भूख लगी हुई।

**अनोखेलाल** · यह सब, लाला साहब, अवस्था के कारण है।

**हुकुमचन्द** : (**ज़ोर से**) क्या, क्या, क्या कहा आपने ? मै कुछ ऊँचा भी सुनने लगा हूँ।

**अनोखेलाल** : (**ज़ोर से**) मैंने कहा कि कम दिखाना, कम सुनना, हाजमे का खराब होना, यह सब अवस्था के कारण है।

**हुकुमचन्द** : अवस्था के कारन ! अवस्था के कारन ! क्या कहते हैं, बैदजी ? मेरे पिता अस्सी साल की उमर मे नजदीक से नजदीक लिखा हुआ पोस्टकार्ड बिना चश्मे के पढते थे। मेरी माँ पचासी साल की उमर मे बिना ऐनक लगाये सुई मे डोरा पिरो देती थी, और वह भी रात को। मेरे दादा नब्बे साल के होकर मरे, पर कान के इतने सच्चे थे कि अगर कमरे मे तिनका भी गिर पडे तो उसकी आवाज तक उनके कान मे पहुँच जाती थी। इसका कारन था, बैदजी, उन सबकी खुराक थी। अच्छा हाजमा था। पिताजी अस्सी साल की अवस्था मे सवेरे पूरे डेढ सेर दूध और आध सेर पूरी का कलेवा करते थे। दोपहर को भोजन के साथ खिचडी बनती थी। उसमे आध सेर घी रहता था। तीसरे पहर के तिपहरे मे बारो महीने डेढ पाव बादाम और डेढ पाव पिस्ते तलवाकर उसमे सेधा नमक और काली मिरच भुरकाकर खाते थे। (**मुँह में पानी आ जाता है, उसे**

**गुटकते हुए)** शाम को ब्यालू मे हमेशा पराठे रहते थे और वे भी पूरे तीन पाव। और इस सबके ऊपर, बैदजी, रात को सोते बखत अढाई सेर दूध की रबडी पीते थे।

**अनोखेलाल** : परन्तु आपका हाजमा ··

**हुकुमचन्द** : क्या कहा मेरे दादा ? उनका तो पूछिए मत। वे नब्बे साल तक जिये, लेकिन नब्बे साल की उमर मे भी पट्ठे दिखते थे, पट्ठे। उनकी ख़ुराक······

**अनोखेलाल** **(बहुत ज़ोर से)** मैं कह रहा था कि आपका तो हाजमा ठीक नही है।

**हुकुमचन्द** · **(ज़ोर से)** हल्कू ! ओ हल्कू !

**[हल्कू का दौड़ते हुए प्रवेश। वह हुकुमचन्द के बहुत निकट खड़ा होता है।]**

**हुकुमचन्द** : कौन ?

**हल्कू** : **(ज़ोर से)** मै हूँ, सरकार।

**हुकुमचन्द** : अबे तू कितना भूलता है ? रकाबी मे न ताबूल-बिहार है न पिपरमेट। मुझे पान खाना है, या घास ?

**[हल्कू दौड़कर जाता है।]**

**हुकुमचन्द** : **(अनोखेलाल से)** आपने क्या कहा मेरा हाजमा ठीक नही ? पर, बैदजी, इसे ठीक करने की ज़िम्मेदारी किस पर है ? आप पर। आपकी दवा······

**अनोखेलाल** : आपको अन्न छोडना होगा, लाला साहब।

**[हल्कू तांबूलबिहार और पिपरमेंट की शीशी रकाबी में रखकर जाता है।]**

**हुकुमचन्द : (ज़ोर से बिगड़कर)** क्या, अन्न छोडना पडेगा ! अजी, बैदजी, इसका नाम न लेना । अन्न छोडना पडेगा ! अन्न छोड दूँगा तो अभी उठ-बैठ तो लेता हूँ, फिर तो हिल-डुल भी न सकूँगा । अन्न छोडना पडेगा ! अजी खाता ही क्या हूँ, कि अन्न छोड दूँ ? पिताजी जितना खाते थे उससे तो सब मिलाकर आधा भी पेट मे न जाता होगा । दादाजी जितना खाते थे, उससे चौथाई नही । फिर उनसे तो मेरी उमर भी कम है । अन्न छोडना पडेगा ! आपकी दवा कार नही करती है तो बेचारे अन्न पर आफत ! अजी, बैदजी, आप लोग इलाज करना नही जानते । मुझे याद है अपने पिताजी की दो बीमारियो की । उस समय इस शहर मे शकररावजी बैद थे । क्या पूछना । दूर-दूर उन-सा बैद न था । वे जहाँ पहुँचे, बीमारी भागी । दवा देने की जरूरत ही नही । उनके दर्शन से बीमारी भागती थी, दर्शन से । पिताजी को एक बार दस्त हुए । दिन मे डेढ-डेढ सौ दस्त । वे एक तो कभी बीमार होते ही नही थे फिर थोडी-बहुत बीमारी मे बैद, डाक्टर को न बुलाते थे । जब दस्त बहुत बढे तब हम लोगो ने जबर्दस्ती शकररावजी को बुलाया, उन्होने फिर भी नही । डेढ-डेढ सौ दस्त लगते थे, बैदजी, डेढ-डेढ सौ । आप मानेगे नही, पर आँखो देखी बात बताता हूँ, आँखो देखी । शकररावजी ने आते ही एक खुराक दवा दी, ओरसे पर घिसकर । और एक खुराक से दस्त बन्द । डेढ-डेढ सौ दस्त गायब । दूसरे दिन बँधा ठोस पाखाना ।

(**कुछ रुककर**) एक दफा पिताजी को बुखार आया। क्या कहूँ ऐसा बुखार कि दिन और रात उतरना ही न था। बडी मुश्किल से शकररावजी बुलाये गये। एक खुराक शहद मे मिलाकर चटायी। एक ही खुराक से पसीने की धारे लग गयी, धारे। घडो पसीना निकला होगा, बैदजी, घडो। बिस्तर की चादर नही, गद्दा तक भीग गया। एक खुराक मे बुखार रफूचक्कर और फिर तारीफ यह कि उसके बाद दस साल तक बुखार न आया। अजी, बैदजी, इलाज क्या जादू था, जादू। दवा आपकी न लगे और अन्न बन्द कर दो! यह भी कोई ···· (**जोर से**) हल्कू! ओ हल्कू!

[**हल्कू का दौड़कर प्रवेश। वह बहुत नजदीक जाकर खड़ा हो जाता है।**]

**हुकुमचन्द** : कौन ···· कौन· · हल्कू ?

**हल्कू** : जी हजूर।

**हुकुमचन्द** : चल, ले तो चल, मै पाखाने जाऊँगा (**हल्कू हाथ पकड़कर उठाता है। जाते-जाते**) बैदजी, अभी आप मेरी बीमारी का निदान ही नही कर सके है। अन्न बन्द कर दो! (**रुककर**) अजी अन्न बन्द करना आजकल खेल-तमासा हो गया है। पहले जमाने मे एक तो अन्न बन्द किया ही न जाता था और अगर किया जाता था तो बडी कडी बीमारियो मे। मुझे तो दस-बारह दस्त ही होते है। मैने बताया न आपको, पिताजी को एक बार डेढ-डेढ सौ दस्त

हुए थे, डेढ-डेढ सौ। शकररावजी ने अन्न बन्द करने की बात भी न सोची थी ? अन्न बन्द करना कोई सहज बात है ! इस उमर मे आप अन्न बन्द करा देंगे तो फिर वह कभी शुरू भी होगा ? (**आगे बढ़ता है। फिर रुककर**) और फिर अन्न बन्द हो गया तो दस्त आपसे आप बन्द हो जॉयगे। आपने उसमे किया ही क्या ? दवा से फायदा थोडे ही हुआ। आप तो अन्न बन्द करने की बात करते हैं, शकररावजी तो परहेज तक न कराते थे। बिना परहेज के, सुना, बैदजी, बिना परहेज के अच्छा करते थे। (**जाते-जाते**) सोचिए, बीमारी का निदान तो कीजिए। अन्न बन्द करदो ! अन्न बन्द !

[**हुकुमचन्द का हल्कू के साथ प्रस्थान। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।**]

**सरदारमल :** निदान के सम्बन्ध मे आपने विचार किया, बैदजी ?

**अनोखेलाल :** बहुत अच्छी प्रकार, कुमर साहब।

**सरदारमल ·** अच्छा।

**अनोखेलाल :** चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट यह सब ग्रन्थ मैंने अच्छी प्रकार देख डाले।

**सरदारमल :** ठीक।

**अनोखेलाल :** लाला साहब को जीभ की बीमारी है, कुमर साहब।

**सरदारमल :** जीभ की बीमारी !

**अनोखेलाल :** हॉ, जीभ की बीमारी।

**सरदारमल** : अर्थात् ?

**अनोखेलाल** : अर्थात् उनकी पाँच कर्मेन्द्रियो और पाँच ज्ञानेन्द्रियो मे नव इन्द्रियों ने अपना सारा कार्य बन्द कर अपना समस्त बल एक जीभ को दे दिया है।

**सरदारमल** : नवों इन्द्रियों ने अपना सब काम बन्द कर अपना सारा बल जीभ को दे दिया है !

**अनोखेलाल** : जी हाँ। नव इन्द्रियाँ एकदम निर्बल और दसवीं इन्द्रिय अत्यधिक बलवान है।

**सरदारमल** अच्छा।

**अनोखेलाल** : फल यह हुआ कि जीभ की आहार और वक्तृत्व दोनो शक्तियाँ अत्यन्त बलिष्ठ हो गयी है।

**सरदारमल** : हाँ, सो तो दिखता ही है। दिन-रात तरह-तरह का भोजन बनवाया जाता है और फिर भी रसोइये पर डाँट पर डाँट। बात तो किसी की सुनते ही नही अपनी ही कहते है।

**अनोखेलाल** · मनुष्य के दो कान और जीभ इसलिए होते है कि वह अधिक सुने और कम बोले, परन्तु यहाँ ··यहाँ तो नवो इन्द्रियाँ का सारा पुरुषार्थ अकेली जीभ को मिल गया है।

**सरदारमल** : यह तो विचित्र बीमारी है।

**अनोखेलाल** : नही, इस अवस्था में नव इन्द्रियाँ शिथिल और जीभ सभी की बलशाली हो जाती है, परन्तु · परन्तु ······ **(चुप हो जाता है।)**

**सरदारमल** : परन्तु ?

**अनोखेलाल** : परन्तु यदि वह इतनी शक्तिशाली हो जाय जितनी

आपके पिताजी की हो गयी है तब तो····· तब तो· · ·
**(चुप हो जाता है।)**

**सरदारमल : (उत्सुकता से अनोखेलाल की ओर देखते हुए)**
तब तो ?

**अनोखेलाल : (सरदारमल की ओर देखते हुए)** तब · तब तो
रोग असाध्य हो जाता है।

**सरदारमल : (आश्चर्य से)** असाध्य, वैद्यजी !

**अनोखेलाल :** हाँ, असाध्य, कुमर साहब।

**[दोनों एक दूसरे को देखते है।]**

**यवनिका**

**समाप्त**

# चौबीस घंटे

## पात्र, स्थान, समय

| | | |
|---|---|---|
| पात्र | : | एक वृद्ध, उसके दो पुत्र, उनका नौकर |
| स्थान | : | एक नगर |
| समय | : | जब रेडियो मे चौबीसो घटे ब्रॉडकास्ट करने की घोषणा की |

स्थान : वृद्ध के मकान का बैठकखाना

समय : प्रातःकाल

[बैठकखाना आधुनिक ढंग से सजा हुआ है। कमरा और सजावट को देखने से मालूम होता है कि किसी सम्पन्न मध्यम श्रेणी के व्यक्ति का मकान है। एक सोफा पर एक वृद्ध बैठा हुआ एक चिट्ठी पढ़ रहा है, उसके निकट ही कुर्सी पर उसका बड़ा पुत्र बैठा हुआ एक अंग्रेजी की पुस्तक पढ़ रहा है। मन्द स्वर से रेडियो में एक सितार की गत बज रही है। छोटे पुत्र का हाथ में अखबार लिये हुए प्रवेश।]

**बड़ा पुत्र :** (भाई के आने की आहट पाकर उस ओर देखते हुए) कहो, क्या नयी खबर है ?

**छोटा पुत्र :** और तो कुछ नया नही, इटली की वही हालत है, मुसोलिनी का भी कोई खास पता नही, रूस की लडाई की भी करीब-करीब वही स्थिति है; सेन्ट्रल असेम्बली चल ही रही है; हाँ, एक नयी बात अवश्य है।

**बड़ा पुत्र ·** कौन सी ?

**छोटा पुत्र :** आल इंडिया रेडियो अब चौबीस घटे ब्राडकास्ट करेगा।

**[वृद्ध की दृष्टि एकाएक चिट्ठी पर से हट जाती है और वह बड़ी क्रूरता-भरी दृष्टि से दोनों पुत्रों की ओर देखता है।]**

**वृद्ध (ऊँचे स्वर से)** बसी! ओ बसी!

**नेपथ्य से** · आया, सरकार।

**बड़ा पुत्र : (अपने भाई से)** अच्छा, कब से चौबीस घंटे ब्रॉडकास्ट होगा।

**छोटा पुत्र** आज पहली अगस्त तेतालीस से ही।

**[नौकर का प्रवेश।]**

**वृद्ध : (नौकर से)** बसी, जल्दी से मेरा सामान तो बाँध दे····देख कोई भी चीज रह न जाय। कुछ कपड़े, बिस्तर की सारी चीजे ···।

**बड़ा पुत्र : (वृद्ध से)** क्यो, बाबू जी, कही जा रहे है?

**वृद्ध : (क्रोध से)** जी हाँ, अभी फौरन, बिना देर के, और कभी लौटने वाला भी नही।

**बड़ा पुत्र . (घबड़ाकर)** क्यो · ···क्या हुआ···· क्या हुआ, बाबू जी?

**छोटा पुत्र . (घबड़ाकर)** हाँ, क्या हुआ, बाबू जी?

**वृद्ध : (उसी प्रकार क्रोध से)** आज से चौबीस घंटे ब्रॉडकास्ट होगा न? नही, बाबा, नही, मै यहाँ अब एक मिनिट नही रह सकता। सुबह से आधी रात तक तो यह रेडियो चलता ही था और न जाने क्या · ···क्या, आधी रात तक इसके मारे चैन न मिलती थी। यो महफिल होना बुरा है, अच्छी-से-अच्छी गाने वाली रडियो का गाना सुनना पाप, पर

रेडियो मे गानेवाली अच्छी-बुरी किसी भी किसबी का गाना सुनना धर्म । फिर बर्लिन बजता है, रोम रोता है। सरकारी मुमानियत होने पर भी यह छुपे-छुपे सुना जाता है। कोई पुलिस वाला सुन ले तो अभी सब-के-सब बँधे-बँधे फिरे और अब चौबीसो घटे ब्रॉडकास्ट होगा। ..... या तो मैं इस मकान मे रह सकता हूँ, या रेडियो, दोनो नही, कभी नही, कभी नही, (**जल्दी से उठकर रेडियो के पास जाते हुए**) हरगिज नही ! (**रेडियो दोनों हाथों से उटाकर**) चौबीस घटे ब्रॉडकास्ट !

[**दोनों पुत्र जल्दी से उठकर वृद्ध के निकट पहुँच जाते है।**]

**बड़ा पुत्र** : पर सुनिए, सुनिए, बाबूजी, चौबीस घटे का मतलब है .....

**वृद्ध** · (**रेडियो उठाये-उठाये ही दाँत पीसते हुए बीच ही में**) चौबीस घटे का मतलब होता है चौबीस घटे।..... चौबीस घटे · चौबीस घटे ।

**यवनिका**

**समाप्त**

महाराज

पूर्वार्द्ध

## मुख्य पात्र, समय

**महाराज** : एक रसोइया

**सेठानी** : एक व्यापारी की पत्नी

**समय** : आधुनिक

स्थान : एक हिन्दू-रसोईघर

समय : मध्याह्न

[तीन ओर की दीवालें दिखती हैं। पीछे की दीवाल से सटा एक छोटा-सा चबूतरा दिखायी देता है; इस चबूतरे के एक तरफ़ एक चूल्हा बना है। दाहिनी और बॉयीं दीवालो के सिरो पर एक-एक दरवाजा है, जिनके लकड़ी के किवाड़ बन्द हैं। छत पर पत्थर का पटाव है और ज़मीन गोबर से लिपी है। महाराज चबूतरे पर खड़ा है। महाराज की अवस्था करीब चालीस वर्ष की है। वह गौर वर्ण का, ऊँचा-पूरा साधारण शरीर का व्यक्ति है। सिर पर गोखुर के नाप की चौड़ी शिखा है। शिखा के सिवा सिर के तथा मूँछों-दाढ़ी के बाल मुंड़े हैं। मस्तक पर त्रिपुण्ड है। ऊपर का शरीर नंगा है, जिस पर यत्र-तत्र भस्म के त्रिपुण्ड दीख पड़ते है और बाँयें कन्धे से कमर तक एक मोटा यज्ञोपवीत। नीचे के शरीर पर लाल रंग का सोला है। उसके बायें हाथ में ताँबे का एक कलश है और दाहिने हाथ में एक कुश। कुश को कलश में डाल-डाल कर वह चबूतरे की धरती का मार्जन कर रहा है। उसकी काष्ठ की पादुकाएँ चबूतरे के नीचे उतरी हुई है।]

**महाराज** . ॐ आपो हिष्ठा मयो भुव.

ॐ तान उर्जे दधातन ॐ महेरणाय चक्षसे

ॐ यो वःशिवतमो रस ॐ तस्य भाजयते ह न.

ॐ उशतीरिव मातरः ॐ तस्माअ्ररग मामव.

ॐ यस्य क्षयाय जिन्वथ ॐ आपो जन यथा च न

(**मार्जन करने के बाद ऊँचे स्वर मे**) हाँ, राजन् ! अब आप आ सकते है ।

[**दाहिनी ओर की दीवाल के दरवाजे को खोल राजा का प्रवेश। राजा की अवस्था महाराज के बराबर ही है । वह गेहुँएँ रंग का, ऊँचा-पूरा और मोटा व्यक्ति है । सिर पर लम्बे बाल है, जिस पर किरीट लगा है । मस्तक पर केशर का त्रिपुण्ड है और मुख पर बड़ी-बड़ी मूँछे तथा चढ़ी हुई दाढ़ी। शरीर पर घेरदार जामा और उत्तरीय धारण है । कानों मे कुण्डल, गले मे हार, भुजाओं पर भुजबन्द, हाथों में कड़े और उँगलियो में अँगूठियाँ ।**]

**महाराज : (पास आते हुए, राजा से)** चौतरे के नीचे, हाँ, चौतरे के नीचे ही रहिएगा, राजन्, आप राजा है, इसमे सन्देह नही, पर क्षत्रिय है, ब्राह्मण नही। चारो वर्णो मे ब्राह्मण का वर्ण सर्वश्रेष्ठ है, क्योकि वह भगवान् ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुआ है। परन्तु जन्म के पश्चात् शारीरिक और मानसिक श्रेष्ठता रखने के निमित्त भोजन की ओर सबसे अधिक लक्ष रखना चाहिए। पय-पान की अवस्था तक भोजन मे विशेष विचार की आवश्यकता नही होती।

अन्नप्राशन के पश्चात् ही इस विचार का आरभ हो जाता है और उपनयन होते ही तो पूर्ण विवेक अनिवार्य है। जैसा भोजन वैसा शरीर, मन और बुद्धि। उपनयन के पश्चात् आज पर्यन्त अपने भोजन के लिए मैंने स्वय भोजन की सामग्री निश्चित की है, उसे स्वय सिद्ध किया है, और किसी को छूने तक नही दिया। मैंने स्वय अपने चौके की भूमि का मार्जन किया है, अग्नि जलायी है; भोजन बनाया है और खाया है। राजन्, स्पर्श-दोष से बडा कोई दोष नही।

**राजा** : ऐसा, महाराज ?

**महाराज** : हाँ, राजन्। जो जैसा होता है, उसके स्पर्श के वैसे ही गुण-दोष होते है। आप क्षत्रिय है, राजा है, नरों मे श्रेष्ठ, पर आप रजोगुण-प्रधान है, वैश्य भी रजोगुण-प्रधान और शूद्र तो तमोगुण-प्रधान। ब्राह्मण नरश्रेष्ठ नही, भू-सुर है, इसीलिए आप राजा कहे जाते है, पर ब्राह्मण महा-राज। ब्राह्मण सतोगुण-प्रधान है। उसके स्वाभाविक कर्मों के सबध मे भगवान् स्वय संसार की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक गीता मे कहते हैं—

'शमो दमस्तपः शौच क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानविज्ञानमास्तिक्य ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥'

ब्राह्मण का भोजन यदि रजोगुण-प्रधान व्यक्ति छू लेगा तो वह भोजन सात्विक कैसे रह जायगा ? ऐसे भोजन को

कर ब्राह्मण अपने स्वाभाविक कर्म कैसे करेगा ?

**राजा** : हाँ, जो भोजन सात्विक नही रह जायगा वह सतोगुण के स्थान पर रजोगुण और तमोगुण की उत्पत्ति करेगा, महाराज, क्यो ?

**महाराज** : (**प्रसन्नता से**) कैसी ठीक बात कही है आपने, पर कठिनाई तो यह है, राजन्, कि ब्राह्मण भी इसे नही समझते। मै कहता हूँ यदि वे सच्चे भू-सुर होना चाहते है, सच्चे महाराज, तो उन्हे, जन्म के पश्चात् जिस भोजन से शरीर और मन बनता है, उसकी शुद्धता, परम शुद्धता और इसके लिए स्पर्शा-स्पर्श का पूर्ण ध्यान रखना आवश्यक ही नही, अनिवार्य है।

**राजा** : (**विचारते हुए**) इस सम्बन्ध मे यदि राज-नियम बना दिये जायें तो ?

**महाराज** : (**विचारते हुए**) नही, नही, इसकी आवश्यकता न पड़ेगी। ब्राह्मणो की कुछ निर्बलताओ ने उनका ध्यान इस ओर आकर्षित किया है। अनेक मानने लगे है कि यदि वे नरो से देवता नही हो पाये है, सच्चे भू-सुर नही बन सके है, तो इसका प्रधान कारण भोजन मे अविवेक है; स्पर्शा-स्पर्श मे ध्यान की कमी है। इसे और अच्छी प्रकार समझ लेने तथा इस ज्ञान को कार्यरूप मे परिणत करते ही वे महाराज सच्चे महाराज बन जायँगे। (**कुछ रुककर**) अच्छा, अब आप दासो को आज्ञा दे कि पहले अग्नि लावे, उसके

पश्चात् जल, और उसके पश्चात् भोज्य-सामग्री, परन्तु वे और वह सामग्री इस चौतरे के नीचे ही रहे, चौतरे की धरती का कोई स्पर्श न करे।

**राजा : (बांयीं दीवार के दरवाज़े की ओर जाते हुए)** जैसी आज्ञा।

**यवनिका**

# उत्तरार्द्ध

## मुख्य पात्र

| | | |
|---|---|---|
| महराज | : | एक ब्राह्मण |
| राजा | : | एक क्षत्रिय |
| समय | • | अभी से सैकडो वर्ष पूर्व |

स्थान : एक हिन्दू-रसोईघर

समय : प्रातःकाल

[दृश्य वैसा ही है जैसा कि पूर्वार्द्ध में था। महराज चबूतरे को गोबर से लीप रहा है। महराज स्वरूप में पूर्वार्द्ध के महराज से ठीक उल्टा है। यद्यपि अवस्था इसकी भी चालीस वर्ष के लगभग ही है तथापि यह अत्यन्त काले रंग का, ठिगना और बहुत ही दुबला-पतला मनुष्य है। सिर पर छोटी-सी चोटी है और उसके चारों ओर के बाल तथा मूँछ-दाढी अर्थात् सारी हजामत बढ़ गयी है। ऊपर का शरीर नंगा है। बाँये कन्धे पर एक पतला-सा जनेऊ है, जो अत्यन्त मैला हो गया है। नीचे के शरीर पर एक बहुत ही मैला गमछा है। गमछे के ऊपर कमर में नाभि तक दाद के चिट्टे दीख पड़ते हैं। वह अपने आप कुछ कहता जाता है और कहते-कहते कभी नाक सुड़कता और कभी दाद खुजाता है।]

महराज : बाम्हन सबसे ऊँची जात छै न। (जोर से नाक सुड़क-कर) बिरम्हा के मूँडा सूँ हुई छै। (लीपना बन्द कर जोर से दाद खुजाते हुए) भू-सुर! महराज! (फिर लीपते हुए) जनम रे पीछे ब्राम्हन रे बाम्हन रहबाने, बाम्हन का

करम करबाने, सुद्ध भोजन चाईजे, सुद्ध सूँ सुद्ध भोजन। (**नाक, पहने हुए गमछे मे छिनकते हुए**) निरामिष सामगरी और बिना कोई जात री छुई छाई। (**कुछ रुककर**) हहह! हहह! हहह! हहह! हहह!

[**दाहिनी ओर की दीवाल का दरवाजा खोलकर सेठानी का प्रवेश। सेठानी की उम्र महराज के बराबर ही है। उसका रंग उतना ही गोरा है जितना महराज का काला। जितना महराज ठिगना है उतनी ही वह ऊँची, और जितना महराज दुबला है उतनी ही वह मोटी। पूर्वार्द्ध का राजा जैसा घेरदार जामा पहने था वैसा ही यह लहँगा पहने है। लहँगे के ऊपर सिर से ओढ़न ओढ़े है। राजा के सदृश सेठानी भी आभूषणों से सुसज्जित है। सिर पर बोर है, कानों मे कर्णफूल, गले मे तिमनियाँ, भुजाओं पर बाजू, हाथों मे गोखरू तथा मोटी-मोटी लाख की चूड़ियाँ और उँगलियो मे अँगूठियाँ तथा अँगूठों मे आरसियाँ। पैरों मे चाँदी की मोटी कड़ियाँ, नेवरियाँ इत्यादि है।**]

**सेठानी :** (**चोंतरे के निकट आते-आते जोर से**) देखो, महराज! आज सूँ परसोतम मास लागे छै। आज सूँ बिरम-जल री रसोई होसी, बिरम-जल री।

**महराज** (**जोर से नाक सुड़ककर**) पानी भी महराज ही ने भरनो पडसी?

**सेठानी** · हाँ, पानी भी थाने ही भरनो छै, महराज, और परसोतम मास सारा घर का, मुनीम-गुमास्ता, नौकर, चाकर, सब का सब, कर रह्या छै। सब बिरम-जल री रसोई जीमसी,

बिरम-जल री।

**महराज .** **(दाद खुजाते हुए)** महराज ने, भू-सुर ने छत्री, वैस ही नही सूदररी भी सेवा करनी छै ?

**सेठानी :** **(कड़ककर)** नही करनी हो तो अपनो हिसाब करलो, महराज, अठे रहस्यो तो काम तो करनोई पड़सी। मुफत का पीसा थोडे ई आया छै। और थे नई रहस्यो तो थारे सरीसा छप्पन सै साठ आ जासी। न जाने कितरा भटियारा जूत्याँ चिटकाता आया, कितरा चला गया।

**महराज :** क्यूँ नही, सेठानी जी ? बाम्हन, कहाँ रा भू-सुर, कहाँरा महराज ? आज तो बाम्हन-जात भटियारॉरी जात रह गई छै, बाम्हन और कॉई काम करबा लायक रह्या छै ? न जाने म्हाँ का कौन-सा पुरखा ने या छुआछूत ....या भूतनी..... या डाकिनी ने .....**(एक हाथ से जोर से दाद खुजाता है और दूसरे से गमछे से नाक छिनकता है।)**

**सेठानी :** **(घृणा से)** थे कित्ता गन्दा रहो छो, महराज, कित्ता गन्दा !

**महराज :** गन्दा ! गन्दा, सेठानी जी ? हहह ! हहह ! हहह ! हहह ! हहह ! महराज ! महराज !! महराज !!!

**[महराज एक विडंबनायुक्त दृष्टि से चूल्हे की ओर देखता है। सेठानी धीरे-धीरे बॉयीं तरफ़ की दीवाल के दरवाजे की ओर बढ़ती है।]**

**यवनिका**

**समाप्त**

बन्द नोट

## पात्र, स्थान

### मुख्य पात्र

रामनारायण : एक साहूकार
वैदेहीशरण एक कॉंग्रेसवादी
गंगादेवी : वैदेहीशरण की पत्नी
प्रद्युम्नकुमार वैदेहीशरण का पुत्र
मथुरा : वैदेहीशरण का नौकर

### स्थान

एक नगर और एक छोटा-सा स्टेशन

## उपक्रम

स्थान : एक नगर मे रामनारायण के मकान का बैठकखाना

समय : सन्ध्या

**[बैठकखाना आधुनिक ढंग का साधारण सजा हुआ कमरा है। सोफा पर रामनारायण और वैदेहीशरण बैठे हुए है। रामनारायण की अवस्था लगभग ४० वर्ष की है। वह गेहुँए रँग का साधारण कद और शरीर का व्यक्ति है, कुरता और धोती धारण किये हुए है, सिर नंगा है। वैदेहीशरण की अवस्था लगभग २५ वर्ष की है। वह गौर वर्ण का ऊँचा और दुबला आदमी है, खादी का कुरता और धोती पहने है, सिर पर गांधी टोपी है।]**

**वैदेहीशरण** : जी हाँ, मै कहता हूँ, और जितना भी मुझ मे नैतिक बल है उस सारे बल के साथ कहता हूँ, कि आप साहूकारो ने, आप सम्पन्न व्यक्तियो ने, किसी को बन्द नोट देकर और किसी को खुले नोट देकर रिश्वत और चोर-बाजारी का ऐसा दौर-दौरा कर रखा है, ऐसा‥ ‥क्या कहे ․ ․

**रामनारायण** : बन्द नोटो और खुले नोटो की रिश्वते दी जा रही है, चोर-बाजारी का दौर-दौरा है, इसे मै नामजूर नही करता, लेकिन इसमे हम साहूकार और सम्पन्न कहे

जाने वाले व्यक्ति ही दोषी है, इसे मै नही मानता ।

**वैदेहीशरण** तो फिर और कौन दोषी है ?

**रामनारायण :** यह समय ।

**वैदेहीशरण** और इस तरह के समय का निर्माण किसने किया है ?

**रामनारायण** एक खास परिस्थिति ने ।

**वैदेहीशरण** (**घृणा से मुस्कराकर**) परिस्थिति ? अपने पापो को छिपाने के लिए परिस्थिति की आड़ यह पापियो का सदा का धन्धा रहा है ।

**रामनारायण :** (**शान्ति से**) साहूकारो और सम्पन्न व्यक्तियो मे पापी नही है, यह मै नही कहता, परन्तु क्या सारी रिश्वते साहूकारो और सम्पन्न व्यक्तियो के कारण ही चल रही है ?

**वैदेहीशरण** जिनके पास है ही नही वे रिश्वत कहाँ से देगे और कैसे व्यवहार करेगे चोर-बाजारो मे ?

**रामनारायण** यह मै मानता हूँ कि जिनके पास कुछ भी नही वे रिश्वते देने और चोर-बाजारो मे व्यवहार करने मे असमर्थ है, पर साहूकार और सम्पन्न व्यक्ति ही रिश्वते देते और चोर-बाजारो को चलाते है यह मै नही मानता । कई बार निर्धनो तक को रिश्वते देनी पडती है और निर्धनो को नही, बड़े-बडे सिद्धान्तवादियो तक को ।

**वैदेहीशरण :** (**उत्तेजना मे**) अच्छा तो अब आप सिद्धान्तवादियो तक पहुँच गये ?

**रामनारायण** (**शान्ति से**) जी हॉ, मै कहता हूॅ, कि परिस्थिति के कारण अनेक बार बडे-रडे सिद्धान्तवादियो तक को रिश्वते देनी पडती है और चोर-बाजारो मे व्यवहार करना पडता है।

**वैदेहीशरण :** परिस्थिति ' परिस्थिति, अजी जनाव, सच्चे सिद्धान्तवादियो का कोई कोई भी परिस्थिति पतन नही करा सकती, हरगिज हरगिज नही ' ।

**यवनिका**

## मुख्य दृश्य

स्थान : एक छोटा-सा रेलवे स्टेशन

समय : अर्द्धरात्रि

[एक ओर कुछ दूरी पर स्टेशन के प्लेटफार्म का कुछ हिस्सा और उसके पीछे स्टेशन की छोटी-सी इमारत का कुछ भाग धुँधला-धुँधला दिखायी देता है। दूसरी तरफ निकट ही एक वृक्ष के नीचे वैदेहीशरण, गगादेवी और मथुरा बैठे हुए है। गंगादेवी की गोद मे उसका पुत्र प्रद्युम्नकुमार है। वैदेहीशरण के वस्त्र वैसे ही है जैसे उपक्रम मे थे। वह उन वस्त्रों पर एक मोटा-सा कंबल और ओढ़े है। गंगादेवी की उम्र वैदेहीशरण से कुछ ही कम है। वह गोरे रग की कुछ ठिगनी और दुहरे शरीर की स्त्री है। खादी की साड़ी और सलूका पहने है और उनके ऊपर एक कंबल ओढ़े है। हाथों मे दो-दो काँच की चूड़ियों के सिवा शरीर पर और कोई आभूषण नही है। प्रद्युम्नकुमार लगभग एक वर्ष का बालक है। एक ऊनी चादर से ढके रहने के कारण उसका शरीर दिखायी नहीं देता। बीच-बीच मे उसका रोना अवश्य सुन पड़ता है। मथुरा करीब ३५ वर्ष की अवस्था का श्याम वर्ण का

**साधारण ऊँचाई का दुबला-पतला व्यक्ति है। मिल के कपडे का कुरता और धोती पहने है और एक दुपलिया टोपी सिर पर लगाये है। कुरते के ऊपर वह भी एक फटा-सा घुस्सा ओढ़े है। वैदेहीशरण का कुछ मुख्तसिर मुसाफिरी का सामान बक्स के निकट रक्खा हुआ है। जोर की हवा चल रही है। बीच-बीच में रिमझिम पानी भी बरस जाता है। सब के चेहरे अत्यन्त उद्विग्न है।]**

**वैदेहीशरण** (**झुँझलाकर**) तो मै करूँ क्या ? थर्ड और इण्टर ही नही, सैकड और फर्स्ट तक का टिकट नही मिलता। बिना टिकट के गाडी मे किसी तरह घुस पडे और पहुँचकर मय पेनलटी के दूना किराया दे दे सो भी नही बनता, क्योकि इस बदजात स्टेशन मास्टर ने ऐसा इन्तजाम कर रखा है कि बिना टिकट लिए कोई प्लेटफार्म पर घुस ही नही सकता।

**गंगादेवी** टिकट तो मिल सकता है, यदि तुम चाहो।

**मथुरा** · हाँ, मालकिन, हमारे देखते देखते कितनो को टिकट मिल गये।

**वैदेहीशरण** · (**अत्यन्त उत्तेजित होकर**) चुप रहिए। मैं रिश्वत देकर टिकट लूँगा ? पहुँचे तो घर किसी तरह। इस स्टेशन मास्टर की रिश्वतो का सारा भडा-फोड कर इसका कचूमर निकलवाये बिना न रहूँगा।

**गंगादेवी** : पर घर पहुँचते-पहुँचते हमारा जो कचूमर निकला जा रहा है।

**वैदेहीशरण** (**और जोर से चिल्लाकर**) जो होना हो सो हो। मै रिश्वत दूँ ? हम सिद्धान्तवादी भी यदि रिश्वतो और चोर-बाजारो से दूर न रह सके

**गंगादेवी :** और इस दूर रहने के कारण चाहे चाहे …

**वैदेहीशरण** (**बीच ही में जोर से चिल्लाकर**) चाहे हम मर ही क्यो न जायँ।

[**कुछ देर कोई कुछ नहीं बोलता। पानी की एक जोर की बौछार आ जाती है।**]

**गंगादेवी** (**अत्यन्त करुण स्वर से**) हे भगवान्!

[**नेपथ्य से पिछले स्टेशन से गाड़ी छूटने के घंटे का शब्द सुन पड़ता है।**]

**गंगादेवी** (**गिड़गिड़ाते हुए**) देखो, फिर गाडी आ रही है। सुबह से बैठे-बैठे आधी रात हो गयी। हम ही भूखे है सो नहीं, बच्चे तक को दूध नही मिला। ठण्ड कँपा रही है, पानी भिगो रहा है।

[**वैदेहीशरण कोई उत्तर न देकर एक लम्बी साँस लेता है।**]

**गंगादेवी** इसी तरह बैठे रहे तो बीमार होना भी निश्चित है। प्रद्युम्न को तो निमोनिया हो जायगा, निमोनिया।

**वैदेहीशरण :** (**निराश स्वर में**) तो करूँ क्या मै ?

**गंगादेवी .** इस समय तो किसी भी तरह घर पहुँचो।

**वैदेहीशरण :** पर टिकट ?

**मथुरा** टिकट तो मै ले आता हूँ, अगर मुझे दस रुपये का एक नोट मिल जाय। जहाँ स्टेशन मास्टर को नोट दिया और

कहा कि टिकिट दे और छुट्टा पैसा न देकर रख लें बन्द नोट बन्द नोट

[**वैदेहीशरण कुछ न कहकर एक लम्बी साँस लेता है। कुछ देर निस्तब्धता।**]

**गगादेवी** नोट दूँ इसे ?

[**वैदेहीशरण फिर भी कुछ नहीं बोलता। कुछ देर निस्तब्धता। नेपथ्य से गाड़ी आने के घंटे का शब्द आता है।**]

**गंगादेवी : (अत्यन्त करुण स्वर में)** मान जाओ ' ' मैं कहती हूँ, मान जाओ ?

**वैदेहीशरण :** मै कुछ नही जानता, तुम्हारी जो इच्छा हो, करो।

[**नेपथ्य मे गाड़ी आने का शब्द सुनायी देता है। गंगादेवी जेब से जल्दी से दस रुपये का नोट निकालकर मथुरा को देती है। वह दौड़ता हुआ जाता है। वैदेहीशरण और गंगादेवी उठते है।**]

**वैदेहीशरण** (दाँत पीसते हुए) मै इस स्टेशन मास्टर का कचूमर निकलवाये बिना न मानूँगा।

**गंगादेवी** जरूर जरूर '' घर तो पहुँचो।

**यवनिका**

## उपसंहार

स्थान : एक नगर मे रामनारायण के मकान का बैठकखाना

समय : प्रात काल

[**रामनारायण और वैदेहीशरण बैठे हुए बाते कर रहे है।**]

**वैदेहीशरण** : जी हाँ, मैंने उस बन्द नोट की शिकायत कर दी है। अब या तो स्टेशन मास्टर नौकरी से जायगा या जेल मे बन्द होगा।

**रामनारायण** · सो हो जायगा, पर आपने यह तो देख लिया न कि ऐसी परिस्थितियाँ आती है जब केवल साहूकारो और सम्पन्न व्यक्तियो को ही नही, पर साधारण से साधारण लोगो और बड़े-से-बडे सिद्धान्तवादियो तक को बन्द के बन्द नोट रिश्वत मे सरका देने पडते है।

**वैदेहीशरण** पर यदि परिस्थिति से मजबूर होकर ये बन्द नोट सरकाने भी पड़े तो बाद मे रिपोर्ट कर इन लुच्चो को बन्द क्यो नही कराया जाय।

**रामनारायण** इसलिए कि रिपोर्ट कर इन्हे बन्द कराने के पहले रिपोर्ट लिखने और उनके सबंध मे न जाने कितने काम बन्द हो जाते है।

**वैदेहीशरण** (**कुछ उत्तेजित होकर**) रिपोर्ट न करने का यह भी कोई कारण है ?

**रामनारायण** एक तो आप रिश्वत देने की परिस्थिति कारण नही मानते थे। अब आप इन रिपोर्टों के कारण जिस तरह अन्य काम बन्द हो जाते है यह नही मानते। पर इस बन्द नोट की रिपोर्ट का अनुभव कर लीजिए। इसके बाद रिपोर्ट करना बन्द कर दीजिएगा।

**वैदेहीशरण** (**अत्यन्त उत्तेजित होकर खड़ा हो जाता है और जाने का उपक्रम करता है**) कभी नही, जनाब, कभी नही। इस तरह के बन्द नोटो की रिपोर्टों के करने मे अगर मेरा सारा काम भी बन्द हो जाय, मै खुद ही जेल मे बन्द हो जाऊँ तो भी मै पीछे न रहूँगा ! हरगिज नही ·· हरगिज नही ! इन चोरबाजारो, इन रिश्वतो को बन्द करने का यही ·· यही एक मात्र उपाय है।

**रामनारायण** इस बन्द नोट की रिपोर्ट करके स्टेशन मास्टर को नौकरी से अलग करने अथवा जेल मे बन्द करने मे आपका कितना काम वन्द होता है, आप इसका अनुभव करके ही मानेगे।

**वैदेहीशरण** अवश्य ! (**भीतर से झुँझलाते और ऊपर से हँसते हुए प्रस्थान।**)

**यवनिका**

**समाप्त**